भारतीय राष्ट्रीय महासभा के
५० वां अधिवेशन
फैजपूर, डिसेंबर १९३६ का
अहवाल

प्रकाशक :
प्रधान मंत्री
अखिल भारतीय महासभा समिति
अलाहाबाद

Printed at Lokashakti Press, 291 Shanwar, Poona 2. by S. R. Rajaguru
AND
Published for All India Congress Committee, Allahabad,
by G. A. Deshpande, Secretary, Reception Committee
of the 50th Session of Indian National Congress,
at 373 Shanwar, Poona 2.

अनुक्रमणिका

निवेदन	१
अधिवेशनका प्रथम-दिन	१०
स्वागताध्यक्षका अभिभाषण	१०
अध्यक्ष महोदयका अभिभाषण	२१
महात्माजीका निवेदन	३८
अधिवेशनका द्वितीय-दिन	४७

परिशिष्ट (Appendix)

A	स्वागतकारिणी सभा के अधिकारीवर्ग	i—ii
B	आय-व्यय पत्रक	i—vi
C	राष्ट्रपति पं. जवाहरलालजी का अध्यक्षीय अभिभाषण (अंग्रेजी)	i–xvi
D	अधिवेशन में मंजूर हुवे प्रस्ताव (अंग्रेजी)	i—xii

फोटो का कागज जुबर में हाथ से बना हुआ है ।

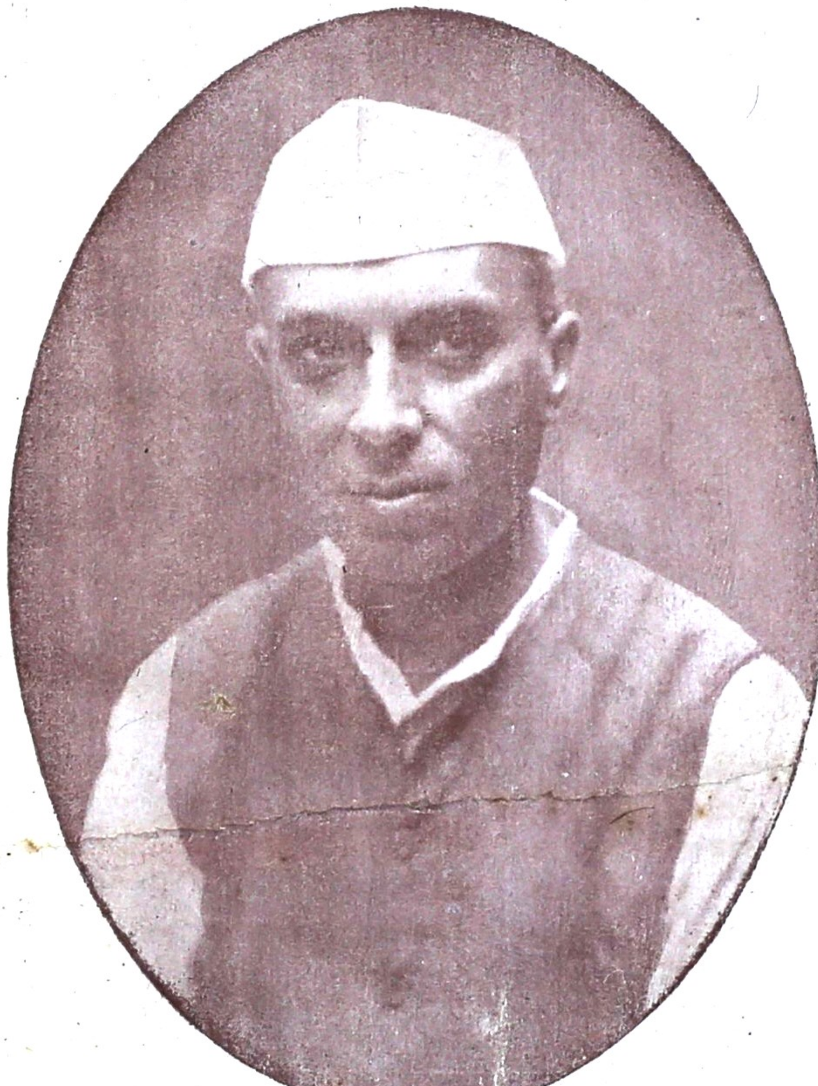

राष्ट्राध्यक्ष

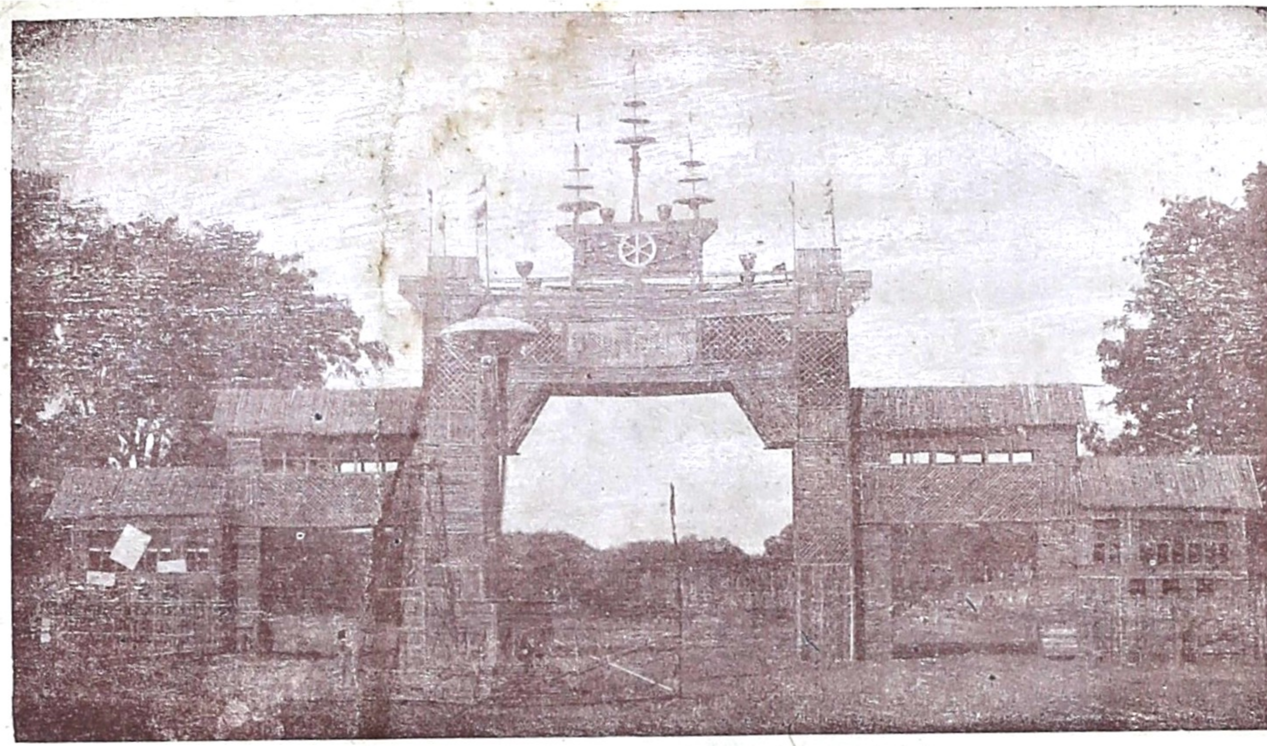

तिलक-नगरका प्रमुख " श्रीशिवाजी-महाद्वार. "

निवेदन

स्व. लोकमान्य तिलक के महाराष्ट्र में राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन हुए ४० वर्ष बीत गये थे। इससे प्रायः यह कहने में कोई हर्ज न होगा, कि महाराष्ट्र के निवासियों को दो पुश्तों की महासभा के अधिवेशन का समारोह करने तथा देखने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ। इसके लिये कारण भी कुछ ऐसे ही विशेष थे। सन १८८५ इ. की महासभा का प्रथम अधिवेशन सम्पन्न करने का अपूर्व गौरव पूने को यानी महाराष्ट्र को प्राप्त था, सही, लेकिन विधिलिखित कुछ विपरीतही था। और इस लिये १८९५ इ. का महासभा का दशम अधिवेशन ही महाराष्ट्र में उसका प्रथम अधिवेशन हुआ। राजनीतिक क्षेत्र में सब तरह से अग्रसर रहे हुए महाराष्ट्र में इसके बाद दसपांच वर्ष के अन्दर ही फिरसे महासभा का अधिवेशन किया जाना बिलकुल ही स्वाभाविक होता। लेकिन सन १९०८ में स्व. लोकमान्य तिलक को निर्वासन की सजा दी गयी और तबसे लेके उनके मण्डाले से लौट आनेतक की अवधि में महाराष्ट्र में जो दमन और उसकी प्रतिक्रिया का प्रभाव रहा, उसके कारण महाराष्ट्र में महासभा का अधिवेशन किया जाना प्रायः असम्भव हो गया। रिहाईसे लेके निधनतक की लोकमान्य तिलक की ५–६ वर्ष की अवधि महासभा की गिरी हुई गृहस्थी को संसार के पूर्ववत् शानदार करने ही में बीत गयी। इस लिये अपने घरपर उसको निमंत्रित करने के लिये उन्हें फुरसत ही नहीं मिली। सन १९२० में महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन की घोषणा की, उस समय खुद को स्व० लोकमान्य तिलक के अनुयायी कहलाने वाले कुछ नामधारी प्रमुख राजनीतिक नेताओं ने कांग्रेस विरोध की जिस नीति का अवलम्ब कर रखा था, उसके कारण तो यह प्रायः सम्भव ही नहीं था कि महाराष्ट्र की ओर से किया जानेवाला निमन्त्रण महासभा को स्वीकार होता। लेकिन धीरे धीरे इस परिस्थिति में भी परिवर्तन होने लगा। महाराष्ट्र के काँग्रेसनिष्ठ कार्यकर्ताओं की यह धारणा कि हम लोग अपनी इस काँग्रेसनिष्ठा में स्व० लोकमान्य तिलक की असली परम्परा ही का अवलम्ब कर रहे हैं, धीरे धीरे सफल होने लगी और सन १९३० तथा १९३२ के दोनों स्वातंन्य संग्रामों में अन्य प्रान्तों के अनुसार महाराष्ट्र ने भी उत्साहपूर्वक कूदकर काफी कारगुजारी कर दिखाई। सविनय अवज्ञान्दोलन स्थगित होनेपर बडी व्यवस्थापिका सभा का चुनाव हुआ उसमें भी महाराष्ट्र ने काँग्रेस की ओर से दोनों स्थान जीत लिये। इससे अन्य प्रान्तों का महाराष्ट्र की ओर देखने का दृष्टिकोन विरुद्ध हो गया और व इस बात को मानने तथा प्रगटरूप से कहने भी लगे, कि काँग्रेसनिष्ठा में अन्य प्रान्तों की अपेक्षा महाराष्ट्र भी किसी कदर कम नहीं हैं। खासकर सन १९३५ इ. में राष्ट्रीय महासभा के तत्कालीन अध्यक्ष बाबू राजेन्द्र प्रसादजी ने समूचे भारत का जो देशव्यापी दौरा किया, उसमें उन्हें महाराष्ट्र में अपूर्व सफलता हासिल हुई। शहरों की तो क्या देहातोंतक की साधारण स्त्रीपुरुष जनता ने बडी शान के साथ उनका प्रेमपूर्वक स्वागत किया और उनके मुखारविन्द से महासभा का उत्साहजनक सन्देश सुनने के लिये क्या देहाती और क्या

शहराती हजारों स्त्रीपुरुष इकठ्ठा हो गये। इससे प्रसन्न हो के बाबू राजेन्द्रप्रसादजी ने समूचे भारतवर्ष को यह यकीन दिलाया, कि महाराष्ट्र का तो अब प्रायः कायाकल्प ही हो गया है। ऐसी दशा में अपने प्रान्त में राष्ट्रीय महासभा का महाधिवेशन सम्पन्न करने की जो उत्कंठा महाराष्ट्रीय काँग्रेस कार्यकर्त्ताओं के दिलों में प्रबल हो उठी थी उसे अतृप्त रखना दिनबदिन असम्भव प्रतीत होने लगा था। गत तीन चार वर्षों से लगातार महाराष्ट्र की ओर से काँग्रेस का निमन्त्रण हो ही रहा था। इससे आखिर सन १९३५ के लखनऊ के अधिवेशन में महाराष्ट्र का निमन्त्रण प्रचण्ड बहुमत से स्वीकृत हुआ।

सन १९३४ इ० के स्वातन्त्र्य-संग्राम का परिणाम सन १९३१ की अपेक्षा कुछ अलग ही हुआ था। अब यह जरुरी हो गया था कि सविनय अवज्ञान्दोलन को स्थगित करके राष्ट्रीय संगठन के कार्य की फिरसे नयी योजना बनाकर उसे काम में लानेका आयोजन किया जाये। सन १९३० से लेके सन १९३४ तक लगातार चार वर्ष समूचे राष्ट्र ने जो महान् त्याग किया और जिन कष्टों का सामना किया था, वे यद्यपि सफल नहीं हुए, तो भी उनसे इतना लाभ तो अवश्य ही हुआ कि राष्ट्र की शक्ति का काफी अंदाजा लग गया। राष्ट्र के सम्मुख अब यह बात अनुभव से प्रामाणित हो गयी, कि स्वतन्त्रता संग्राम में सम्पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिये जिस शक्ति की जरूरत होती है, वह है बहुजन समाज की सुसंगठित शक्ति। अब राष्ट्र के सामने प्रमुख रूप से यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न पेश हुआ, कि इस प्रकार की सुसंगठित शक्ति किस तरह निर्माण की जाये। अतः अब सब को प्रतीत होने लगा, कि इस शक्ति को पैदा करने के लिये महासभा को चाहिये, कि वह सामान्य जनता के साथ रहा हुआ अपना सम्बन्ध अधिक घनिष्ट करे। महासभा के बम्बई के अधिवेशन में महात्मा गांधी ने जनता के सम्मुख काँग्रेस का जो नया विधान तथा कार्य की रूपरेखा पेश की थी, उसका असली उद्देश भी यही था, कि महासभा का अधिवेशन देहातों में सम्पन्न करना सम्भव हो। क्यों कि इस प्रकार देहातों में देहातियों के ही बीचमें महासभा का महाधिवेशन सम्पन्न करने के अतिरिक्त ऐसा और कौनसा दूसरा साधन हो सकता है, जिससे काँग्रेस के कार्यक्रम तथा उद्देश्य का प्रचार समुचित रूपसे साधारण जनता में किया जा सके? लेकिन बम्बई के अधिवेशन में संयुक्त प्रान्त के निमन्त्रण का स्वीकार किया जा चुका था और संयुक्त प्रान्त के विशाल नगर लखनऊ में इस अधिवेशन को सम्पन्न करने का आयोजन भी किया गया था। लखनऊ के इस अधिवेशन में बहुजन समाज के साथ काँग्रेस का अधिक निकट सम्बन्ध प्रस्थापित करनेसम्बन्धी विचार की अधिक पुष्टी की गयी और उसे काफी चाल भी दी गयी, जिसके फल स्वरूप उक्त अधिवेशन में "जनसम्बन्ध" (मास कॉन्टॅक्ट) प्रस्थापित करनेसम्बन्धी निम्नालिखित मर्म्म का महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव किया गया—

इसी अधिवेशन में आगामी अधिवेशन महाराष्ट्र में करनेसम्बंधी महाराष्ट्र के निमंत्रण का भी स्वीकार किया गया और अपनी परम्परागत साहसी मनोवृत्ति का पूरा परिचय देते हुए जनता के साथ का महासभा का सम्बन्ध अधिक निकट बनाने के बढिया साधन-स्वरूप इस अधिवेशन को देहात ही में सम्पन्न करके महाराष्ट्र ने काँग्रेस के इतिहास के एक नवीन युग में प्रथम पदार्पण करने का महान् गौरव हासिल किया। काँग्रेस का अधिवेशन देहात में

सम्पन्न करने की कल्पना न तो महात्मा गांधी के दिमाग़ का सहज खयाली खब्त ही था और न महाराष्ट्र के कुछ काँग्रेसवादी नेताओं का अन्ध दुराग्रह ही। काँग्रेस के द्वारा गत पचास वर्षों से चलाये गये आन्दोलन और किये गये कार्य का वह परिपाक था। अतः गत ता. २२ वी मई सन १९३६ को पूने में महाराष्ट्र प्रान्तीय काँग्रेस कमिटी की जो बैठक हुई, उसमें बहुमत सें मर्मका प्रस्ताव किया गया, कि महाराष्ट्र में होनेवाला आगामी अधिवेशन देहात ही में किया जाये। इस प्रस्ताव के अनुसार अधिवेशन करनेका सौभाग्य खानदेश को प्राप्त हुआ। देहात में अधिवेशन करने की कल्पना बिल्कुल ही नयी थी और महाराष्ट्र बिल्कुल अननुभवी! इससे कई लोगों ने यह अनुमान किया कि इस तरह का घोरतर साहस करने में महाराष्ट्रीय कांग्रेस कार्यकर्ता अपनी अनुमति न देंगे। लेकिन "होनहार बिरवान के होत ऊजरे पात" इस कव्युक्ति के अनुसार इस अभिनव कल्पना की पुष्टि करनेवाले कई लोग कमर कसके आगे बढ आये, और काफी चर्चा चलायी जानें के बाद यह तय पाया गया कि महाराष्ट्र में होनेवाला महासभा का महाधिवेशन देहात ही में हो। इस तरह का निश्चय होते ही अन्य लोगों की मनोवृत्ति में भी परिवर्तन हो गया और अब यह सोचा जाने लगा, कि किस उपाय से इस कल्पना को सफलतापूर्वक मूर्त स्वरुप दिया जाये? इसका यह अर्थ नहीं, कि संशयात्मा तथा विरोधियों का अब नामोनिशानतक मिट गया था। वे तो थे, और काफी तायदाद में थे, लेकिन उनके उस विरोध की जड में भी महाराष्ट्र के उज्वल गौरव के सम्बन्ध की जागरुकता तथा अधिवेशन को सफल बनाने की तीव्रतर लगन ही पायी जाती थी।

अधिवेशन देहात में और वह भी खानदेश के किसी देहात में करने का निश्चय तो हो गया। लेकिन इतने ही से तो स्थल निश्चय का कार्य खतम नहीं न होता। देहात ही सही लेकिन कौनसा देहात? यह सवाल तो रह ही जाता है। इस मामले में भी काफी मतभेद पैदा हुए और अन्त में खानदेश जिले के यावल तहशील के अन्तर्गत फैजपूर नामक देहात में इस अधिवेशन को सम्पन्न करने का निश्चय पक्का हुआ। इस तरह देहात में काँग्रेस का अधिवेशन करने में प्रमुख उद्देश यह था, कि काँग्रेस की नीति तथा सिद्धान्त का प्रचार सामान्य जनता में किया जाये और देहाती जनता तथा कार्यकर्ताओं की कर्तृत्वशक्ति का विनियोग अधिवेशन को सम्पन्न करने में किया जाके उनके तथा काँग्रेस के बीच में घनिष्टता तथा आत्मीयता के भाव जाग्रत किये जायें। इस दृष्टि से फैजपूर और उसके इर्दगिर्द का प्रदेश प्रमुख काँग्रेस कार्यकर्ताओं को सब तरह से अनुकूल प्रतीत हुआ। क्यों कि उक्त उद्देश को सफल बनाने के लिये आवश्यक देहाती कार्यकर्ताओं का सबसे बडा और प्रबल संघ इस प्रदेश में पहलें ही से मौजूद था। रेल्वे स्टेशन से (सावदा) फैजपूर लगभग ५-५॥ मील दूरीपर है। (आगामी अधिवेशन जिस गांवमें होने जा रहा है, वह रेल्वे स्टेशन से ११ मील दूरीपर है) काँग्रेस की नगररचना तथा प्रदर्शनी के लिये सब तरह से अनुकूल हलकी या ऊसर धरती फैजपूरके आसपास न मिल सकी, अधिवेशन के लिये काश्तकारी जमीन ही लेनी पडी और उसकी क्षतिपूर्ति के लिये किसानों तथा सरकार के पल्ले में लगभग ८०००।- रु. उडेलने पडे। फिर भी देहातों में अधिवेशन सम्पन्न करने में रहा हुआ उद्देश सफल होनेकी सम्भावना हो तो वह इसी प्रदेश में अधिकसे अधिक है, इस प्रकार की पक्की धारणा होने के कारण कार्यकर्ताओने दिल में यह ठान लिया था कि

उक्त प्रतिकूल परिस्थिति के कारण जो बाधाएं पैदा होंगी उनसे पार पाने के लिये चाहे कितना ही जीतोड परिश्रम क्यों न करना पडे, लेकिन अधिवेशन तो यहींपर सम्पन्न किया जायेगा।

इस देहाती अधिवेशन को सम्पन्न करने में स्थान तया क्षेत्रनिर्णय के कार्यसे लेके अधिवेशन के प्रारम्भ की झण्डा फहराने की विधितक कई प्रकार की बाधायें खडी हुईं। लेकिन जितनी ही बाधायें उठीं उतने ही हाथ भी उनका निवारण करने के लिये आगे बढ आये। फैजपूर का काँग्रेस अधिवेशन एक अपूर्व घटना थी और उसे सफल बनाने की महाराष्ट्र ने ठान ली थी। इसी कारण से वर्धा से लेके बेलगांव तक के अखिल महाराष्ट्र में राजनीतिक तथा विधायक कार्य के क्षेत्र में काम करनेवाले काँग्रेसप्रेमी कार्यकर्ता सैंकडों और हजारों की तायदाद में आगे आये और इन्हीं कार्यकर्ताओं की अचल निष्ठा तथा जबरदस्त कार्यकुशलता ही के कारण फैजपूर का काँग्रेस अधिवेशन सफल भी हुआ। इस में भी विशेष सन्तोष की बात तो यह थी, कि आदिसे लेके अन्ततक इनमें से किसी भी कार्यकर्ता ने छोटे बडेपन या उच्च नीचता का व्यक्तिगत अथवा कार्यगत भेदभाव कभी नहीं दिखाया। इनमें तो प्रायः एक किस्म का भ्रातृभाव ही हुआ दिखाई देता था। इस लिये यद्यपि इन लोगों मे कई बार मतभेद पैदा हुए और कभी कभी तीव्र विरोध भी दिखाई दिया, तो भी अन्तमें उक्त भ्रातृभाव ने इन सारी बाधाओं को मात कर दिया और अन्ततक सारा बेडा सुचारु रुपसे पार हो गया।

देहात में होनेवाला यह अधिवेशन यदि सफल हुआ तो उसका असर साधारण जनता पर होगा और उससे अपने हितसम्बन्धो को ठेस लगेगी, इस प्रकार का भय इस क्षेत्र में रहनेवाले जिन लोगों को मालूम होता था, उन्होंने जितना बन सका, जीतोड परिश्रम किया, कि कांग्रेस का अधिवेशन फैजपूर में न किया जा सके। इन लोगों कि यह धारणा थी, कि यदि इस प्रदेश की किसानजनता कांग्रेसवादी बन गयी, तो सरकारी क्षेत्र में रहा हुआ अपना सारा प्रभाव जाता रहेगा, इतना ही नही, वरन् साम्प्रदायिकता के नामपर साधारण किसान जनता के प्रतिनिधि के तौर पर जो कुछ भी अल्पाधिक गौरव प्राप्त है वह भी नष्ट हो जायगा। अतः इसके उपाय के रूप में इन लोगों ने यही निश्चय कर लियासा दिखाई दिया कि हर किसी भी तरहसे क्यों न हो, फैजपूर में यह अधिवेशन होने ही न दिया जाये। अधिवेशन के लिये स्वागत समिति ने जो जमीन पसंद की थी, उसके सम्बन्ध में हरप्रकार के भलेबुरे उपायों को काम में लाकर मालिकों पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे यह दबाव डालने की काफी कोशिश की गई, कि वे इस कार्य के लिये काँग्रेसवालों को शिकमी लगानपर भी अपनी जमीनें सौंप न दें। इस कार्य में स्थानीय सरकारी अफसरों ने भी उनकी काफी सहाय्यता की। लेकिन अपने वचनोंपर दृढ रहनेवाले काश्तकारों ने काँग्रेस का साथ नहीं छोडा और बहुत कष्ट सहनेपर भी उनमें से बहुतेरों ने एक बार काँग्रेस को सौंपी हुई अपनी जमीनें लौटा लेनेसे साफ इन्कार किया। शहरसे बहुत दूरीपर बसे हुए एकांतिक और दुर्गम स्थानपर काँग्रेस जैसा प्रचण्ड मेला लगने जा रहा था और उसमें हजारों और लाखों तायदाद में भीड एकत्रित होने की भी पूरी सम्भावना थी। इससें आरोग्यरक्षा विभाग की भी जटिल समस्या उठ खडी हुई। इस मामले में भी आरोग्यरक्षा विभाग के सरकारी अफसरोंने पक्का निश्चय कर लिया था, कि यथा सम्भव सब प्रकारकी सावधानी रखने के लिये समिति को

बाध्य किया जाये। इस प्रबन्ध में पूरी तरहसे यह अनुभव किया गया की आरोग्यरक्षा के सम्बन्ध में सरकारी शासनविभाग की योजनायें प्रायः इतनी खर्चीली होती हैं, जो जनता की सहन-शक्ति के परे हों। सबसे अधिक महत्त्व की बातें थीं, पानी तथा पाखाने का इन्तजाम करना। इन मामलों में स्वागत समितीनें एक ऐसी योजना बनाई थी, जो यथा सम्भव कम खर्चीली किन्तु देहाती लोगों के सामने एक अच्छा आदर्श रखनेवाली थी। इस कार्य की देखभाल करने के लिये सेवापरायण विशेषज्ञ कार्यकर्ताओं को नियुक्त करने का भी स्वागत समितीनें निश्चय कर लिया था। लेकिन शुरुसे ही काँग्रेस कार्यकर्ता तथा उनकी योजना को पर्याप्त तथा विश्वास योग्य मान लेना सरकारी अफसरों की शान के खिलाफ था। आखिर सरकारी अफसर, स्वागत समिति के प्रमुख तथा सावदा-फैजपूर के म्युनिसिपालिटी के अधिकारियों की दो संयुक्त बैठकें पुने तथा बम्बई में की गयीं। इन बैठकों में प्रारम्भ ही से बम्बई सरकार के स्थानिक स्वराज्य विभाग के मन्त्री सर अली मुहुम्मदखां दहलवी का व्यवहार स्वागत समिति के प्रति सहानुभूतिपूर्ण रहा जिससे अन्त में स्वागत समिति ने जिन कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की थी, तथा जिस कार्यपद्धति का अवलम्ब करने की ठान ली थी, उसीके आधारपर सब के लिये सन्तोषजनक योजना बनायी गयी और अधिकृत रूपसे अधिवेशन के लिये मार्ग खुल गया। इस तरह यहां पर "दृढनिश्चय से आधे काम सफल हो जाते हैं" वाली कहावत चरितार्थ हो गयी। फैजपूर में काँग्रेस का अधिवेशन करने के सम्बन्ध में कार्यकर्ताओं का निश्चय बिल्कुल अटल था, इसी एक बातसे कई उलझनें आपसे आप सुलझ गयीं, और पहले जिन लोगों ने विरोध की आवाजें बुलन्द की थी, उनका भी सहयोग धीरे धीरे प्राप्त होने लगा।

कांग्रेस का अधिवेशन करना एक जबरदस्त खर्चीला काम था और उसपर भी य अधिवेशन देहात में होने जा रहा था। ऐसी दशामें कुछ कांग्रेस कार्यकर्ताओं के दिल में यह व्यर्थही का भय सा समा गया, कि कार्यकर्ताओं में किसी को ऐसे कार्य का अनुभव नहीं है इससे इस देहाती अधिवेशन में रुपयो की बेहद बरबाद होगी और महाराष्ट्र में कुछ इनेगिने सम्पन्न व्यक्तियोंके होते हुए भी समूचा महाराष्ट्र सम्पन्न न होने के कारण इस व्यर्थ की हानि का असह्य बोझ निर्धन महाराष्ट्र के सिरपर पडके उसकी तो कमर ही टूट जायेगी जिससे उसके आगामी कार्यमें नाहककी बाधायें उठ खडी होंगी। अलबत्ता हमेशा की तरह इन लोगों में ऐसेही लोगों की अधिकता थी जिन्हों ने देहातों में किये जानेवाले कांग्रेस अधिवेशन तथा उसके तौरतरीके के सम्बन्ध में विशेष विचार ही नहीं किया था। साथहि साथ जो लोग कांग्रेस का अधिवेशन देहात में करनेके पक्ष में थे तथा जिन्हों ने इस मामले में काफी विचार भी किया था, उनके पास भी ऐसी कोई युक्ति नहीं थी, कि जिसके आधारपर वे इन सन्देहकारी लोगों का समाधान कर सकें। ऐसी दशा में शुरुसे ही सारे कार्यकर्ता अधिवेशन के लिये आवश्यक धनकी चिन्ता में डूबते उतराते रहे थे। लेकिन इस मामले में भी " हिम्मते मर्दा, मदद दे खुदा " वाली कहावत चरितार्थ होके आकस्मिक रूपसे सारी चिन्ताएं दूर हो गयीं। स्वागत समिति के पदाधिकारीयों का चुनाव करने के लिये उसकी पहली बैठक फैजपूरमें की गयी। इस बैठक में देहात में होनेवाले अधिवेशन के कारण अधिक व्यय होनेकी सम्भावना के सम्बन्ध में सदहेतूपूर्वक हरतरह की दलीलें पेश होनेके कारण जब भय तथा चिन्ता प्रकट

की जाने लगी, तब तो सभा में मानों चिन्ताके बादल ही छा गये । ऐसी निराशाजनक परिस्थिति में यावल निवासी दानवीर सज्जन श्रीयुत माधवरावजी देशपांडे एकाएक उठ खडे हुए और उन्होंने घोषित कर दिया, कि काँग्रेस अधिवेशन के खर्च के लिये २० हजार रुपया वे प्रदान करेंगे। देहात में होनेवाला कांग्रेस अधिवेशन गरीबों की भलाई कर उन्हें लाभ पहुंचायेंगा और जिस खानदेश में अपने बापदादाओं नें लाखों की संपत्ति प्राप्त की है उसी प्रदेश में जब कि कांग्रेस का अधिवेशन होने जा रहा है, तब उसे सफल बनाने के लिये जहांतक बन सके सहाय्यता करना अपना धर्म है, इसी तरह की धार्मिक तथा सात्विक भावना से प्रेरित होके श्रीमान माधवरावजी ने उक्त घोषणा की थी, इसबात का काफी प्रमाण उनकी इस सम्बन्ध की आगामी कृतियों से पाया जा सकता है। अैसे कठिन अवसरपर जिस तरह २० हजार का दान मिल सका। और कांग्रेस के खर्च को चलाने के लिये उन्हों ने यह रकम पेशगी ही दे डाली। श्रीमान माधवरावजी की इस घोषणा के कारण सभा में कुछ समय के लिये तो सात्विक रोमहर्षण वातावरण पैदा हो गया। सब कार्यकर्ताओं की छातीपरसे पहाड का सा जबरदस्त बोझ हट गया और उनका उत्साह शतगुणित हुआ। अमलनेर निवासी दान वीर श्रीमान प्रतापशेठ ने भी सहर्ष स्वीकार किया, कि अधिवेशन के लिये आवश्यक पानी का प्रबन्ध करने के लिये जो कुछ भी व्यय होगा उसका भार वे खुद उठावेंगे। उनकी इस घोषणा से स्वागत समिति के कार्यकर्ताओं को अपने कार्य संचालन में बहुत ही उत्तेजना मिली। देहात में होनेवाला कांग्रेस अधिवेशन एक अपूर्व और अनूठा प्रयोग है, इस भावना से प्रेरित होके केवल खानदेश ही के नहीं वरं समूचे महाराष्ट्र एवं बम्बई निवासी दानवीर सज्जनोंने भी स्वागत समिति को मुक्त हस्त से सहायता दी। लगभग इसी समय समूचे प्रान्त को व्यवस्था-पिका के चुनावसम्बन्धीं व्यय का बोझ भी उठाना था ताहम भी स्वागत समिति के खजाने में ४२२२१ रु. एकत्रित हो गये। यह बात दर असल महाराष्ट्र के मान तथा गौरव को बढाने-वाली है।

अधिवेशन के लिये स्थान प्राप्त हुआ, धन एकत्र होने लगा और अन्य कठिनाइयां भी धीरे धीरे हट चलीं। तब सवाल पेश हुआ, कांग्रेसनगर तथा प्रदर्शनी की रचना और उसके लिये आवश्यक साधनसामुग्री तथा कुशल कारीगरों का। महाराष्ट्र में लगभग ४० वर्ष बाद कांग्रेस का आगमन हो रहा था। ऐसी दशा में उसके लिये बसाये जानेवाले नगर को स्व. लोकमान्य तिलक के अतिरिक्त और किसका नाम दिया जा सकता? जब कि कांग्रेस देहात में हो रही थी तब कोई आश्चर्य नही, कि उसकी रचना आदिका कार्य करने के लिये ऐसेही लोग दौड पडे हों, जिन्हें देहाती जनता के सम्बन्ध में प्रेम हो। यह कहने में कोई आपत्ति नहीं, कि यदि महाराष्ट्र चरखा संघ के एक प्रमुख कार्यकर्ता श्री. रामदासभाई गुलाटी तथा शान्तिनिकेतन के सुविख्यात कलाकार श्री. नन्दलाल बोस का सहयोग फैजपूर कांग्रेस की स्वागत समिति को प्राप्त न होता, तो तिलकनगर की इतनी सुन्दरतापूर्ण रचना करना सर्वथा असम्भव हो जाता। जिस निरलसतापूर्वक श्री. रामदासभाई गुलाटी ने अपना कार्य कर दिखलाया वह अनुपमेय है। और श्री. नन्दलाल बोस के बारे में तो हम क्या लिखें? जिन जिन लोगों ने तिलकनगर, प्रदर्शनी तथा स्थान स्थान पर बनाये गये महाद्वार फैजपूर में देखें, उन सब नें एक स्वर से श्री नन्दलाल बोस की कलाकारी की प्रशंसा ही की है। श्री. नन्दलाल बोसने

जङ्गल में मंङ्गल और सादगी से सौन्दर्य निर्माण कर दिखलाया। जङ्गलों में प्राप्त होनेवाली वल्लियां और बांस यही दो चीजें श्री. नन्दलाल बोस की साधन सम्पत्ति थी। किंतु इन्हीं मामूली जङ्गली चीजों में उनकी कलामयी दृष्टि को अनुपम सौन्दर्य की झलक दिखाई दी और रातदिन अथक परिश्रम करके उन्हों ने अव्यक्त भावना को व्यक्त स्वरूप प्रदान किया। फैजपूर कांग्रेस के लिये श्री नन्दलाल बोस महात्माजी का एक अपूर्व पुरस्कार था। बम्बई निवासी सुविख्यात राष्ट्रीय मनोवृत्तिवाले स्थापत्यशास्त्री श्री. म्हात्रेजीने भी तिलकनगर के प्लैन बनाने तथा समय समयपर उचित सलाह देने में अमूल्य सहायता दी। इसी प्रकार पूना म्युनिसिपैलिटी के चीफ ऑफिसर श्री. शंकररावजी भागवत ने समय समयपर जो सहायता की उसका भी उल्लेख करना जरूरी है। देहात में किये जानेवाले कांग्रेस अधिवेशन का उद्देश था ग्रामीण जनता को शिक्षा देना। इस लिये शुरु से ही यह दृष्टि रख गयी थी, कि कांग्रेस की नगररचना, उसकी सजावट, सुन्दरता, पानी का प्रबन्ध, मलविसर्जन का इन्तजाम आदि सारी बातें देहातियों के ग्रामीण जीवन के लिये मार्गदर्शक हों। देहाती कांग्रेस देहात में क्या है इसे दिखाने के लिये नहीं, वरं वहां क्या होना चाहिये यह दिखाने के लिये की जा रही थी। साथही साथ इस में इस बात का भी पूरा आग्रह रखा गया था, कि नगररचना तथा तदनुषंगिक अन्य कार्यों के लिये आवश्यक सब सामान देहातों ही में बने हुए हों। इस आग्रह के दो उद्देश थे। एक तो यह कि इन सामानों के लिये खर्च होने-वाला सारा धन जहांतक बन सके देहातों में रहनेवाली गरीब प्रजा ही को प्राप्त हो। लेकिन इससे भी अधिक महत्त्व का दूसरा उद्देश यह था, कि इन सामानों को तैयार करा लेनेके निमित्त से कांग्रेस के कार्यकर्ता तथा साधारण जनता के बीच घनिष्ठता का सम्बन्ध प्रस्थापित हो जाये और आसपास बसे हुए देहातों के हरएक झोपडे में रातदिन कांग्रेस की ही चर्चा चलाई जाये। अतः रचना के सम्बन्ध में सौंदर्य की दृष्टि होते हुए भी सादगी का आग्रह पाया गया; जिसके परिणाम में अन्त में यही बात प्रमाणित हुई कि सादगी और सुन्दरता एकही वस्तु के दो पहलू हैं। इसी उद्देश को सामने रखते हुए जहांतक हो सका कांग्रेस अधिवेशन में ग्रामोद्योग की ही सारी वस्तुओं को काम में लाने की कोशिश की गयी थी। यह कहने में भी कोई आपत्ति नहीं, की फैजपूर कांग्रेस ही ऐसी पहली कांग्रेस थी, जिसमें हाथसे कूटे हुए चावल, देहाती कोल्हूसे निकाला हुआ तेल, और हाथ पिसाई का आटा आदि ग्रामो-द्योग की वस्तुएं इस्तेमाल की गयी थी। अधिवेशन के खर्च में भी काफी मितव्ययिता की दृष्टि रखी गयी थी। कांग्रेस अधिवेशनों के आयव्यय के लेखों की तुलना करनेपर यह बात स्पष्ट दिखाई देगी, की अन्य अधिवेशनों कि अपेक्षा फैजपूर का अधिवेशन बहुत मितव्ययितापूर्वक सम्पन्न हुआ। प्रायः सभी विभागो के प्रमुखोंने अपने अपने विभाग के प्रबन्ध में यह कोशिश की थी कि तखमीने में दिखाई हुई रकम की अपेक्षा प्रत्यक्ष रूप में खर्च कम हो। इसी तरह अधिवेशन खतम होने के बाद भी बचे हुए सामानों को फरोक्त करते समय कार्यकर्ताओं ने उतनी दक्षता तथा उत्साह से काम लिया जितना कि वह शुरुसे रखते चले आये थे। यही कारण है, कि आर्थिक दृष्टिसे अधिवेशन सफल होनेपर भी अधिवेशन के लिये एकत्र हुई रकम में से चालिस हजार से अधिक रकम की बचत हुई।

फैजपूर कॉंग्रेस महाराष्ट्रीय कॉंग्रेस कार्यकर्ताओं में रही हुई तत्वनिष्ठा की एक प्रकार

से कसौटी ही थी। अधिवेशन के लिये प्राप्त स्थान तो खेती के काम में लायी जानेवाली जमीन थी। इसलिये नैसर्गिक रूपसे ही उसमें कई किस्म के दोष थे। मानवी प्रयत्नों के लिये जहांतक सम्भव था, वहांतक इन दोषों को दूर करने की कोशिश की गयी; लेकिन वर्षा की दैवी आपत्ती को दूर करना तो किसी तरह सम्भव ही नहीं था। इस आपत्ति ने अपना असर इतना जमा रखा था, की अधिवेशन की अवधि में आकाश में वादल का एक जरासा कतरा दिखाई देते ही काँग्रेस के कार्य के लिये एकत्र हुए कार्यकर्ताओं के हृदयों में निराशा तथा निरुत्साह की घनघोर छटा छा जाती थीं। इस वर्ष मेघराज ने भी कमाल कर खूब कसके काँग्रेस कार्यकर्ताओं की सत्वपरिक्षा की। इस साल इस प्रदेश में इतनी वृष्टि हुई, जो गत कई वर्षों में नहीं हुई थी। नवम्बर महीने में १० इंच वर्षा होना कभी किसी ने सुनातक न था। पर फैजपूर के सम्बन्ध में तो कई बार अनसुनी बात ही सुननी पडती थी। ऐसी दशा में पर्जन्यवृष्टि ही अपवादात्मक क्योंकर होती। जहांपर तिलकनगर की रचना तथा अधिवेशन का पण्डाल बनाया जानेवाला था, वहां तो चहूं ओर पानी ही पानी दिखाई दे रहा था। खानदेश की काली धरती घुटने बराबर किचड में खींचे बगैर किसी को एक कदम भी उठाने नहीं देती थी। सब लोगों के हृदय हिलसे गये। निश्चय डांवाडौल होने लगा। वर्षाने जहांतहां जो बरबादी कर रखी थी, उससे कार्यकर्त्ताओं के मन में उदासी और उद्विग्नता के छाले पड गये। नैराश्य का अंधकार चहूं ओर फैल गया। दैववादी दौर्बल्य की स्याही कार्यकर्त्ताओं के उत्साहपूर्ण उज्वल हृदयों पर पुत गयी। लेकिन यह सब कुछ केवल कुछही समय के लिये। केवल एकही रात। नवम्बर की २० वी तारीख के सूर्योदय ने सारे तिमिरपटल को न जाने कहां का कहां भगा दिया। उस समय कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं में रही हुई निष्ठा तथा निर्धार फिरसे जाग्रत हो उठे और वे इस निश्चय से फिर कार्य में दत्तचित्त हो गये कि चाहे जो हो, महाराष्ट्र का यह कांग्रेस अधिवेशन फैजपूर में होके ही रहेगा। बोल बोलते तिलक नगर निर्माण हुआ। महाद्वार भी बन गये। महात्मा गांधी का आगमन हुआ। राष्ट्रपति पण्डित जवाहरलाल नेहरु भी पधारे। एकके बाद एक राष्ट्रीय सन्त महन्त फैजपूर में एकत्र होने लगे और पंढरपूर में भाविक भक्तों की जिस तरह भीड लगती है उसी तरह भारतवर्ष के कोनेकोने से राष्ट्रवादी लेगों की भीड फैजपूर की ओर एकत्र होने लगी। फैजपूर कांग्रेस में लेगों का खासा जमघट जमा था। उस जनतारुपी जनार्दन के दर्शन से सबको सुख और हर्ष हुआ। जनतारुपी जनार्दन-का प्रेम देहात में कांग्रेस का अधिवेशन करने की कल्पना के जन्मदाता महात्मा गांधी को भी फैजपूर में अधिवेशन के व्यासपीठ पर खींच लाया। इस अवसरपर महात्मा गांधीने भारतीय जनता को फिरसे स्वराज्य का दिव्य सन्देश कह सुनाया। अधिवेशन की हंसी उडाने के लिये जो लोग आये थे, वे उसकी प्रशंसा करते हुए लौटे। इस अधिवेशन की सफलता पर स्वयं राष्ट्राधिपतितक सन्तुष्ट हुए और उन्होंने आमतौरपर यह जाहिर कर दिया, कि अधिवेशन ने उनका मत परिवर्तन कर डाला है। देहात में काँग्रेस का अधिवेशन करने की जो कल्पना कल्पनासृष्टि में ही वास कारती थी, वह अब एक प्रत्यक्ष वस्तु बन गई और इससे कांग्रेस के इतिहास में एक नये युग का प्रभात काल शुरु हो गया। फैजपूर का रुपान्तर जैसी कि कुछ विघ्नसंतोषी लोगों की धारणा थी, फजीहतपूर के रुप म न होके फेतहपूर के रूपं में हुआ और इस तरह महात्माजी की कल्पना को प्रत्यक्ष सृष्टि में सफल स्वरुप प्राप्त हुआ।

कांग्रेस के अबतक के सारे अधिवेशन शहरों ही में संपन्न हुअे थे। इससे उसके लिये आवश्यक सामान और मनुष्यों को वहांतक पहुंचाने तथा काँग्रेस में बोले जानेवाले हजारों लाखों शब्दों को केवल भारतही के नहीं वरं संसार के कोने कोने में पहुंचा देने के आमदरफ्तके कार्यों में रेल्वै, डाक तथा तार के महकमों को अबतक बहुतही सुगमता हासिल होती थी। क्यों कि बडे बडे शहरों के रेल्वे स्टेशन तथा डाक और तारघर भी स्वाभाविक रूप से ही बडे होते हैं। लेकिन सावदा स्टेशन तथा फैजपूर के डाक व तारघर तो देहाती ही थे। ऐसी परिस्थिति में अल्पावधि में कांग्रेस का कार्य सुचारुरूपसे सफल बनाने के लिये रेल्वे कम्पनी तथा डाक और तार के महकमों को काफी परिश्रम और व्यय करना पडा, जिसे उन्हों ने सहर्ष करना स्वीकार भी किया। यह तो सच है, कि ऐसा करने में उन्हों ने व्यापारी दृष्टी रखी थी, लेकिन साथही साथ यह भी स्वीकार करना पडेगा कि इस व्यापारी दृष्टि में सहानुभूतिकी भावना भी मिली हुई थी। रेल्वे कम्पनी तथा डाक और तार विभाग के अफसरों ने शुरूसे ही स्वागत समिती के साथ मित्रता तथा सहानुभूति का व्यवहार किया और फैजपूर का कांग्रेस अधिवेशन सफल बनाने में काफी सहायता पहुंचायी। इस कार्य के लिये रेल्वे, डाक तथा तार विभाग में काम करनेवाले कुछ कर्मचारियों को फैजपूर जैसे दुर्गम स्थानपर कई दिनोंतक निवास कर देहातों में होनेवाली हरतरह की तकलीफें सहनी पडीं। लेकिन ऐसी कठिण परिस्थिति में भी उन्हों ने जिस सन्तोष, शीघ्रता, तथा तत्परता के साथ अपना कार्य किया उसके लिये उन्हें धन्यवाद देना सर्वथा उचित होगा।

महाराष्ट्रीय काँग्रेस कार्यकर्ता इस बात को भली भांति जानते हैं कि फैजपूर कांग्रेस अधिवेशन के प्रबन्ध में कई किस्म की खामियां रह गई थीं। इस अधिवेशन की कल्पना बिल्कूल नयी थी और मनुष्यों में प्रायः रूढ मार्ग को छोडकर इधर उधर न जाने की प्रवृत्ति पायी जाती है। इसीसे अधिवेशन के मार्ग में उपर्युक्त कई किस्मकी बाधायें उठ खडी हुई। इस अधिवेशन को सम्पन्न करने का उत्तरदायित्व जिनके कन्धोंपर पडा था, उनमें रही हुई कुछ व्यक्तिगत कमजोरियों ने भी इसमें कुछ योग दिया जिससे कल्पनासृष्टि में रहे हुए अधिवेशनसम्बन्धी सुन्दर चित्र का सही सही अङ्कन, वे फैजपूर की पवित्र भूमि में न कर सके। लेकिन उनके उद्देश की पवित्रता की ओर ध्यान देकर आलासे लेकर अदनातक के उनके सारे सहयोगी कार्यकर्ताओं ने तथा अन्य प्रान्तों से पधारे हुए मेहमानों ने भी उनके इन दोषों को ढंक लिया और जो कुछ भी अच्छापन पाया उसीको दृष्टिगत किया। मनुष्य प्रमादशील तो है ही, लेकिन अनुभव से शिक्षा प्राप्त करना यही उसमें रही हुई एक विशेषता है। इस दृष्टिसे यदि देखा जाय तो फैजपूर कांग्रेस के इस अधिवेशन में महाराष्ट्रीय कांग्रेस कार्यकर्ताओं ने काफी नसीहत पायी है।

कांग्रेस का अधिवेशन देहात में भरने का प्रधान उद्देश कांग्रेस तथा जनता के बीच प्रेम तथा घनिष्ठता का सम्बन्ध प्रस्थापित करके भारतीय जनता को सुसंगठित, शक्तिमान तथा स्वाधीन बनाना ही रहा था। इस दृष्टिसे भावी इतिहास निस्संदेह अपने पन्नों में यह राय दर्ज किये विना न रहेगा, कि उक्त उद्देश को सफल बनाने की दिशा में फैजपूर कांग्रेस ने प्रथम पदार्पण किया है। महाराष्ट्रीय कांग्रेस कार्यकर्ताओं के लिये भी इससे बढकर अधिक सन्तोष देनेवाली बात और क्या हो सकती है?

पूना, २७ जून १९३७ }

शंकरराव देव,
स्वागताध्यक्ष.

राष्ट्रीय महासभा फैजपूर १९३६

डिसेंबर २१ व २२

ता. २१-१२-३६

ठीक साडे चार बजे संध्या समय भारतीय महासभा के पचासवें अधिवेशन का प्रारम्भ हुआ। जनता की संख्या लगभग साठ हज़ारसे ऊपर हो गई थी। दर्शकों में अधिक तर संख्या ग्रामीण जनता की ही थी। उसी समय राष्ट्रपति पं. जवाहरलाल नेहरु का जुलूस कांग्रेस पेंडाल में दाखिल हुआ। जुलूस के साथ और भी दुसरे नेता लोग थे। जिन में से मुख्य मुख्य व्यक्तिओं के नाम ये हैं:- पंडित मदन मोहन मालवीय, सरदार वल्लभभाई पटेल, बाबू राजेन्द्र प्रसाद श्रीमती सरोजिनी देवी आदि।जुलुस के आगे हनुमान व्यायाम मंडल, उमरावती का बैण्ड था। और उसके आगे दलाधिपति रावसाहब पटवर्धन व श्रीमती प्रेमा कंटक थे।

अधिवेशन के आरम्भ में कुछ देवियों ने 'वन्दे भारतम्' गीत गाया, पश्चात् एक नवयुवक ने और एक मनोहर गीत सुनाया। अनंतर श्री शंकररावजी देव मंचपर आये और मराठी में बोलते हुये उन्होने जिस युवक ने प्रातःकाल बडी वीरता और धैर्य के साथ राष्ट्रीय झंडे को पताकापर पहुंचाया था उसका गौरव किया। स्वागत समितीने उस वीर को इस साहस के लिये रु. १०१ प्रदान किये। और दो सज्जनों ने—श्री प्रताप सेठ और आ. बा. पंडित नें—उसी युवक को ५१, ५१ रुपये के दो पारितोषिक भेंट किये।

श्री. शंकरराव देवजीने तत्पश्चात् स्वागत कारिणी समिति के अध्यक्ष की हैसियतसे अपना अभिभाषण मराठी में पढ़कर सुनाया जिसका हिन्दी अनुवाद निम्न लिखित है।

स्वागताध्यक्षका भाषण

प्रतिनिधि बन्धुओ, महिलाओं और महानुभाओ मुझे आज तिलकनगरमें राष्ट्रीय महासभाके ५० वें अधिवेशनके लिये एकत्र हुये आप सबका महाराष्ट्रकी ओरसे स्वागत करनेमें बड़ाही आनंद होता है। न्यायमूर्ति रानडे, नामदार गोखले, लोकमान्य तिलक जैसे महाराष्ट्रके सुपुत्रोंके हाथों में राष्ट्रीय महासभाके राजनैतिक कारोबारकी धुरा होते हुये भी गत ५० वर्षोंमें खुद महाराष्ट्रमें राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन एक ही दफा सन १८९५ में हो सका। महाराष्ट्र के आज के कार्यकर्तागण अधिकांश नवयुवक ही हैं। उनमेंसे चंद लोग बचपन में ही लोकमान्य तिलकजीसे स्फूर्ति लेकर राष्ट्रकार्य में लगे हुये हैं, पर ऐसे थोडे ही निकलेंगे. जिन्हें स्व. लोकमान्य के मातहतमें काम करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आजके अनेक कार्यकर्ताओं को तो तिलकजी के दर्शनों तक का सौभाग्य नहीं प्राप्त हो सका। इन सब कार्यकर्ताओं ने असहयोग के विविध कार्यक्रमों में और स्वतंत्रता संग्राम के दोनो संघर्षों के समय अनेक प्रकार के कष्ट सह लिये हैं। महाराष्ट्रकी सामान्य जनता स्वतंत्रता से प्रेम

रखनेवाली है अतः महाराष्ट्र के बाल-वृद्ध-स्त्री-पुरुष सभी इस विचारसे प्रफुल्लित हो गये हैं कि चालिस वर्षोंके बाद राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन महाराष्ट्रमें होने जा रहा है। आज इस विशाल समारोह को देखकर युवक और वृद्ध समान रूपसे प्रसन्न हो रहे हैं। महाराष्ट्र के प्राचीन तथा अर्वाचीन ज्ञानवीर पंडित, धर्मवीर, संत तथा त्यागवीर, स्वातंत्र्योपासक आज के उत्सव से आनंदित हो गये होंगे। राष्ट्रीय महासभा आप जनता के कल्याण के उद्देश से ही निरंतर प्रयत्न कर रही है तो भी यह स्वीकार करना होगा कि वर्षों तक वह बडे बड़े लोगों से ही पोषित होती रही। अब राष्ट्रीय महासभा देहातकी जनता तक पहुंची है और महाराष्ट्र प्रान्त का यह अहोभाग्य है कि राष्ट्रीय महासभा का पहला अधिवेशन देहात में करने का सम्मान महाराष्ट्र को मिला। सन १८९५ में जब महाराष्ट्र में राष्ट्रीय महासभा का पहला अधिवेशन पुणें में हुआ था तब 'सत्यशोधक समाज' के प्रस्थापक स्वर्गीय ज्योतिबा फुले ने कॉंग्रेस के पंडाल के सामने अेक कृषक का पुतला खडा कर दिया और राष्ट्रीय सभा के नेताओं का ध्यान किसान और उसकी समस्योओं की ओर आकृष्ट करने का प्रयत्न किया। अिस घटना की आलोचना करते हुये लोकमान्य तिलक ने केसरी में लिखा था कि "वास्तव में कॉंग्रेस किसानों के हितके लिये ही कार्य कर रही है, लेकिन यह बात यदि किसानों की समझ में नहीं आयी हो तो कॉंग्रेस नेताओं का फर्ज है कि यह बात वे किसानों को समझावें।"

राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन आज देहात में हो रहा है और उसे सम्पन्न करने में किसानों का ज्यादा तर हिस्सा है यह बात साबित करती है कि किसानों ने कॉंग्रेस को अपना लिया है। बडे हर्ष और गौरव की बात है कि महाराष्ट्र में आज स्व. लोकमान्य तिलक तथा स्व. ज्योतिबा फुले अिन दोनों के अनुयायी लोग राष्ट्र कार्य के लिये अिकट्ठा हुये हैं। गत १५ वर्षों से खानदेश के कार्य कर्ताओंने देहाती जनता की निष्काम सेवा की है, उसके ही परिणाम स्वरूप आज कॉंग्रेस का अधिवेशन खानदेश के ही एक ग्राम में हो रहा है। महासभा के लिये जब नगर बनाने का निश्चय हुआ तब स्वराज्य के मंत्र द्रष्टा लोकमान्य तिलक के सिवा और कौनसा नाम उस नगर के लिये सोचा जा सकता था? महात्मा गांधीजीने राष्ट्रीय महासभा के राजनीति को दरिद्रनारायण की सेवा का रुप देकर उसका रुख किसानों की ओर झुका दिया। राष्ट्रीय महासभा के ग्रामोद्योगोंका कार्य उनके नेतृत्व ही में आज संगठित हो रहा है। राष्ट्रीय महासभा के अिस अधिवेशन का आयोजन भी महात्माजी के बहुमूल्य परामर्श और पथदर्शन से किया गया है और अिस अधिवेशन के साथ जो ग्रामोद्योगकी प्रदर्शिनी हो रही है उसकी व्यवस्था उनकी सूचनाओं के अनुसार ही की गअी है। तिलक नगर का यही विशेष सौभाग्य है। तिलक नगर में अिस तरह किसानों के बीच बैठकर हम लोग स्वतंत्रता संग्राम की रूपरेखा बनाएंगे-यह अेक बड़ा ही आकर्षक दृश्य होनेवाला है। महाराष्ट्र पथरीली और खुरदरी भूमि है, अैश्वर्य और कला-विलास का यहां अभाव दिखाअी देता है तो भी, महाराष्ट्र आज़ादी के लिये कुरबानी करनेवाली की कद्र करने में हमेशा उद्यत रहा है। अिस देहाती अधिवेशन के लिये आप लोग शहरी आराम और आसानियोंकी आशा न छोडकर ही यहां पधारे हैं तो भी प्राकृतिक आपत्तियां कार्यकर्ताओं का अिस नये प्रयोग में अननुभव आदि कारणों से अिस अधिवेशन के लिये आवश्यक भर सुविधाएं भी स्वागत समिति न कर सकी अिसका

मुझे पूरा भान है। आशा है आप लोग महाराष्ट्र के अिस त्रुटिपूर्ण लेकिन प्रेमभरे स्वागत की ओर उदारतासे देखेंगे और दर गुज़र करेंगे।

भारत के आधुनिक अितिहास बनाने में महाराष्ट्र के जिन महापुरुषों ने सुदीर्घ कष्ट उठाये हैं उनका सादर स्मरण कोअी भी मराठा हृदय, अैसे अवसरपर किये बिना न रहेगा। मराठा साम्राज्य अस्तंगत होने के बाद अंग्रेजी का शासन शुरु होते ही महाराष्ट्र के कतृत्वशाली पुरुषों को समाज जीवन में कोअी स्थान न रहा और सब जगह अेक तरह का शैथिल्य सा फैल गया। पारतंत्र्य के आघात से शक्तिहीन विकलित महाराष्ट्र में अपूर्व उत्साह और पौरुष उत्पन्न करने का श्रेय, न्यायमूर्ति महादेव गोविन्द रानडेजी की असामान्य बुद्धिमत्ता और लोकहितकारी दृष्टिको ही देना चाहिये। हमारी यह राष्ट्रीय महासभा स्थापित होने के दसवीस वर्ष पूर्व महाराष्ट्र में नव विचारोंकी जाग्रति और राष्ट्रउद्धारके लिये नये नये आंदोलन रानडेजी के प्रेरणासे ही ज़ारी थे। पुणें के सार्वजनिक सभाने लोगों में एक नया सार्वजनिक जीवन पैदा किया था। रानडेजी के विचार अतीव व्यापक होनेसे ये सब आंदोलन राष्ट्रीयता के दृष्टिसे ही चलाये जाते थे। विद्वत्ता, व्यापक बुद्धि, सामाजिक उदारता आदि गुणोमें रानडेजीकी योग्यता पेशवाअी के प्रसिद्ध नाना फडनवीस से निश्चय कम नहीं थी। १८७७ में दिल्ली दरबार के समय पुणेंकी सार्वजनिक सभा के संस्थापक न्यायमूर्ति रानडे और श्री वासुदेव गणेश जोशी (जो "सार्वजनिक काका" नामसे प्रसिद्ध थे) अिन दोनोंने हिंदुस्थान के सब राजनैतिक नेताओं के सामने राष्ट्रीय महासभा के बारे में अपनी आयोजना पेश की थी। राष्ट्रीय महासभा की स्थापना होने के पहले मि. ए. ओ. ह्यूम पूणें आये थे और उन्होंने रानडे आदि समकालीन नेताओं के साथ राष्ट्रीय महासभा की नीति तथा स्थापना के बारे में मशविरा किया था। सन १८८५ में राष्ट्रीय महासभा का पहला अधिवेशन पुणें में ही होनेवाला था लेकिन उसी वक्त पुणे में हैजा फैल जानेसे वह पुणें में न होकर बंबई में हुआ।

दस वर्ष के बाद राष्ट्रीय महासभा का ११ वा अधिवेशन पुणें में हुआ। उस समय के स्वागतकारिणी समिति के अध्यक्ष वयोवृद्ध रावबहादुर वि. मो. भिडेजी ने अपने अभिभाषण में भारतीय संयुक्त स्वराज्य (ए युनायटेड अँड फेडरेटेड अिंडिया) की कल्पना आदर्श के तौरपर राष्ट्र के सामने रखी। आज यह कल्पना सर्वमान्य हो चुकी है, और हाँलाकि अंग्रेज शासकों को भी उसको अपनी मान्यता देना पडा है तो भी वे अपनी साम्राज्यशाही मज़बूत करने की दृष्टिसे ही अेक संयुक्त राज्य विधान स्वातंत्र्य और स्वयंनिर्णय के सिद्धान्तों को कुचलकर हिन्दुस्तान के सिरपर मढ़ने का प्रयत्न कर रहे हैं। अिस नीति का प्रतिकार करके सच्ची स्वतंत्रता-युक्त संयुक्त राज्यपद्धति प्रस्थापित करना यही सवाल आज राष्ट्रीय महासभा के सामने खडा है।

रानडेजी के बाद और राष्ट्रीय महासभा की प्रस्थापना के पहले महाराष्ट्र के नयी पीढ़ीके चिपलुणकर, तिलक, आगरकर जैसे तेजस्वी युवकों ने राष्ट्रीयता की ज्योत अपने त्याग से तथा स्वावलंबी कर्तृत्व से और भी प्रज्वलित की। राष्ट्रीय महासभा का राजनैतिक कार्य शुरु होने के पहले ही तिलक और आगरकर ने देशसेवा के लिये कारावास तक कष्ट सहन

करनेकी प्रथा जारी की थी। लोकमान्य तिलक ने महाराष्ट्र में राजनैतिक आंदोलन को प्रखर रूप देनेकी लगा-तार कोशिश की। जैसे पंडित जवाहरलालजी ने कहा है कि लोकमान्य तिलक हिंदुस्थान के सर्व प्रथम लोग नेता (मास लीडर) थे। मुठ्ठीभर पढे लिखे आदमियों के जलसों में सरकारनियुक्त धारा सभाओं में या दरबारों में दबी हुयी राजनीतिसंबंधी चर्चा खुल्लमखुल्ला आम जनता तक गोरगरीबों के पास पहुंचाने की प्रथा लोकमान्य तिलकजीने निस्पृहता और निर्भयता के साथ प्रथम शुरु की। सन १८९७ के अकाल में किसानों के दुःख और दैन्य मिटाने के लिये तिलकजी ने अेक बहुत बड़ा आंदोलन किया। स्वराज्य संस्थापक श्री शिवाजी महाराज की जयन्तिका उत्सव शुरु कर के आम लोगोंकी स्वराज्य की प्यास जगायी। शिवजयंत्युत्सव शुरु करने में हिंदुओं की मनोवृत्ती को मुसलमानों के खिलाफ़ जगाने का उनका उद्देश नहीं था। स्वराज्य प्रस्थापना के विना समाज का संरक्षण और संवर्धन नहीं हो सकेगा—यह राजनीति का महामंत्र देहातों तक की अज्ञ जनता के पास पहुंचाने का उनका वह अेक उदात्त प्रयत्न था।

लोकमान्य तिलकजी के सारे आन्दोलन की बुनियाद में तीन सिद्धान्त थे। हिन्दुस्थान की तहज़ीब का बड़प्पन उनके दिमाग़पर कायम का ठसा हुआ था। हालाँकि हिंन्दुस्तान की आज की हालत कितनीभी क्यों न गिरी हुअी हो तो भी, भारतीय संस्कृति के बुनियादी विशाल सिद्धान्तही विश्वविकास के लिये उपयोगी होंगे और अिसलिये हिन्दुस्तान को अपनी संस्कृति के आधारपरही अपनी तरक्की करनी चाहिये—यह उनका पहला सिद्धान्त था। उनका दृढविश्वास था कि अपनी संस्कृति के सिद्धान्तों को व्यवहृत करकेही स्वतंत्र भारत संसारके अन्य राष्ट्रों को दिशादर्शन करेगा।

भारतीय संस्कृतिकी रक्षा के लिये हिन्दुस्तानको जल्दीसे जल्दी संपूर्ण स्वराज्य हांसिल करना चाहिये—यह तिलकजी के आंदोलन का दूसरा सिद्धांत था। परकीय शासन के नीचे किसी भी राष्ट्रकी कतअी तरक्की नहीं हो सकेगी. अिसमें उन्हें सन्देह न था। अिस लिये छोटी मोटी शिकायतें सरकार के सामने रखने से वे तिरस्कार करते थे। वे आग्रह पूर्वक कहते थे कि राष्ट्र के सब पुरुषार्थी लोगों को जनता के बलका सहारा लेके अपनी शक्ति केंद्रित कर, स्वराज्य के लिये सतत संग्राम चलाना चाहिये। सामाजिक, औद्योगिक, शिक्षाविषयक तथा सांस्कृतिक बातों में से किसी भी क्षेत्र में स्वराज्य की सत्ता हाथ आये विना कोअी भी महत्त्व-पूर्ण सुधार नहीं किया जा सकता—अिसमें उनका पूरा विश्वास होने से उनका दूसरा सिद्धान्त यह था कि राष्ट्र को अपनी सारी साधन संपत्ति को अेकत्र करके ही राजनैतिक बाबतों में प्रखर संगठन करना चाहिये।

उनका तीसरा सिद्धान्त यह था कि स्वराज्य के लिये हिंदुस्थान के हिंदु—मुसलमान, ब्राह्मण—अब्राह्मण, छूत—अछूत, अमीर—गरीब, अगुए और पिछडे हुए सब तरह के लोगों में राष्ट्रीय भावना पैदा करनी चाहिये। उनका दृढ विश्वास था कि इस समय किसी भी एक जाति को या वर्ग को अपना श्रेष्ठत्व सारे समाज पर लादने का हक़ नहीं है। सबों को लोकशाही पद्धति का ही स्वीकार कर लेना चाहिये, अर्थात् आज की राष्ट्रीयता का, लोकशाही में ही आविष्कार होना चाहिये। उनका यही उद्देश्य था कि समाज के प्रतिष्ठित वर्ग को अभिमान

छोडकर जनसमूह में घुलमिल जाना चाहिये, अपनी बुद्धि और कर्तृत्व का सारे समाज को जाग्रत और संगठित करने के कार्य में उपयोग करना चाहिये।

भारतीय संस्कृति का श्रेष्ठत्व, संपूर्ण स्वराज्य, और सच्चा लोकसत्तात्मक राष्ट्रीयत्व, इन तीन सिद्धान्तों पर हिंदुस्थान का अभ्युदय निर्भर है— यह लोकमान्य तिलकजी का मत महाराष्ट्र में और हिंदुस्थान के दूसरे प्रांतों में भी सर्वमान्य हुआ इस लिये वे 'लोकमान्य' कहलाने लगे और राष्ट्रीय महासभा की राजनीतिपर इन सिद्धान्तों की सदा के लिये छाप पडी। महायुद्ध के अनन्तर जो मॉन्टफोर्ड सुधार दिये गये, वे बहुत ही अपूर्ण, असंतोषजनक और निराशायुक्त थे इस लिये उनका सख्त विरोध करके स्वयंनिर्णय के सिद्धान्तानुसार अपनी संपूर्ण स्वराज्य की माँग ब्रिटिश सरकार से मन्य कराने के लिये लोकमान्यने "कॉंग्रेस डेमॉक्रटिक पार्टी" की स्थापना की। स्वराज्य-स्वातत्र्य-स्वयंनिर्णय, हिंदुस्थान के जन्मसिद्ध हक़ हैं— यह लोकमान्य की राजनैतिक विचार पद्धति होने के कारण परदेशवासियोंने हमारे ऊपर लादे हुअे प्रतिगामी राज्य-विधान की तफ़सीलवार चर्चाको, उन्होंने कभी महत्व नहीं दिया। "कॉंग्रेस डेमॉक्रटिक पार्टी" की स्थापना करके लोकमान्यने हिंदी राजनैतिक झगड़े को स्वयंनिर्णय के सिद्धान्त पर अधिष्ठित किया। आज इस स्वयंनिर्णय के सिद्धान्त की परिणति राष्ट्रीय महासभा के कॉन्स्टिटयुएंट असेंब्ली की राजनीति में हो गयी है। जो लोग मॉंटफोर्ड के सुधारों को स्वीकृत करके सरकार के साथ सहकार करने के लिये लट्टू हो गये थे उनसे अपने दलकी भिन्नता दरसाने के लिये उन्होंने अपनी नीतिका "प्रतियोगी सहकारिता" (Responsive Co-operation) के नाम से वर्णन किया था। लोकमान्य की सारी राजनीति को ग़ौर से देखने और उस समय के उनके लेख और भाषण पढने से यह बात स्पष्ट होती है कि उनकी वृत्ति प्रतिकार, और प्रतिरोध की थी। इसी प्रतिरोध नीति का आगे चलके स्वराज्य पक्ष ने अवलंब किया और आज भी राष्ट्रसभा पक्ष ने नये विधान के विषय में उसी नीति को अख्त्यार करने का निश्चय किया है। जबतक हिंदुस्थान का स्वयंनिर्णय का हक़ प्रस्थापित न होगा तबतक ब्रिटिश सरकार के दिये हुये किसी राज्यविधान के बारे में राष्ट्रीय महासभा की यही नीति रहेगी।

शासन-सुधार के साथ साथ हि दमन नीति अख्त्यार करने का ब्रिटिश राजतंत्र का स्वभाव ज़ाहीर है। आज भी हम इसका अनुभव कर रहे हैं। उस समय भी दमन के कायदे और अमृतसर जैसे अत्याचार, ज़ारीही थे। ब्रिटिश सरकार ने पंजाब-हत्याकांड के प्रवर्तकों की हिमायत की और ब्रिटिश जनता ने उनका गारव किया। अिस महान राष्ट्रीय मानभंग के अवसर पर सत्त्व रक्षा के लिये कुछ ठोस जवाब देनेकी ज़रूरत राष्ट्रमें उत्पन्न हुअी। हिंदुस्तान के सद्भाग्य से इस समय महात्मा गांधीजी ने हिंदुस्तान की राजनीति में महान् क्रांतिकारी शक्ति पैदा की। राष्ट्र के सामने उन्होंने असहकारिता की योजना पेश की। इसी समय लोकमान्य का देहावसान हुआ। लोकमान्य का मृत्युदिन असहकारिता का जन्मादिन ठहरा। राष्ट्रीय महासभा ने महात्माजी की असहकारिता के प्रोग्राम का स्वीकार किया और उनके हाथ राष्ट्रका नेतृत्व सोंप दिया। इस तरह राष्ट्रीय महासभा में असहकारिता के नये युग का निर्माण हुआ।

लोकमान्य का सहसा देहान्त हो जाने के बाद महाराष्ट्र में महात्माजी की कार्य पद्धति के बारेमें तिलक पक्ष में मतभेद उत्पन्न हो गये। वास्तव में तो लोकमान्य ने अपने मृत्यु के पूर्व अपने पक्ष के सामने जो योजना रक्खीं थी उसमें धारा-सभाओं में सरकार का प्रतिरोध, बाहर स्वयंनिर्णय के सिद्धान्त पर संगठन, राष्ट्रीय सभा के आंतरिक व्यवहार में लोकशाही सिद्धान्तोंके अनुसार, निर्वाचितों का और आम जनता का नियम पुरस्सर बर्ताव, और राष्ट्रीय महासभा के निर्णयों के प्रति आज्ञाकारित्व-- ये चार महत्व की बातें समाली। तथापि लोकमान्य के देहान्त के पीछे उनके कई अनुयायियोंने मात्र धारासभा प्रवेश के ऊपर ही सारा ज़ोर देकर ऐसा प्रतिपादन शुरू किया कि तिलक और गांधीजी की राजनीति और तत्त्वज्ञान में सख्त विरोध ही है। लोकमान्य के अन्य अनुयायियों ने कॉंग्रेस मॅंडेट के सिद्धान्तों पर तथा धारासभा के बाहर के प्रतिकारात्मक आंदोलनपर भार दिया, और तिलक राजनीति का महात्माजी की राजनीति में स्वाभाविक विकास होते देखकर राष्ट्रीय महासभा की आयोजना की ताईद की। इन दो भिन्न २ दृष्टि कोनों के कारण जो मतभेद पैदा हुए उनमें से तिलक पक्ष में फूट पड़ी और महाराष्ट्र कमज़ोर होने लगा। इस कारण कुछ समय तक महाराष्ट्र में अराष्ट्रीय जातपातिकी सांप्रदायिक वृत्ति का अमल ज़ारी रहा।

मैं खुद सचमुच मानता हूं कि लोकमान्य कि राजनीति महात्मा जी की राजनीति में स्वाभाविक तौर से परिणत हो गओी है। विधान के अनुसार कानूनी कारवाओी की उपयोगीता खत्म होती है तब सविनय आज्ञाभंग ही क्रमप्राप्त होता है। लोकमान्य के अनेक लेखों और भाषणों में यह बात प्रकट की गयी है। सन १९०५ से १९०८ तक के बहिष्कार योग के आन्दोलन में लोकमान्य ने अपने अनुयायियों के सामने रक्तपात रहित क्रांति की कल्पना स्पष्ट रूपसे धर दी थी। निःशस्त्र जनता को आज्ञाभंग के लिये तयार करने में केवल व्यावहारिक दृष्टि से भी अनत्याचार का नियम-पुरस्सर पालन अपरिहार्य होता है। असहकारिता के सभी अंगों का लोकमान्य के बहिष्कार योग में अंतर्भाव होता था। महात्माजी ने बहिष्कार के अिस राजनैतिक शस्त्र को अहिंसा सिद्धान्त का आध्यात्मिक अधिष्ठान देकर उसे आत्म बलका सर्वव्यापी क्रांतिवाद बना दिया है। लो. तिलकजी के स्वदेशी आन्दोलन को महात्मा गांधीजी ने खादी और ग्रामोद्योग के संगठन का रूप दे दिया। महात्माजी ने पहला राष्ट्रव्यापी सत्त्याग्रह शुरू किया तब लोकमान्य विलायत थे। हिंदुस्थान लौट आने के बाद उन्होंने जो पहला जाहीर भाषण दिया था उसमें कहा कि ' गांधीजी ने रौलेट बिल के सामने जो सत्त्याग्रह शुरू किया उसमें शामिल होने के लिये मैं यहां हाजिर न रह सका इसका ही मुझे दुःख है। इससे सिद्ध होता है कि महात्मा जी का सत्त्याग्रह का सिद्धान्त उन्हें मंजूर था।

इसी दृष्टि से आम जनता ने और खास कर मध्यमवर्गीय स्वार्थत्यागी युवकों ने राष्ट्रीय महासभा की इस नये आयोजन का स्वागत किया। तथापि आम जनता का संगठित करनेवाला लोकमान्य जैसा महान् नेता महाराष्ट्र में न मौजूद होने के कारण महाराष्ट्र में राष्ट्रीय महासभा का कार्यप्रभाव आगे नहीं बढ सका। जो भी इन स्वार्थ रहित युवकों ने असहकारिता की ज्योति महाराष्ट्र के कई स्थानों में अपनी श्रद्धा और त्याग के बल पर बुझने नहीं दिया। मुळशी सत्त्याग्रह के कार्यकर्ता, राष्ट्रीय

शिक्षा के कार्यकर्ता, राष्ट्रीय सभा के प्रचारक, चर्खा–खादी के भक्तों ने कुछ साल तक बड़ीही प्रतिकूल परिस्थिति में राष्ट्रीय सभा का कार्य ज़ारी रखा। किन्तु आहिस्ता आहिस्ता अिस स्थिति में बदल होता गया। युवकों के आन्दोलन, सायमन कमिशन पर बहिष्कार आदि बनावों से महाराष्ट्र में गरम वृत्ति का दल पैदा होने लगा। राष्ट्रीय सभा के कार्यकर्ताओं की तपश्चर्या सफल हुई। १९३०–३२ के सत्याग्रह संग्रामों में महाराष्ट्र का स्वातंत्र्य प्रेम जोरों से उछल पडा और राष्ट्रीय सभा की तेजस्वी राजनीति को आम जनताने साथ दिया। लोकमान्य की राजनीति की परंपरा महात्माजी आगे लिये जा रहे है। और इन दोमहापुरुषों के तत्त्ववाद में उपरी भिन्नता दिखाअी देने पर भी उनमें आंतरिक विरोध बिलकुल नहीं है यह धारणा आमफ़हम होगअी। महाराष्ट्र में 'तिलक या गांधी'–यह द्विधा भाव नष्ट होकर 'तिलक वही गांधी' इस निर्णय के गूँजन से, सारा महाराष्ट्र, राष्ट्रसभा के झंडे के नीचे इकठ्ठा हुआ। १९३२ के स्वतंत्रता–युद्ध के बाद हिंदुस्तान के अन्य प्रांतों की तरह महाराष्ट्र में भी राष्ट्रीय महा सभा के छत्र के नीचे समाजवादी युवकों का, एक नये दल का आविष्कार हुआ।

आज की राष्ट्रीय महासभा में सब जगह कौन्सिलवादी, विधायक कार्य पद्धति से लोकसंगठन करनेवाले असहकारवादी, और किसान–मज़दूरो का संगठन करनेवाले समाजवादी, ऐसे तीन दल होने परभी सत्याग्रह की अमोघ शक्ति पर राष्ट्रसभा का दृढविश्वास है। राष्ट्रीय महासभा आज अपने उम्मेदवारों को धारा सभाओं में भेज रही है वह इस लिये नहीं कि ब्रिटिश सरकार के दिये हुए सुधारों से जैसा हो सके फायदा उठावें। ब्रिटिश सरकार ने हिंदुस्थान का स्वयंनिर्णय का हक़ ठुकरा कर बहुतही प्रतिगामी राजविधान, राष्ट्रपर लादने के लिए घोर अत्याचारी योजना बनायी है। इस अत्याचार का, संगठित रूपसे सामना करके आगामी राज्यविधान का विध्वंस करने तथा कॉन्स्टिटयुअंट असेंब्ली के द्वारा स्वयंनिर्णय का हक़ प्रस्थापित करने के लिये राष्ट्रीय महासभा ने कौन्सिल प्रवेश को मंजुरी दी है।

राष्ट्रीय महासभा के कौन्सिलवादी सदस्यों की भी निश्चित राय है कि, आगामी शासन–विधान को अपने सख्त विरोधसे तोड डालने के बाद, कॉन्स्टिटयुअंट असेम्ब्ली की स्थापना करने के लिये धारा–सभा के बाहर प्रत्यक्ष प्रतिकार का आंदोलन शुरू करना ही पडेगा। इससे सबों को मालूम होगा कि राष्ट्र सभा के कौन्सिलवाद मे और उसके प्रतिपक्षियों के कौन्सिलवाद में बडी तफ़ावत है। भविष्य होने के स्वराज्यमें आर्थिक पुनर्व्यवस्था किस पद्धति से होनी चाहिये इस पर समाजवादिओं के मत, महात्माजी के मत से भिन्न होने पर भी समाजवादी पक्ष का यह दावा है कि, यहां की साम्राज्यशाही के विरुद्ध मुकम्मिल आजादी के लिये लडने की इच्छा रखनेवाले सभी पक्षों का एक अभेद्य दल बनाना ही आज का सवाल है। साम्राज्यशाही का सामना राष्ट्रीय सभा के ज़रिये करना चाहिये और वह भी शांतिमय साधनों से इस बात पर सब पक्षों का मत एक है। इसलिये आज राष्ट्रीय सभा के कार्यक्रम में आम जनता का संगठन करके संगठित प्रतिकार शक्ति के बलपर यहां की परकीय सत्ता के साथ झगडे कर, पूर्ण–स्वराज्य की प्रस्थापना करने के एकमेव कार्य को अग्रस्थान मिला है। किन्तु केवल राजनैतिक स्वराज्य से आम जनता को लाभ होनेवाला नहीं है। इसलिये सामाजिक और आर्थिक समता का स्वराज्य की आयोजना में अंतर्भाव कर देना चाहिये।

स्वतंत्र और परतंत्र देशों की राजनीति में अंतर होनेपर भी औद्योगिक क्रांति से पैदा हुए वर्ग विरोध के कारण आज दुनिया में सामाजिक व राजनैतिक क्रांतिकी परिस्थिति उत्पन्न हुअी है। इससे बुद्धिप्रधान उत्क्रांतिवादी राजनीतिका युग समाप्त होकर स्वतंत्र देशों में भी क्रांतिकारी राजनीति के युगका प्रारंभ हुआ है। तो फिर हिंदुस्थान जैसे परतंत्र देश की राजनीति अधिकतर क्रांतिकारी बनने लगी तो उसमें क्या आश्चर्य? अिस राजनीति में राज्यशास्त्रकौशल के साथ साथ वीरता, भविष्यकालपर अटल श्रद्धा, और सर्वस्व प्रदान करने की तैयारी आदि गुणोंकी ज्यादा ज़रूरत रहती है। जो व्यक्ति त्याग और पराक्रम में हिचकि चाता है वह अैसी राजनीति में नालायक ठहरता है। हमारे हिन्दुस्तान में भी हम यही अनुभव करते हैं। यहांपर जिन्होंने केवल बुद्धि के बलपर राजनीति चलाने की कोशिश की वे लोग जनता की सहायता के आधार से वञ्चित रहे। जिन्होंने सर्वस्व की आहुति देकर समय समय पर राजनीति के प्रयोग अख्त्यार किये उन्हीं के पीछे सारी जनता श्रद्धाभाव से खड़ी रही। नामदार गोखले चोबिसों घंटे हिन्दुस्थान की राजनीति का आध्यात्मिक बुद्धिसे विचार करते रहते थे और सतत सेवा करनेवाले लोगोंका "भारत सेवक समाज" स्थापित करके उन्होंने अपनी यह परंपरा हिन्दुस्थान में अपने पीछे चालू रहे, अैसा प्रबंध किया। लोकमान्य तिलक की कार्यपद्धति में क्रांतिकरियों की तडफ, और साहसीवृत्ति दिखाअी देती है। साहसी पराक्रम पूर्ण पुरुष को लोगों के साथ मिलजुल जाना अेक सहज बात है। और उसके पराक्रम के बलपर लोक संगठन होता ही जाता है। महात्मा गांधीजी के सत्याग्रह दर्शन में लोकमान्य की बहादुरी, और नामदार गोखलेजी की अटूट सेवा-वृत्ति, अिन दोंनो सद्गुणों का सुंदर समन्वय हुआ है। पराक्रम और सेवा के अेकीकरण से ही क्रांतिकारी राजनीति चलनी चाहिये, अिस लिये राष्ट्रके सब वीर पुरुष और सेवकों को इकठ्ठा करके उनके ज़रिये लोकशक्ति को संगठित करने का कार्य करनेवाली अेकमेव संस्था होनी चाहिये।

गत पचास वर्षके हिन्दुस्थान के राजकीय इतिहास के निरीक्षणसे मालूम होगा कि लोक-शक्ति को संगठन करनेकी राष्ट्रीय महासभाकीही कोशिश चल रही है। राष्ट्रीय महासभा हमारे देशके जनताकी एकमेव प्रातिनिधिक संस्था है। जिसका दरवाज़ा देशके सब तऱ्हेके लोगोंके लिये खुला हुआ है। राष्ट्रीय महासभा का आज का विधान पूर्णशः लोकशाही है। राष्ट्रीय महासभामें कोई भी आकर अपना कार्यक्रम उसके सामने रख सकता है, अपने पक्ष का बहुमत बना सकता है। बहुमतके अनुसार जो निर्णय होंगे उनको हरअेक व्यक्ति या पक्ष नियमाधीन होकर अमलमें लानेकी पराकाष्ठा करें; कोई भी एक पक्ष दूसरे पक्षको अपने समर्थनमें बहुमत बनाने के न्याय्य मार्गसे रोक न सके; राष्ट्र के भविष्य के बारेमें अपने ख्यालात से लोगों को कायल करने में पूर्ण विचार स्वातंत्र्य इस तरह हो जाय, तभीही राष्ट्र के प्रभावशाली पक्ष के हाथ में राष्ट्रीय महासभा के सूत्र सदा के लिये रहेंगे और उसके विकास में रुकावट नहीं आयेगी। राष्ट्रीय महासभा की नीति अधिकसे अधिक तेजस्वी बनाना यही हिन्दुस्तान की राजनीति का प्रधान उद्देश होना चाहिये; जो बहुमत के निर्णयों का नियम-पुरस्सर पालन कर के सबको विचार स्वातंत्र्य देनेसे ही सफल होगा। लोकमान्य तिलकजी की, राष्ट्रीय महासभा के लिये यही नीति थी। 'सुरत' कॉंग्रेस में स्वातंत्र्यवादी पक्ष को विचार-स्वातंत्र्य

देना तथा राष्ट्रीय महासभा का दरवाजा उन लोगों के लिये बंद न करा देना, इसी विषय-पर उन्होंने बहुत आग्रह पूर्वक ज़ोर दिया था। उस समय के नेताओं ने उदारनीति न अख्त्यार करने से राष्ट्रीय महासभा में फूट पड़ी और स्वातंत्र्यवादी पक्ष इस तरह से बहिष्कृत होने से सरकार उसे सहज में कुचल सकी और राष्ट्रीय सभा की मांगें कमज़ोर करा दी गई। इस कारण राष्ट्रीय महासभा की राजनीति को एक जबरदस्त धक्का उस समय पहुंचा। सन १९०७ में राष्ट्रीय महासभा में फूट न पडी होती तो शायद महायुद्ध के समय हिंदुस्तान का स्वयंनिर्णय का हक मान्य करना ब्रिटिश सरकार को लाजिमी हुआ होता। राष्ट्र के नवजवान पक्ष के विचार स्वातंत्र्य को मर्यादित करने का आग्रह धरने से राष्ट्रीय महासभा का बल क्षीण होगा और राष्ट्र के प्रगति में वह एक रुकावट ही होगी यह बोध इस घटना से लेने लायक है। महात्मा गांधीजी की अहिंसा वृत्तिद्वारा राष्ट्रीय महासभा से यह भूल फिरसे होनें की संभावना नहीं है।

आज सारी दुनियामें साम्राज्यशाही और लष्करशाही जो जुल्म जारी कर रही है उसमें बहुसंख्य प्रजा निर्दयतासे कुचली जाकर युद्ध काण्ड में हवन हो रही है। साअिन्स की खोजसे सृष्टि के अज्ञात रहस्य खुल जाने पर भी मनुष्य की नैतिक और बौद्धिक मंदता से समाज की विपत्तियां बढ ही रही हैं। औद्योगिक क्रांति से पुरानी समाजरचना की बुनियाद उखड गई है और नयी समाज रचना कौनसी पद्धति पर करनी चाहिये इस बारे में आज संसारभर में गरमागरम बहस चल रही है। नयी परिस्थिति के योग्य समाज की पुनर्घटना कर के ठीक समाज रचना किस तरह की जावे— यह दरसाने के लिये समाजधर्म के निष्काम प्रणेताओं की दुनिया में ज़रूरत है। प्रत्येक व्यक्तिको मालूम होना चाहिये कि समाज-जीवन मेंही अपने निजी जीवन का साफल्य है। यही समाजधर्म का आधार है। व्यक्ति व्यक्ति की बुद्धि, शक्ति आदि गुण केवल स्वान्तः सुखाय उपयोग में लाना नामुनासिब है। व्यक्ति व्यक्ति की प्राकृतिक योग्यताअें समाजहित के लिये ही उपयोग में लानेसे व्यक्ति का जीवन सुखी और सफल हो जाता है अिस धर्म सिद्धान्त भी समाज के सामर्थ्यशाली वर्गों को अधिकाधिक आचार में लाना चाहिये।

जिसका सामर्थ्य अधिक, उसकी समाजहितबुद्धि भी अधिक तीव्र होनेजानी चाहिये। नहीं तो वह व्यक्ति बडा ही समाज विनाशक बन जायगा। धर्म और संस्कृति के अभिमानियों को चाहिये कि वे समाज में प्रबलों के हाथों अन्याय न होने देवें। दुर्बलों की रक्षा करें। हरअेक व्यक्ति को अपने विकास के आवश्यक साधन मिल जायँ, अिस तरहकी समाज व्यवस्था स्थापित करने की कोशिश करें। अैसे समाजधर्म का, सबोंसे आचरण करा लेनेवाले निःस्वार्थी, समाजधुरीण उत्पन्न होने चाहिये। समाज की सब संस्थाओं के व्यवहारोंपर अैसे पुरुषों का नैतिकनियंत्रण रहना चाहिये। तभी जाकर समाजसंस्था समाजधारणा के लिये उपयुक्त होगी। यदि समाज धर्म की रक्षा करेगा तभी धर्म, समाज की रक्षा करेगा। 'धर्मो रक्षति रक्षितः'। उसीके साथ समाज में जिन लोगोंपर अन्याय हुआ करता है उनके जीवन के साथ अेक दिल होकर उनको स्वावलंबन और स्वाभिमान से उनके ऊपर होनेवाले अन्याय का प्रतिकार करने का साधन सिखाने की जिम्मेवारी, अिन्ही समाज के नेताओंपर

है । समाज के दृष्टिवंत वर्ग को अपनी बुद्धि का अैसे विविध कार्यों में व्यय करना चाहिये । यह अेक महान् धर्मकार्य है और अिस कार्य को अपना लेने से, जीवन, सत्कार्य में कामयाब हुआ अिसका संतोष उन्हें प्राप्त होगा । दुनिया में सर्वत्र संगठित-लाभ और हिंसा की बड़ी भारी आंधिया चलने लगी है । हमारे देश को यदि अिनसे सुखरूप से बचाना हो तो हमें अैसा रास्ता ढूंढ निकालना चाहिये जिससे हम अिस संगठित लाभ और हिंसा का हमारी प्राचीन सभ्यता के अनुरूप प्रतिकार कर सके । हिन्दुस्तान के पूर्व पुण्य से सत्याग्रह जैसा अहिंसात्मक क्रांतिशास्त्र हमें प्राप्त है जिसमें अहिंसावृत्ति, आत्मशुद्धि और साधनों की शुचिता–को अग्रस्थान हैं । अिस सिंद्धान्त के अनुसार अपने जीवन में अंतर्बाह्य क्रांति कराके उसी के बल पर सामाजिक जिवन में क्रान्ति करने का अटूट प्रयत्न, यदि चालू रहेगा तो, मेरी दृढ श्रद्धा है कि समाज के सब तरह के अन्यायों से और विषमता से पूर्णतया मुक्त ' रामराज्य ' या आदर्श स्वराज्य हम संपादन कर सकेंगे ।

भारतीय हृदय में रामराज्य के ध्येयने बहुत गहरी जड़ पकड़ी है जिस ध्येय का अंतरंग अेक होते हुये भी देशकाल परिस्थिति के अनुसार उसके बाह्य आविष्कारों का विकास होने के लिये काफी गुंजाअिश है । वसिष्ठ-विश्वामित्र के समकालीन ' रामराज्य ' और तुकाराम–रामदास के समकालीन ' आनंदवन भुवन ' अिन में परिस्थिति के अनुरूप फ़र्क तो हुआ ही था । अिसी प्रकार लोकमान्य तिलकजी ने शिवाजी की जयन्ति या 'रामदासनवमी ' आदि उत्सव शुरू किये तो भी उन्हमें, अपनी स्वराज्य की कल्पना में लोकसेवा का आधुनिक तत्त्ववाद समालिया था । महात्मा गांधी रामराज्य के नामसे जनता में स्वराज्य के लिये जाग्रति कर रह हैं तो भी वे यह कहने में कभी भी नहीं भूलते कि लोकशाही के तथा आर्थिक व सामाजिक समता का आप भक्त है । लष्करशाही व साम्राज्यवादी युग में सत्ता और संपत्ति से अलिप्त रहनेवाले तपोनिष्ठ ऋषिवर्ग के सामने तथा प्रजाके संगठित आत्मबल के सामने सिर झुकानेवाली राजसत्ता आज की दुनिया चाहती है । अैसे अनासक्ती, कर्मयोगी, सत्याग्रही ऋषियोंका अेक वर्ग उत्पन्न होकर जनता को सत्याग्रह की शिक्षा देगा, दुनिया में सच्चा रामराज्य स्थापित होगा और बाद मानव समाज सब तरह से मुक्त होकर सर्वत्र सत्ययुग जैसा आत्माराम का दंडहीन राज्य स्थापित करने का जो रामराज्य का अन्तिय ध्येय है, उस ध्येय की दिशासे प्रगति करता रहेगा । अिस आदर्श स्वराज्य के रूप के संबंध में किसी का कितनाभी मतभेद क्यों न हो ब्रिटिश साम्राज्यशाही से अपनी आज़ादी हासिल करना, यही आजके परतंत्र हिन्दुस्थान का प्रधान कर्तव्य है । अिस बारे में राष्ट्रीय महासभा में किसी का भी विरोध नहीं । अिसी कारण राष्ट्रकी साम्राज्य विरोधी सारी शक्तियां आज राष्ट्रीय महासभा के झंडे के नीचे अेकत्र हो रही हैं ये सारी शक्तियां यदि स्वतंत्रता के शांतिसंग्राम में काम आयेंगी तो, हम लोग ब्रिटिश साम्राज्याशाही से मुक्त हो जायेंगे और मुझे आशा है कि उसके बाद जो स्वयंनिर्णित स्वराज्य हम हासिल करेंगे उसी की परिणति आदर्श स्वराज्य में होगी ।

तीनसौ वर्षेके पहले पुण्यप्रताप श्रीशिवाजी महाराजाने महाराष्ट्र के किसानोंको स्वातंत्रता के सैनिक बनाकर स्वराज्य संस्थापना की, जिसके लिये अपना जीवित होम करने की बचपन में ही उन्होने प्रतिज्ञा की थी । देहातों के सरकारी जागीर के पीछे लगे हुअे ब्राह्मणवर्ग को

हाथ में भिक्षा के लिये झोली लेकर निःस्पृहतासे समाज धर्म के सेवक बनने के लिये श्रीसमर्थ रामदासने उपदेश दिया था। महाराष्ट्र के ब्राह्मण तथा क्षत्रियोंने अपना कर्तव्य जब जान लिया उसी समय किसानोंने भी उनका साथ दिया और अिन सबों के संगठित प्रयत्नों से महाराष्ट्र का भाग्योदय हो सका। आज भी महाराष्ट्र का किसान जागृत होकर नेतृत्व की अपेक्षा कर रहा है। किसान की श्रद्धा के साथ, बुद्धिमान लोगों की बुद्धि का निस्पृहता और निष्काम से संयोग हो जाय तो स्वतंत्रता की आगामी लड़ाअी में महाराष्ट्र अपनी बहादुरी किये बिना न रहेगा। आज महाराष्ट्र में राष्ट्रीय महासभा की शक्ति संगठित हुअी है, ब्राह्मण, अब्राह्मण अेक हुये हैं, साधारण जनता राजनीति के उन्मुख हो रही है, अैसे अवसर पर महाराष्ट्र के अक्लमंद लोग लोकमान्य तिलक के उपदेश के अनुसार 'देश के लिये काषायवस्त्र परिधान करने के' मार्ग का अवलंबन कर के आमजनता का नेतृत्व स्विकारेंगे तो स्वराज्य दूर नहीं है। लोकमान्य के "गीतारहस्य" में की हुअी निष्काम कर्मयोग की शिक्षा का अिसी में साफल्य होगा।

मैं आपको और ज्यादा समय तक रोकना नहीं चाहता हूं। कॉंग्रेस के इतिहास में यह पहली ही कॉंग्रेस है जो देहात में हो रहीं है। साधारण तया मनुष्य पुराणप्रिय होने से किसी भी नये उपक्रम में वह सहज अनुकूल नहीं होता है। बहुत दफां वह उसका विरोध ही करता है। पुराने रास्ते से भिन्न, और नया रास्ता निकालने के लिये थोड़े ही लोग तैयार रहते हैं। फैजपूर कॉंग्रेस के बारे में हमारा यही तजुर्बा है। शुरुसेही इस कार्य को स्वकीय और परकीय अनेक लोगों से विरोध हुआ, यद्यपि इसमें से बहुतसा विरोध सद्हेतुसेही प्रेरित था। फैजपूर कॉंग्रेस का यदि समग्र इतिहास लिखा जाय तो वह बड़ाही मनोरंजक और उद्बोधक हुये विना नहीं रहेगा। यह इतिहास आज की राज्य पद्धति और उससे जनता के ऊपर होनेवाले अनिष्ट परिणाम इन बातोंपर क़ाफी रोशनी डालेगा। लेकिन जैसा अनेक लोगों ने, इस कार्य का विरोध किया उसी प्रमाण में बहुत लोगों की मनःपूर्वक साह्यता भी मिली है। "अनेक बाहूदर वक्त्रनेत्र" यह परमेश्वर का जो वर्णन है वह सत्य है। हज़ारो हाथोंसे जनता जनार्दन ने यह प्रचंड कार्य खडा किया, उनकी सहायता के बिना, इतना बड़ा कार्य कैसा खड़ा किया जा सकता था? विशेषकर जिस ज़मीनपर 'तिलकनगर' निर्माण हुआ है, उसके मालिकों का नामनिर्देश करना ज़रूर है। इस ज़मीन में कअी कमियां हैं और इन कमियों के कारण ही कुछ अंशमे विरोध पैदा हुआ। अनेक दोष होते हुये भी यह एक पवित्र ज़मीन है। क्योंकि यहीं कॉंग्रेस का अधिवेशन आज हो रहा है। आज यह सारे विरोध और कठिणाईयों का निरसन होकर कॉंग्रेस अधिवेशन शुरु हुआ है, अिससे 'क्लेशः फलेनहि पुनर्नवतां विधत्ते' अैसी मेरी और मेरे कार्यकर्ता साथियों की अवस्था हुअी है; तो भी हम अपनी अिच्छा के अनुसार आप का स्वागत नहीं कर सके और हमारे आतिथ्य में बहुत कुछ त्रुटियां भी रह गअी हैं। अिस का हमें भान है। आशा है आप उदार हृदय से हमें क्षमा करेंगे। राष्ट्राधिपति पं. जवाहरलाल नेहरुजी के नेतृत्व में कॉंग्रेस का यह अधिवेशन अच्छी तरह सफल हो जाय और स्वतंत्रता के सुपथपर वे, हम सबको मार्गदर्शी हो जायँ—अैसी अिच्छा प्रकट कर के मैं आपसे रजा चाहता हूं। **वंदे मातरम्**

प्रधानः–अब आप के सामने कांग्रेस के मंत्री, बाहर से आये हुए संदेश सुनायेंगे जो दूर २ देशों व विदेशों से आये हैं। सब तो पढ़े नहीं जा सकते चूंकि समय बहुत लगेगा। नाम बतला दिये जाएंगे, कुछ एक में से पढ़ भी दिया जाएंगा।

मंत्रीः–जो सन्देश बाहर से आये हैं उनकी संख्या तो बहुत हैं कुछ एक के नाम मैं सुनाये देता हूं। कुछ संदेश बाहर देशों से भी आये हैं। सन्देश भेजनेवालों में मुख्य २ के नाम यह हैं:–रोमाँ रोलाँ, पाल लैम्गीरिट, प्रो. हेरोल्ड लास्की, राजा महेन्द्र प्रताप सिंह, श्री रास बिहारी बोस, श्री आनन्द मोहन सहा, फैनर बी. स्वे, श्री. एस्. एस्. राना पाई, श्री. जयराम दौलतराम। आपने फिर कहा–मैं अब आप को श्री. रोमाँ रोलाँ का सन्देश सुनाता हूं। यह फ्रेंच भाषा में लिखा हैं। मैं आप को इसका अंग्रेजी तरजुमां सुनाये देता हूं।

राष्ट्रपति पं. जवाहरलाल नेहरू का भाषण.

राष्ट्रपति पं. जवाहरलाल नेहरू ने बजाय लिखित भाषण के उसी के आधार पर भाषण दिया।

बहनो और भाइयो,

क़रीब आठ महिने हुए इसी आसन पर खड़े हो कर और इसी हैसियत से मैं आपके सामने अपना भाषण दे चुका हूँ, और आपकी आज्ञा पर फिर यहाँ हाजिर हूँ। आप लोंगो ने बार बार जो विश्वास और भरोसा मुझपर दिखलाया है, इसके लिए मैं आपका मशकूर हूँ, और आपकी मुहब्बत और प्रेम का मेरे दिलपर बहुत असर है। जो सम्मान और अधिकार आपने मुझे फिर दिया है, उसके भार और जिम्मेदारी को मैं काफ़ी महसूस करता हूँ। जो स्त्री और पुरुष दुनिया में आज जिम्मेदारी के पदोंपर हैं उनके सामने काफ़ी बडे और अहम काम हैं और बहुत से उसे पूरा कर सकने में असमर्थ हूं। हिन्दुस्तान में भी उस कार्यकी गम्भीरता उतनी ही अहम है जितनी दूसरी जगहों में, और अगर वर्तमान कठिनाइयों से भरा हुआ है, तो भविष्य के गर्भ में भी व्यापक और कठिण समस्याएँ छिपी हूई हैं। तो क्या ताज्जुब की बात होगी अगर आप की इस भेंट को स्वीकार करनें में मुझे कुछ थोड़ी सी घबराहट हो।

अपनी समस्याओं पर विचार करने से पहले हमारे दिलो में कुदरतन अपने उन साथियों की याद आही जाती है जिनसे पिछले कुछ महिनों में हमे अलग होना पड़ा है। उन्हें भी हम भूल नहीं सकते जो अपनी उम्मीदों को खतम कर लगातार कई सालों से जेलो और नजरबन्दी की तकलीफ़ों को सहते हूए अपनी जिन्दगी के दिन कम कर रहे हैं। हमारे दो प्यारे साथी मुख्तार अहमद अन्सारी, और अब्बास तैयबजी जिनका नाम कांग्रेस के इतिहास में आदर और सन्मान के साथ लिखा गया है, हमसे जुदा हो गए हैं। वे कठिन परिस्थिति में हमारे बहादूर और समझदार सलाहकार तथा सहकारी और मित्र के नाते सब को प्रिय थे।

हमारे साथी जो जेलों मे पड़े हैं या नजरबन्द हैं उनके लिए हमारी दिली शुभकामना है। उनकी यातनाएँ जारी हैं और बढती जा रही हैं और अभी थोड़े ही दिन हुए हम

लोगों ने तीन ऐसे नजरबन्दों की आत्महत्या की खबर पायी है, जिन्हें अपने सुन्दर बंगाल प्रांत में जीवन बिताना दूभर हो गया था, जहाँ नवजवान लड़के और लड़कियों कि एक बडी संख्या नजरबन्द है और इस नजरबन्दी की कोई मीयाद नहीं है। ऐसा उदाहरण हमे नाजी जर्मनी में मिलता है जहाँ केन्द्रीय जेलों में नजरबन्दों की संख्या बढ़ रही है और जहाँ आत्महत्या अकसर होती है।

पिछली कांग्रेस के मौक़े पर मुझे वर्किंग कमिटी को नामज़द करना पड़ा था, और उसमें मैं ने, श्री सुभाषचन्द्र बोस को उसका मेम्बर चुना था। लेकिन आप लोग जानते ही हैं कि, बम्बई पहुँचते ही वे किस तरह हम लेगोंसे छीन लिए गए, और उसी वक्त से खराब और कमजोर तन्दुरुस्ती के बावजूद वह नजरबन्दी की हालत में रखे गए हैं। वर्किंग कमिटी उनकी सलाहों से, जिनपर हमें इतना भरोसा था, लाभ न उठा सकी, और लगातार साल भर उनकी जुदाई हमें खटकती रही। हम लोग अपने भाई बहनों का इस प्रकार कुचला जाना एक बेबसी की हालत में देखते रहे हैं, लेकिन, यह बेबसी हमें अपने इस निश्चय में और दृढ़ बनाती है कि, हमारे भाइयों की हालत जो असह्य और नाक़ाबिले बरदाश्त हैं, जल्द से जल्द खत्म हो।

हम लोगों के एक साथी जो पिछले साल लखनऊ में मौजूद नहीं थे, एक लम्बी जेल की सज़ा पूरी करने के बाद हमारे बीच वापस आए हैं। हम खान अब्दुल ग़फ़्फ़ार खाँ का हृदय से स्वागत करते हैं, सिर्फ़ उनके निजी साहस और हिम्मत के लिए नहीं बल्कि सरहदी प्रान्त के उन लोगों के लिए जिन्होंने हिंदुस्तान की आजादी की लड़ाई में उनके नेतृत्व में एक जबरदस्त हिस्सा लिया है। वह इस वक्त हमार बीच में हैं लेकिन, अब भी गवर्नमेंट के हुक्म के अनुसार उन्हें इस बात की आज्ञा नही है कि, वह आपने घर जा सके या अपने प्रान्त और पंजाब में प्रवेश कर सके। और उनके सूबे में अब भी कांग्रेस संस्थाएँ ग़ैर क़ानूनी हैं और अकसर उनके राजनैतिक कार्यों में रुकावटें डाली जाती हैं।

आपकी तरफ़ से मैं कामरेड एम० एन० राय का, जो हिन्दुस्तान की आज़ादी की लड़ाई के एक मँजे हुए सिपाही हैं, हृदय से स्वागत करता हूँ। कामरेड राय कई बरसों की जेल यातना के बाद बाहर आये हैं। हालाँ कि उनका स्वास्थ्य खराब हो गया है, फिर भी वह एक ताजे दिल व दिमाग़ से आज़ादी की पुरानी लड़ाई में हिस्सा लेने के लिये उत्सुक है, जिस लड़ाई का अन्त उस समय तक सम्भव नहीं है जब तक उस में पूर्ण सफलता न प्राप्त हो।

पिछले कुछ महिनों में प्रकृति हमारे साथ बहुत कठोर रही है। अकाल, बाढ़ और बारिश की कमी से कितने ही सूबे पीड़ित हुए हैं, और करोड़ो आदमियों को उनके कारण सख्त तकलीफ़ें उठानी पड़ी है। अभी हाल ही में दक्षिण के गंतूर जिले में एक ज़बरदस्त तूफ़ान आया था जिससे लोगों का बहुत बड़ा नुकसान हुआ है। हजारों बेघर-बार हो गये; और उनकी तमाम चीजें बरबाद हो गयीं। हम लोगों को इसके लिये शिकायत ही क्या हो सकती है, क्योंकि प्रकृति पर अभी तक मनुष्य का पूरा अधिकार नहीं हुआ है। लेकिन मनुष्य की बुद्धि बार बार आने वाली बाढ़ के स्पष्ट कारणों के दूर करने का उपाय निकाल

ही सकती है। और इसी तरह बारिश की कमी से होने वाले नुकसानों से बचने का और प्रकृति की मार से पीड़ित जनता की सहायता का प्रबन्ध भी किया ही जा सकता है। लेकिन आज कल हमारे हाकिमों का इस तरफ़ ख्याल ही नहीं जाता, और हम लोग हमेशा बरबादी के किनारे पर रहते हैं। अगर कोई भी धक्का लगा तो बिलकुल गिर जाते हैं।

हम सब लोग अिस वक्त सूबों की अेसेम्ब्ली के उस चुनाव में लगे हुए हैं, जो जल्द हि होने वाला है। कांग्रेस की तरफ़ से एक हजार से ज्यादा उम्मीदवार खड़े किये गये हैं। हालाँ कि इस चुनाव के काम ने हमको कई तरफ़ से बाँध रखा है लेकिन जैसा मैंने आपसे लखनऊ में कहा था अब भी मैं दुनिया के ज़बरदस्त नाटक और खेल की तरफ़ आपका ध्यान आकर्षित करूँगा। हमारे भाग्य का निर्णय भी उसी पर अवलम्बित है, और जिस तरह दूसरे मुल्कों का फ़ैसला दो विरोधी शक्तियों और विचारों पर मुनहसर है, उसी तरह हमारे भाग्य का फ़ैसला भी उन्हीं पर निर्भर है। मैं आपको फिर याद दिलाऊँगा कि हमारी राजनैतिक या सामाजिक स्वतंत्रता की समस्या संसार की समस्याओं का एक अङ्ग है। अपनी दशा और समस्याओं को समझने के लिए हमें दूसरों कि दशा और परिस्थिति को भी समझना ही होगा।

पिछले आठ महीनों में भी अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में काफी परिवर्तन हुआ है। स्थिति दिन--पर--दिन गम्भीर होती जाती है। तरक्की के तरफ ले जाने वाली और यह पीछे खींचने वाली ताकतें, आपस में बराबर टकरा रही हैं, और यह साफ नजर आता है कि हम एक महान् युद्ध की ओर तेज़ी से बढते चले जा रहे हैं। युरोप में फैसिज्म जोरों से आगे बढता गया है और उसकी चीखती हुई आवाज प्रतिदिन ज्यादा सुनाई देती है। अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति में उसने एक अजीब गुंडेशाही को स्थान दिया है।

उसकी बुनियाद ही घृणा, हिंसा और लडाई की प्यास है, और अगर यह समय पर रोका न जाय तो उसका लाजिमी और स्वाभाविक परिणाम एक विश्वव्यापी युद्ध होगा। हम लोगों ने अभी ऐबीसीनिया को इसका शिकार होते देखा है और आज स्पेन की खूंरेजी और भयानक परिस्थिति को हम देख रहे हैं।

फैसिज्म कैसे इतनी तेजी से तरक्की कर गया, जिसके कारण आज यूरोप और सारी दुनिया उसके आतंक से डरती है, इसे अच्छी तरह समझने के लिए ब्रिटेन की विदेशी नीति पर नजर डालनी होगी। ऊपरी तौर से यद्यपि ब्रिटेन इस सम्बन्ध में कुछ अपनी नीति बदलता रहा है और साफ़ साफ़ क़दम उठाने में हिचकता है, लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि उसकी सहानुभूति और सहायता हमेशा नाजी जर्मनी के साथ रही है। ब्रिटेन और जर्मनी के समुद्र सम्बन्धी समझौते ने फ्रांस को इटली से समझौता और दोस्ताना करने के लिए मजबूर कर दिया और इटली को ऐबीसीनिया की ज़िन्दगी खतम करने का पूरा मौका मिला। यह समझौता ऐबीसीनिया के विनाश का कारण हुआ। व्यापारिक बहिष्कार द्वारा इटली पर दबाव डालने की बहुत चर्चा हुई, लेकिन उसके पीछे अंग्रेज़ी हकूमत की यह कोशिश थी कि कोई असली दबाव न पड़ने पावे। और जब अमेरीका तक ने इटली को तेल न भेजने की बात कही जिससे इटली का लड़ाई लड़ना कठिण हो जाता तब ब्रिटेन ने ऐसा करने से साफ़ इन्कार

किया। उसको यह ज़्यादा मंजूर था कि ऐबिसीनिया के लोगों पर बम के गोले बरसाये जायँ और लड़ाई रोकने के लिये राष्ट्रसंघ की ओर से जो क़ायदे बनाये गये हैं उन्हें तोड़ दिये जायँ। यह सच है कि ब्रिटिश गवर्नमेन्ट हमेशा राष्ट्रसंघ और उसके द्वारा दुनिया में लड़ाई रोकने की बातें करती रही है। लेकिन उसके तमाम काम उसकी बातों को गलत ठहराते रही हैं। इसका स्वाभाविक परिणाम यही हुआ कि ब्रिटिश गवर्नमेन्ट ने फ़ैसिस्ट हमलों को सफल बनाने के लिए एक खुला हुआ मैदान छोड़ दिया। नाज़ी जर्मनी पग पग पर राष्ट्रसंघ को अपमानित करने और मौजूदा यूरोप के संगठन को गिरा देने की कोशिश करता रहा, और ब्रिटेन की नेशनल गवर्नमेन्ट बराबर बच बच कर इस नीति का दबी जबान में समर्थन करती रही।

ऐसे मौके पर स्पेन का सवाल अन्तिम परीक्षा के स्वरूप में दुनिया के सामने आया। वहाँ एक प्रजातंत्र गवर्नमेन्ट थी और उसके विरुद्ध फ़ैसिस्ट लोगों ने बलवा किया और इस बलवे में उन्होंने विदेशी फ़ौजों की मदद ली। युरोप की परीक्षा का यह अच्छा समय था और वही हुआ जिसकी उम्मीद थी। इस मौक़े पर भी फ़ैसिस्ट ताक़तों ने बाग़ियों की मदद की, और राष्ट्रसंघ वाले देशों ने महज़ दखल न देने की निकम्मी नीति का एलान किया। इस नीति का नतीजा और क्या होनेवाला था अलवा इसके की, स्पेन की प्रजातन्त्र गव्हर्नमेन्ट को बाग़ियों के दबाने का पूरा मौक़ा न मिले।

इस तरह हम ब्रिटिश साम्राज्यवाद को फ़ैसिस्ट मुल्कों की ओर बराबर झुकते हुए पाते हैं, हालँ कि अपनी पुरानी आदतों के अनुसार इसकी बातों में प्रजातंत्रवाद और पवित्रता की झलक दिखाई पड़ती है। शब्दों और कार्यों में इसी अन्तर के कारण ही ब्रिटेन की इज्ज़त और सम्मान यूरोप और दुनिया में गिर गया है, और आज इस सम्मान में जितनी त्रुटियां आ गई है उतनी पहले शायद कभी नहीं रही।

वर्तमान समय में संसार में इस तरह दो बड़ी शक्तियाँ एक दूसरे पर हावी होने की कोशिश में हैं। एक वह जो प्रजातंत्रवाद और सामाजिक स्वतंत्रता के लिए यत्नशील हैं, और दूसरी वह जो इस आज़ादी को साम्राज्यवाद और फ़ैसिज़्म के ज़रिए कुचल देना चाहती हैं। इस संघर्ष और जद्दोजेहद में ब्रिटेन मजबूरन प्रतिक्रियावादी शक्तियों का साथ देता है, हालाँ कि ब्रिटेन की जनता साधारणतया इससे सहमत नहीं है। और आज यह संघर्ष साफ़ साफ़ अधिक भयानक रूप में स्पेन में दिखलाई पड़ रहा है, और वह जिस शक्ल में खत्म होगा उस पर दुनिया की शान्ति और युद्ध का बहुत कुछ दारोमदार होगा। और यह भी स्पष्ट हो जायगा कि फ़ैजिज्म और साम्राज्यवाद शक्तिशाली होते हैं, अथवा उनका अन्त निकट है। इस दौड़ में हमें कई सबक़ मिलते हैं, और इसमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह नजर आती है कि मौजूदा प्रजातंत्रवाद दुनिया की बुनियादी कश्मकश या दो विरोधी शक्तियों को सुलझाने और तमाम दुनिया की आवश्यकता के अनुसार सामाजिक और आर्थिक दशा सम्बन्धी जानदार और प्रभावशाली परिवर्तन करने में असफल रहा है। इस असफलता के कारण वे वहीं हैं जो परिवर्तन चाहते हैं, और उसके लिये कोशिश करते हैं। वे तो प्रजातंत्रवाद का स्वीकार ही करते हैं, लेकिन जब यह तरीका बडे बडे पूँजीपतियों, और उनके हितों तथा दूसरे ऐसे वर्गों के खिलाफ जाता है तो ये वर्ग प्रजातंत्रवाद के तरीकों को मानने के लिए

स्वागतकारिणि समिति की प्रथम बैठक. उसमें मंत्री श्री. देशपांडेजी विवरण सुना रहे हैं।

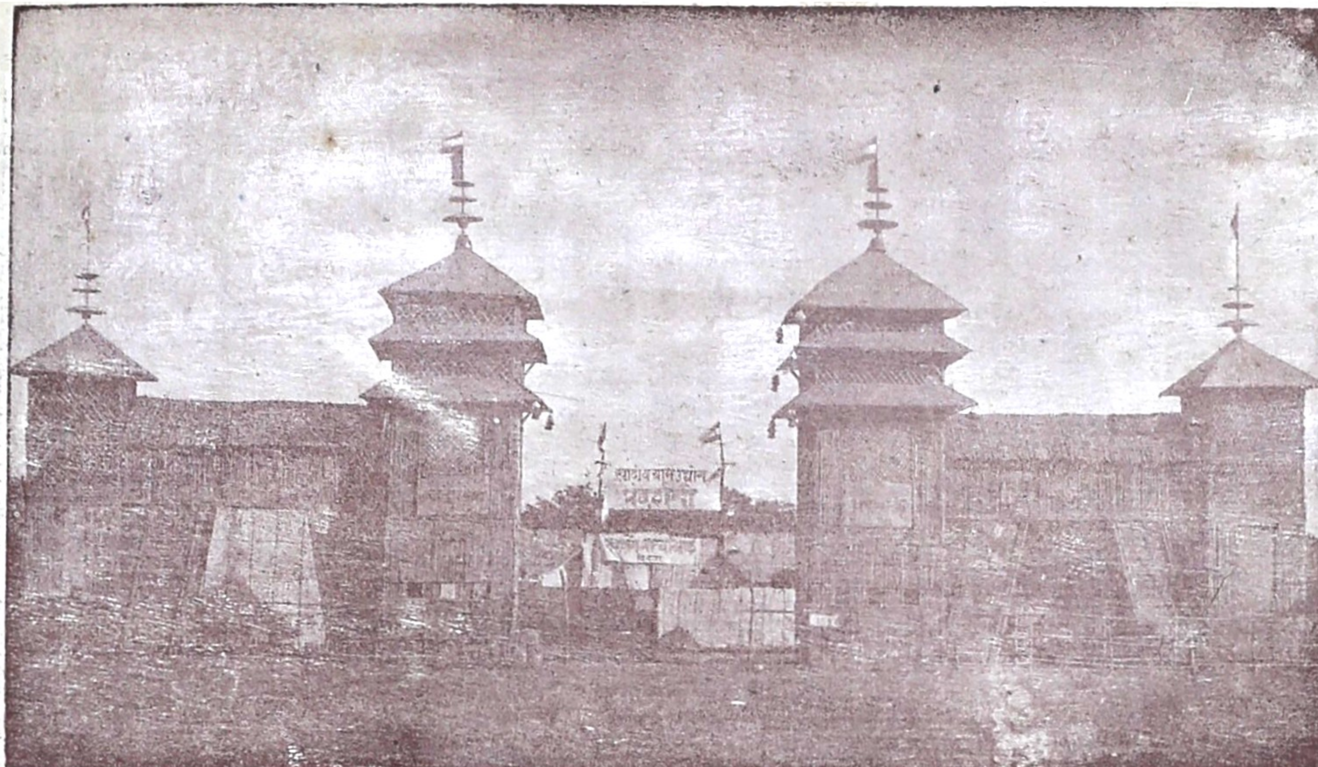

‘ खादी-ग्रामोद्योग ’ प्रदर्शनीका “ सार्वजनिक काका ” नामक प्रवेशद्वार.

तैयार नहीं होते और उनसे विद्रोह कर बैठते हैं। उनके प्रजातंत्रवाद का मतलब यह है कि उनकी ही हकूमत और शक्ति कायम रहे, और उनके स्वार्थ सुरक्षित रहें। जब उनकी आशाएँ पूरी नहीं होती तो, उनके लिये प्रजातंत्रवाद निरर्थक चीज हो जाती है, और वे इनका अन्त करने के यत्न में लग जाते हैं। इस यत्न में उन्हें सही या गलत, कोई तरीका अख्तियार करने में संकोच नहीं होता। इसके लिये वे राष्ट्र-विरोधी शक्तियों और विदेशों से सहयोग करने के लिये भी तैयार हो जाते हैं। अपने को देशभक्त और राष्ट्रीय कहते हुये भी, दूसरे देशों की फौजों की सहायता से अपने भाई बन्दों के खून बहाने, और उन्हें गुलाम बनाने में वे जरा भी संकोच नहीं करते।

आज स्पेन की लड़ाई हमारी ही लड़ाई है। हम लोग इस लड़ाई को केवल एक बहारी मित्र के ही नाते नहीं देख रहे हैं। हम इसके लिये वैसे ही चिन्तित हैं जैसे स्पेन के राष्ट्रवादी। स्पेन के बहादुर मर्द और औरतों के दुःखजनक नाश को देखकर हम कभी कभी निराशा से मर जाते हैं, और हमारी सारी आशाओं पर पानी फिर जाता है, लेकिन कठिन से कठिन निराशा और मुसीबत की हालत में, वह चिनगारी जो स्पेन की स्वतंत्रता का चिन्ह स्वरूप है, तेज़ी से चमक उठी है जिससे हमें विश्वास होता है कि अन्त में उसकी ही विजय होगी। इतने स्त्री और पुरुष, लड़के लड़कियों का बलिदान, अवश्य स्पेनिश प्रजातंत्रवाद और और स्वतंत्रता को जीवित रखेगा। हम स्पेन में भी दूसरे ही देशों की तरह आज़ादी के खम्भों के गिरने और टूटने के दुःखजनक दृश्य देखते हैं कि, किस प्रकार वे अकसर हाथों से निकल गये हैं और फिर वापस लिये गये हैं; बरबाद हुए हैं और फिर बनाये गये हैं।

मेरी इच्छा है और आप में से बहुतों की भी यही इच्छा होगी कि, हम लोग केवल ज़बानी सहानुभूति ही, चाहे वह कितनी ही हार्दिक क्यों न हो, न जाहिर करें, बल्कि अमली तौर पर अपने स्पेन के साथियों को कुछ मदद पहुँचावें। वहाँ की पीड़ित ज़नता की दुःख भरी आवाज हम लोगों तक पहुँची है, और हम लोग उनकी इस अपील पर खामोश नहीं बैठ सकते। लेकिन बावजूद इसके मैं नहीं समझ पाता कि, हम लोग अपनी इस बेबसी की हालत में कर ही क्या सकते हैं, जब कि हम लोग खुद एक साम्राज्य के विरुद्ध, जो हमें जकड़े और शिथिल किये हुये है, लड़ने में लगे हुये हैं।

इसलिये जैसा मैने पहली बार जोर दिया था, अब भी इस बात पर जोर दूँगा कि, हम लोगों को दुनिया की हर एक घटनाओं में एक रिश्ता कायम करनें की कोशिश करनी चाहिये, और तब ही हम आज की दुनिया की पेचीदा तस्वीर को कुछ समझ सकेंगे, इस आश्चर्यजनक विरोध में भी एकत्व देख सकेंगे। जैसे सुदूर पूर्वीय देशों में लगातार संघर्ष जारी है, वैसे ही यूरोप में भी हर जगह एक उथल पुथल सा है। पैलेस्टाइन में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के विरुद्ध अरबों की जो लड़ाई है, वह इस बड़े संसार का उतना ही आवश्यक अङ्ग है, जितना भारत की स्वतंत्रता की लड़ाई। प्रजातंत्रवाद और फैसिज्म, राष्ट्रीयता और साम्राज्यवाद, समाजवाद आर क्षीण होता हुआ पूँजीवाद, विचारों की दुनिया में एक दूसरे से टकराते हैं, और यह संघर्ष मानसिक पैरावे से बाहर आकर व्यावहारिक संसार में हकूमत हासिल करने के प्रयत्न में, वोट के बजाय बन्दूक और तोप की शरण लेता है। दुनिया की बदलती हुई हालत में एक नये राजनैतिक

और आर्थिक स्वरूप की जरूरत महसूस होती है, और अगर यह नया परिवर्तन नहीं होता तो संघर्ष और टक्कर लाज़िमी है। धीरे धीरे लोगों के दिमाग़ में यह क्रान्ति का स्वरूप अख्तियार करती है, और फिर यह प्रवृत्ति अमली जामा पहनती है और इस परिवर्तन में जितनी देर होती है उतना ही इस टक्कर का स्वरूप गम्भीर होता जाता है। समाज में जो साम्य और समता होनी चाहिये थी, वह इस समय नहीं है। और उसके अभाव में जब कि उसकी पूर्ति कोई और दूसरी चीज़ नहीं कर रही है, इसलिए यह स्वाभाविक है कि, चारों तरफ़ तनज्जुली और तबाँही नज़र आवे। यह तबाही जो आज दुनिया की एक आम बात हो रही है एक बड़े युद्ध को हर रोज़ नज़दीक लाती जाती है। फ़ैसिस्ट मुल्कों को छोड़कर दूसरें सब मुल्क और वहाँ के निवासी, इस बडी लड़ाई के ख्याल से डरते और घबराते हैं तब भी, इसकी तैयारी में तेज़ी से मुस्तैद हैं, और इस तैयारी में विवश होकर कभी वे एक ओर और कभी दूसरे के साथ मिलते हैं और समझौता करते हैं। बीच के लेग सदा शंकित कभी इधर और कभी उधर रास्ता तलाश करते हुये असली चीज़ों से दूर, परेशानी की हालत में मिट रहे हैं। बीच के रास्ते पर चलने वाले उदारदल की क़िस्मत का यही हाल हर जगह रहा है, हालाँ कि हिदुन्तान में जो अपने को उदार दल वाले (लिबरल) कहाते हैं, और दूसरे लोग भी जो उन्हीं के ढंग पर सोचते और चलते हैं, इस ख्याल से धिरे हुए हैं कि उनका ही तरीक़ा ठीक है, और वे इस अंधकार से बाहर निकलने की बात सोचते ही नहीं।

पिछले आठ महिनों में मैंने अपने इस विशाल देश में काफ़ी दौरा किया। मुझे फिर कष्ट और पीड़ा से बेचैन भारत की जनता को देखने का मौक़ा मिला। उनके नेत्रों से यही इच्छा प्रगट होती थी कि, वे अपनी ज़बरदस्त तकलीफ़ों के बोझे से किसी तरह छुटकारा पाना चाहते हैं। यही हमारी मुख्य समस्या है। और दूसरे सवाल इसके बाद आते हैं और उस असली सवाल तक हमें सिर्फ़ ले जाते है। इस बड़ी समस्या को हल करने के लिये हमें हिन्दुस्तान को साम्राज्यवाद के कठोर बन्धन से छुटकारा दिलाना होगा, जो उसे लगातार अपने फायदे के लिय इस्तेमाल कर रहा है। लेकिन यह आज का साम्राज्यवाद है क्या ? यह सिर्फ़ एक देश का दूसरे देश पर कब्जा मात्र ही नहीं है, बल्कि जिसमें एक मुल्क दूसरे मुल्क पर फ़ौज और दूसरी शारीरिक शक्तियों द्वारा अपना अख्तियार कायम रखता है। इसकी जड़ और गहराई तक गई हुई है। वर्तमान साम्राज्यवाद पूंजीवाद का एक स्वाभाविक परिणाम है, और इससे अलग नहीं किया जा सकता। यही कारण है कि हम अपनी समस्याओं को उस वक्त तक नहीं समझ सकते जब तक कि हम साम्राज्यवाद और समाजवाद के असली मानी को न समझ लें। बीमारी अपना स्थायी घर कर चुकी है। उसको निर्मूल करने के लिये उग्र एवं क्रान्तिकारी साधनों की आवश्यकता है, और वह साधन है समाज का साम्यवादी सिद्धान्तों के आधार पर नये सिरे से संगठन। आज हिन्दुस्थान में हमारी लड़ाई का वर्तमान ध्येय समाजवाद नहीं है क्योंकि समाजवाद के सिद्धान्तों को कार्यरूप में लाने से पहले हमें अभी बड़ी लम्बी मंज़िलें तय करनी है। लेकिन हम आज समाजवाद की चर्चा इस लिये करते हैं कि, उसमें हमें अपनी समस्याओं को समझने, सुलझाने का सही रास्ता ढूँढ़ने, और आगे आने वालोंको, स्वराज्य का ठीक ठीक अर्थ को जानने में सहायता मिले। अपनी समस्याओं का ठीक ठीक ज्ञान न होने से हमारे कार्यों के अव्यवस्थित, निरुद्देश्य और प्रभावहीन होने का भय है।

कॉंग्रेस का वर्तमान ध्येय, हिन्दुस्थान में पूर्ण प्रजातंत्र की स्थापन करना है। और वह प्रजासत्तात्मक राज्य क़ायम करने के लिये लड़ रही ह, समाजवाद के लिये नहीं। कांग्रेस साम्राज्यवाद की दुश्मन है। और हमारी वर्तमान राजनैतिक और आर्थिक अवस्था में बहुत बड़ा और व्यापक परिवर्तन करने की कोशिश कर रही है। मेरी राय में घटनओं का स्वाभाविक विकास ही हमें समाजवाद की ओर ले जायगा, क्योंकि अपनी तमाम बीमारियों का हमें वही एक इलाज जान पड़ता है। लेकिन हमारे लिये आज सबसे ज़रूरी और अहम मसला पूर्ण राजनैतिक स्वाधीनता और प्रजातंत्रात्मक राज्य क़ायम करने का है। और इसीलिये कांग्रेस को दुनिया की तमाम प्रगतिशील शक्तियों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर संसार की शान्ति के लिये कोशिश करनी चाहिये। अभी हाल में यूरोप में शान्ति कायम करने के लिये जो आन्दोलन हो रहा है उसके सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण घटना हुई है। विश्व-शान्ति स्थापित करने वाली कांग्रेस ने गत सितम्बर महीने में, अपने ब्रूसेल्स के अधिवेशन में, ऐसी जमायतों को जो जनता के हित के लिये क़ायम हैं, इकठ्ठा किया और शान्ति क़ायम करने के आन्दोलन में इस तरह एक प्रभावशाली रहनुमाई की। इससे हम युद्ध का अन्त कर सकेंगे या नहीं, यह तो कोई बतला नहीं सकता, लेकिन विश्व-शान्ति के सभी पुजारी इसका स्वागत करते हैं, आर इसकी सफलता के लिए शुभाशायें प्रगट करते हैं। ब्रूसेल्स में श्री. बी. के. कृष्ण मेनन ने निहायत खूबी से हमारी कांग्रेस की नुमायन्दगी की, और अपने कार्यों की जो रिपोर्ट उन्होंने भेजी है, वह आपके सामने पेश की जायगी मुझे भरोसा है कि संसार की शान्ति के लिए जो स्थायी संगठन क़ायम हो रहा है, उसके साथ कांग्रेस अपना पूरा सहयोग प्रगट करेगी और अपनी पूरी शक्ति से इस महान् कार्य में योग देगी। ऐसा करने में हमें अपनी स्थिति बिल्कुल साफ़ कर देनी चाहिये। हमारे लिये, और हमारी राय में, सारे संसार के लिये शान्ति का प्रश्न साम्राज्यवाद से अलग नहीं किया जा सकता, और महायुद्ध का मूल कारण दूर करने के लिये साम्राज्यवाद का अन्त लाज़ीमी है। हमें सन्धियों की पवित्रता में विश्वास है; लेकिन जिन सन्धियों के बनाने में हिन्दुस्तानियों का हाथ नहीं, उनको मंजूर करने के लिए हम उस समय तक मजबूर नहीं हो सकते, जब तक़ कि हम खुद यथा समय उनको स्वीकार न करलें। अपनी मौजूदा हालत में हम शान्ति क़ायम रखने के लिये यह आवश्यक समझते है कि, युद्ध का विरोध किया जाय। कांग्रेस ने पहले ही से एलान कर दिया है कि हम साम्राज्यवादी युद्ध में हिस्सा नहीं लेंगे। और हम ऐसे युद्ध के लिये हिन्दुस्तान की जनशक्ति अथवा दूसरे साधनों का दुरुपयोग नहीं होने देंगे। इस तरह की हर एक कोशिशों का हम विरोध करेंगे।

'राष्ट्र-संघ' बहुत नीचे गिर गया है। और अब शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो इसे शान्ति क़ायम रखने का साधन मानने को तैयार हो। हिन्दुस्तान में इसके लिये कोई उत्साह नहीं है, और हिन्दुस्तान की राष्ट्र-संघ की सदस्यता निरा तमाशा है क्योंकि प्रतिनिधियों का चुना जाना अंग्रेज़ी सरकार के हाथ में है। हमें एक वास्तविक राष्ट्र-संघ की स्थापना के लिये कोशिश करनी चाहिये, जिसका आधार जन-तंत्र हो और जो वास्तव में जनता का संघ बन सके। लेकिन अगर कमज़ोर और प्रभावहीन होते हुये भी मौजूदा राष्ट्र-संघ, सच्ची शान्ति के लिये एक उचित संस्था बनाई जा सके तो हम इसका स्वागत करेंगे।

इस अन्तरराष्ट्रीय आधार को ख्याल में रखते हुये अब हमें अपनी राष्ट्रीय समस्याओं पर विचार करना चाहिये। १९३५ का नया भारतीय शासनविधान हमारी आँखों में खटक रहा है। हमारी गुलामी का यह नया दस्तावेज़ बिल्कुल हमारी इच्छा के ख़िलाफ़ है और ज़बरदस्ती हमारे सिर मढ़ा गया है, और अब हम इसके मातहत चुनाव की लड़ाई लड़ने की तैयारियों में लगे हुये हैं। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के चुनाव सम्बन्धी घोषणापत्र में यह बात अच्छी तरह बता दी गई है कि हम इस चुनाव की लड़ाई में क्यों आ पड़े, और किस तरह हम इस कार्यक्रम को पूरा करना चाहते हैं। मैं इस घोषणापत्र को आपकी मंजूरी के लिये पेश करता हूँ। हम काउन्सिलों और असेम्बलियों में जो ब्रिटिश-साम्राज्यवाद के साधन हैं, सहयोग करने के लिये नहीं जा रहे है। हम उसका विरोध करने और उसका अन्त करने के लिये ही वहाँ जा रहे हैं। हिंदुस्थान में अपनी शक्ति को मज़बूत करने, और हिन्दुस्तानियों के हित को कुचलने के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जितनी भी कोशिशें होंगी, इन सभाओं में उनका हर तरहसे मुक़ाबिला करना ही हमारा ख़ास उद्देश्य होगा। कांग्रेस की नीति का यही मूल आधार है, और कोई भी कांग्रेस का सदस्य या उम्मेदवार इसे भूल नहीं सकता। जो भी हम करेंगे वह इसी नीति के दायरे में महदूद होगा। धारा सभाओं में हम विधेयात्मक मार्ग या शुष्क सुधारवाद के मार्ग का अनुसरण करने नहीं जा रहे हैं।

इन चुनावों में कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ भी जहाँ तहाँ देखी गई हैं, जिनके अनुसार किसी न किसी प्रकार बहुमत प्राप्त करने के लिये समझौता किये गये हैं, यह रुख बहुत ही खतरनाक है। इसे तुरन्त रोकना चाहिये। चुनाव का उपयोग तो खास तौर पर इसी लिये होना चाहिये कि जनता कांग्रेस के झंडे के नीचे आवें। करोड़ों वोटरों और असंख्य गैर-वोटरों के पास समान रूप से कांग्रेस का सन्देश पहुंचे, और जनता का आन्दोलन दूनी तेजी से आगे बढ़े। धारा सभाओं में बड़ा बहुमत भी हमारे लिए बिल्कुल बेकार होगा अगर हमें जनता की सामूहिक आन्दोलन की शक्ति का आधार प्राप्त नहो। प्रतिक्रियावादी व्यक्तियों अथवा संस्थाओं के सहयोग पर कायम बहुमत तो, हमारे उद्देश्य ही का घातक होगा।

नये शासन विधान का मुक़ाबिला करने के साथ ही साथ उसके परिणाम स्वरूप हमें बालिग़ मताधिकार से बनी हुई एक, "विधान-निर्माण-सभा" (कान्स्टिट्यूएंट असेंबली) के लिये अपनी स्पष्ट माँग पर भी ज़ोर देना है। हमारी मौजूदा कांग्रेस नीति की यह बुनियादी चीज़ है। और हमारी चुनाव की लड़ाई का भी यही आधार होना चाहिये। हमें यह भी समझ लेना चाहिये कि, यह असेंब्ली ब्रिटिश गवर्नमेन्ट से अथवा ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ समझौते से मिलनेवाली चीज़ नहीं होगी। इसमें तभी कोई असलीयत की उम्मीद की जा सकती है, जब जनता का आवाज इसके साथ हो, जन समूह की सुसंगठित शक्ति इसका आधार हो; और स्वतंत्र-भारत का शासन विधान बनाने का इसे अधिकार हो। इन चुनावों के जरिये और आगे चलकर दूसरे उपायों से हमें जन समूह की इस शक्ति को पैदा करना होगा

कांग्रेस की कार्य-समिति ने इस कांग्रेस से सिफारिश की है कि, यह चुनावों के बाद शीघ्र ही एक ऐसी सभा की योजना करे जिसमें प्रान्तीय धारा सभाओं के सभी काँग्रेसी मेम्बर और दूसरे ऐसे लोग जिन्हें कार्य-समिति में शरीक करना मुनासिब समझे, मिलकर "विधान-निर्माण-सभा" की माँग पेश करें और यह तय करें कि नये शासन विधान की संघात्मक

(फ़ेडरल) योजना का शुरू किया जानेपर, हम तमाम मुनासिब तरीक़ों से किस तरह रोके जा सकते हैं। ऐसी सभा जिसमें अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सभी सदस्य होंगे जिससे अवश्य हमारी लड़ाई की शक्ति को केन्द्रीभूत करने में समर्थ होगी, और धारा सभाओं के अनुसार तथा उनके बाहर भी हमारी कार्यशैली का समुचित निर्देश करेगी। इसके ज़रिये हम धारा सभाओं के कांग्रेसी मेम्बरों को प्रान्तीयता की भावना से बचा सकेंगे, और उन्हें छोटी मोटी प्रान्तीय समस्याओं की उलझनों में फंसने से भी रोक सकेंगे। इससे उन्हें परिस्थितियों का ठीक ठीक अन्दाज करने की शक्ति प्राप्त होगी, और उनमें अखिल भारतीय अनुशासन (डिसिप्लिन) की भावना भी जाग्रत होगी। बडे पैमाने पर जनता के सामने कोई व्यापक कार्यक्रम रखने में भी हमें इससे बडी मदद मिल सकती है।

"विधान-निर्माण-सभा" की माँग के अलावा हमारा सबसे जरूरा काम शासन सुधार की संघात्मक (फ़ेडरेल) योजना का विरोध करना होगा। नया शासन विधान बिलकुल निकम्मा तो है ही, लेकिन इतनी निकम्मी चीज इसमें दूसरी नहीं, जितनी कि यह फ़ेडरेशन, और इस लिये हमे अपनी सारी शक्ति लगाकर इसे खतम करना है, और इस तरीके से समूचे शासन विधान का अन्त करना है। चाहे कुछ भी परिणाम हो, हमें भारतीय जागीरदारों के स्वेच्छाचार ओर अधिकार से भी उतनी ही घृणा है जितनी कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद की स्वार्थमय नीति से, और हमें किसी एक के भी आधिपत्य में रहना हरगिज मंजूर नहीं हो सकता। भारत में ब्रिटन के लम्बे शासन का यह एक दिलचस्प और शिक्षाप्रद परिणाम है, कि आज, जब कि कहने में तो वह धीरे धीरे मुरझा रहा है परन्तु वास्तव में उसकी शक्ति तमाम प्रतिक्रियावादी और विरोधी शक्तियों के इसके साथ जुड़ जाने से, पहले से भी बढ़ गई है, और उसकी यह कोशिश है कि जो भी थोडे बहुत अधिकार हमें मिलने वाले हैं वह इन जागीरदारों को मिलें।

यह संघात्मक योजना हमारे लिये विचारणीय है। हमें संघ-व्यवस्था के, उसूलन खिलाफ नहीं है। यह बहुत सम्भव है कि स्वतंत्र भारत एक संघात्मक राष्ट्र हो किन्तु किसी भी दशा में बहुत कुछ केन्द्रीय शासन आवश्यक है। लेकिन मौजूदा संघ-शासन जो जबरदस्ती हमारे सर मढा जा रहा है हमारी गुलामी का एक ऐसा संघ है जो हमारे राजनैतिक और सामाजिक अधिकारों को देश में सबसे पिछडे हुए लोगों के हाथों में सौंप देता है। मौजूदा भारतीय रियासतों का जन्म उन्नीसवी सदी के आरम्भ में उस समय हुआ जब कि भारत में ब्रिटिश शासन का पैर भी ठीक ठीक नहीं जम पाया था। इन रियासतों के स्वेच्छाचारी शासकों के साथ होने वाली वे सन्धियाँ भी इसी समय से आरम्भ होती हैं, जो आज हमारे सामने ऐसे पाक इकरारनामों के रूप में रखी जाती है, जिन्हें हमें छू भा नहीं सकते।

यहाँ पर हिन्दुस्तान की उस समय की अवस्था का उसी समय के यूरोपीय परिस्थिति से मुक़ाबला करना मुनासिब जान पड़ता है। उस समय यूरोप में अनेक बड़ी और खुद-मुख्तार छोटी रियासतें थीं जिनके शासक स्वेच्छाचारी थे। शाही विशेषाधिकारों और पाक सुलहनामों की बहुतायत थी। गुलामी की प्रथा भी जायज़ थी। पिछले १०० वर्षों में यूरोप की ऐसी कायापलट हो गई है कि, उसका पहचानना असम्भव सा है। अनेक क्रान्तियों और

तब्दीलियों का यह नतीजा हुआ है कि, तमाम छोटी छोटी रियासतें मिट गई हैं और अब बिरले ही राजा रह गये हैं। गुलामी की प्रथा भी नहीं रही। वर्तमान उद्योग--धंधों की बहुत बड़ी उन्नति हो गई है। और प्रजा--सत्तात्मक संस्थाओं की तरक्की के साथ साथ वोट देने के अधिकार का दायरा बराबरा बढ़ाया गया है। कुछ देशों में तो फ़ासिस्ट अधिनायकत्व ने इन का स्थान ले लिया है। पिछड़े हुए रूस ने एक लम्बी छलाँग ली है और वहाँ पंचायती प्रजातंत्रात्मक समाजवादी राज्य क़ायम करके उसने ऐसा आर्थिक संगठन किया है, जिससे उसे चारों दिशाओं में आशातीत सफलता मिली है। दुनिया बराबर बदलती ही गयी है और आज भी एक व्यापक परिवर्तन की उत्सुकता से बाट जोह रही है। लेकिन भारतीय रियासतों में कोई तब्दीली नहीं हुई। वे अब तक ज्यों की त्यों अपनी जगह क़ायम हैं, और इस नित्य परिवर्तनशील संसार में वे आज की भी दुनिया को १९ वीं शताब्दी की आँखों से देख रहे हैं। रियासतों की पुरानी शर्तें और सुलहनामें पवित्र जरूर हैं, जो जनता या उनके प्रतिनिधिओं द्वारा नहीं, बल्कि उनके स्वेच्छाचारी शासकों के साथ तय हुई थीं।

यह एक ऐसी बात है जिसे कोई राष्ट्र अथवा जाति कभी बरदाश्त नहीं कर सकती। हम १०० वर्षों से भी पुराने उन समझौतों को स्थायी और अमिट नहीं मान सकते। भारतीय रियासतों को स्वतंत्र भारत की शासन योजना के अनुकूल बनना होगा, और वहाँ के निवासियों को भी, जैसा कि कांग्रेस एलान कर चुकी है, वही व्यक्तिगत, नागरिक और-प्रजातंत्र मूलक अधिकार प्राप्त होंगे जो कि दूसरे भारतीयों को प्राप्त हैं।

अभी कुछ ही दिनों से सन्धियों और रियासतों के सर्वाधिकारों की चर्चा होने लगी है। इसके पहले इनके बारे में शायद ही कुछ सुनाई पड़ा हो। देशी राज्यों के राजाओं को साम्राज्य-योजना में अपना ठीक स्थान मालूम था; और ब्रिटिश सरकार का जो उनपर अधिकार और प्रभुत्व था वह साफ़ दिखाई पड़ता था। लेकिन हिन्दुस्थान में राष्ट्रीय आन्दोलन की बढ़ती हुई लहर ने इन शासकों को एक नक़ली अहमियत देदी। ब्रिटिश गवर्नमेंट हमारे देश के राष्ट्रीय विचारों को दबाने के लिये इनकी सहायता और सहारे पर अधिक भरोसा करने लगी। राजाओं और उनके मंत्रियों ने इस परिवर्तन को शीघ्र ही भाँप लिया और उन्होंने इससे फ़ायदा उठाना शुरू किया। वे ब्रिटिश गवर्नमेन्ट और भारतीय जनता को एक दूसरे से भिड़ाकर दोनों से लाभ उठाने की कोशिश में काफ़ी कामयाब भी हुए। उन्हें उसमें आशातीत सफलता मिली है, और संघ-योजना (फ़ेडरल स्कीम) में इसीलिये उन्हें असाधारण अधिकार भी मिले हैं। अपने स्वेच्छाचार के अधिकार को पूरी तरह सुरक्षित रखते हुए, जिस पर रियासतों के अलावा देश के दूसरे हिस्से का कोई अख्तियार नहीं है, उन्होंने इस हिस्से पर ये अधिकार प्राप्त किये हैं। आज हम उन्हें ऐसी बातें करते हुए सुनते हैं कि, गोया वह आज़ाद हैं और संघ योजना में शरीक़ होने के लिए अपनी शर्तें रख रहे हैं। वाइसराय का जो उनपर अधिकार है उसे भी खतम करने की चर्चा हो रही है ताकि ये रियासतें, दुनिया में अपने इसी नग्न रूप में अकेली ही क़ायम रहें, और अपनी इच्छा के अनुसार जो कारवाई उचित समझें बिल्कुल स्वतंत्र होकर करें। उन को बदलने, या हटाने का कोई विरोधात्मक तरीक़ा न हो। इससे भी एक खतरनाक चीज़ कुछ बड़ी रियासतों में सेना का सुचारु रूप से संगठित होना है।

इस तरह नए शासन-विधान की संघ-योजना का हमारे लिये महज़ ख्याली चीज नहीं बल्कि एक अहम और निहायत ज़रूरी मसला है, जिस पर हमारी आज़ादी की लड़ाई और हमारे भाग्य का दारोमदार है। हमें नए कानून के खिलाफ़ आन्दोलन करते हुए इसे अपना मरक़ज़ बनाना होगा। इस संघ-योजना को हमें समूल तोड़ना है।

इस शासन-विधान को खतम करना ही हमारी नीति का उद्देश है, ताकि हमें नए सिरे से अपना विधान बनाने का मौका रहे। ऐसे लोग जो असेम्बली, काउन्सिल आदि को ही किसी परिवर्तन का जरिया समझते हैं उनका कहना है कि, इस विधान का खातमा करना सम्भव नहीं हैं; और कानून में संरक्षणों और बन्धनों की ऐसी काफ़ी गुंजाइशें मौजूद हैं कि, वहां अच्छा विरोधी बहुमत होते हुए भी गवर्नमेन्ट अपना काम चला सकती है। हमें यह प्रतिबन्ध अच्छी तरह मालूम है, और कानून को ठुकरानेके अनेक कारणों में से यह खास है। हमें यह भी खूब मालूम है कि हमारे रास्ते में रुकावटें डालने के लिए कहीं कहीं असेम्बली के अतिरिक्त कौंसिलें भी मौजूद हैं। असेम्बलियों में यह वैधानिक अड़चनें डाल सकते हैं, हम काम को क़तई रोक सकते हैं, हम साम्राज्यवाद की मशीन के चलने में रुकावटें डाल सकते हैं, लेकिन इनसे बचने का हमेशा ही एक न एक रास्ता उन्हें मिल जाता है। शासन–विधान को हम केवल इस सभाओं के द्वारा ही नहीं खतम कर सकते। उसके लिए बाहर जनता का व्यापक आन्दोलन लाज़िमी है। और यही खास वजह है कि, हमेशा हमें यह याद रखना चाहिये कि जनता की सामूहिक शक्ति और संगठन और उनके द्वारा किये हुये यत्नों और कार्यों पर ही हमारी आज़ादी की लड़ाई निर्भर है।

धारा सभाओं के सम्बन्ध में कांग्रेस की नीति बिल्कुल साफ़ है। केवल एक ही मसले पर अभी तक उसका कोई निश्चय नहीं हो सका है; और वह मंत्रिपद ग्रहण करने के सम्बन्ध में है। सम्भव है कि इस मसले पर चुनाव के बाद ही कोई फ़ैसला हो सके। लखनऊ में मैंने आपसे यह कहने का साहस किया था कि, मेरी राय में मंत्रिपद ग्रहण करना क़ानून को अस्वीकार करने की नीति का खण्डन करना होगा, और अपने उस रास्ते को छोड़ना होगा जो हमने १९२० से स्वीकार किया है और तब से लगातार जिसको मानते आए हैं। लखनऊ के बाद से कांग्रेस ने चुनाव के घोषणापत्र में अपनी स्थिति को और भी साफ़ कर दिया है और इस बातका एलान कर दिया है कि हम धारा सभाओं में शासन-सुधार में किसी भी प्रकार का सहयोग करने नहीं वरन् उसका विरोध करने के लिए जा रहे हैं। इससे पदग्रहण के सम्बन्ध में किसी फ़ैसले पर पहुँचने के लिए हमारी नीति की एक सीमा भी मुक़र्रर हो जाती है। और जो पदग्रहण के समर्थक हैं उन्हें यह साफ़ साफ़ दिखलाना होगा कि विधान से असहयोग करने का, और उसे खतम करने का वही सब से अच्छा रास्ता है।

मेरी राय में तो कांग्रेस की नीति के सम्बन्ध में जैसा कि उसके प्रस्तावों और चुनाव के घोषणपत्र से साफ जाहीर है, हम लोग एक ही नतीजे पर पहुँचते हैं कि, हमें पद और मंत्रित्व से कोई भी सरोकार नहीं रखना चाहिये। इस रास्ते से अलग होने के मानी उस नीति को ही बदलना होगा। इसको इसी दृष्टि से देखा जायगा कि भारतीयों से अपना स्वार्थ सिद्ध करने वाली जो नीति ब्रिटिश साम्राज्यवाद की है उसके साथ सहयोग दे रहे हैं; और

विरोध तथा हिचकिचाहट के साथ हम कानून के बुनियादी असूलों को मंजूर कर रहे हैं, तथा ब्रिटिश साम्राज्यवाद द्वारा उग्र विचार रखने वाले समुदाय के दमन के घृणित कार्य में हम उसका योग दे रहे हैं। किसी और आधार पर पदग्रहण करना बिल्कुल नामुमकिन है। और यदि किसी क़द्र मुमकिन भी हो तो उसका नतीजा फौरन ही यह होगा कि, वहाँ का काम बिल्कुल रुक जाय और संघर्ष उत्पन्न हो। हम सर्वथा काम में रुकावट तथा अड़चनें पैदा करने में घबड़ाते नहीं; बल्कि हम उसका स्वागत करते हैं। लेकिन ऐसी हालत में हमें पद लेकर सहयोग करने की बात नहीं वरन् उसके विपरीत रुकावटें डालकर विधान के अन्त करने की ओर अपना ध्यान रखना चाहिये।

यह भी धारणा है कि अगर हम लोग पदों को नहीं स्वीकार करते तो, इस बात का भय है कि दूसरे उनको ले लेंगे और वे हमारी स्वतंत्रता के आन्दोलन में बाधक सिद्ध होंगे। लेकिन अगर हम बहुमत में हुये तो, उनकी ओर की इस बाधा को हम रोक सकेंगे, तथा हम मंत्रियों को चुने जाने ही नहीं देंगे। अगर हमारा बहुमत नहीं हो सका तो मंत्रित्व हमें तब ही मिल सकता है जब हम गैर-कांग्रेसी मेम्बरो से किसी तरह का समझौता करें। यह नीति हमारे ऊँचे लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुये ख़तरनाक साबित होगी और कांग्रेस के ओदशानुसार ऐक्ट के समाप्त करने की नीति के विरुद्ध जावेगी। चाहे हम बहुमत में हों या न हो, पर असल बात देखने की यह होनी चाहिये कि, हमारे पीछे संघठित रूप से जनता की शक्ति है या नहीं। विना इस शक्ति के कोई भी बहुमत धारा सभाओं में बहुत कुछ न कर सकेगा, और अगर उग्र और अग्रसर रहने वाला अल्पमत भी हो, जिसके पीछे संघठित जनता की सहायता हो, तो वह, ऐक्ट के चलने देने को कठिन बना सकता है।

"विधान-निर्माण-संघ" और संघ-योजना (फ़ेडरल स्कीम) को कांग्रेस ने अपने कार्यक्रम में सब से पहले रखा है। अगर हम पदों के चक्कर में पड़ जायँगे तो किस तरह हम इन आवश्यक चीजों पर ज़ोर दे सकेंगे, और इन दोनों के विरुद्ध जनता का आन्दोलन खड़ा कर सकेंगे?

हमारे सामने बहुत महत्वपूर्ण काम हैं। भारतीय तथा अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में बड़ी बड़ी समस्याओं को हल करना है। सिवाय हमारी महान संस्था कांग्रेस के, इनको कौन सुलझा सकता है? क्योंकि इसी संस्था ने अपने पचास साल की लगातार कोशिश और त्याग से भारत के करोडों की ओर से बोलने का अद्वितीय अधिकार प्राप्त कर लिया है। क्या काग्रेस, उनकी आशाओं का आईना, उनकी आजादी का प्रेरक, आर उनका मजबूत हाथ नहीं बन गई है? और वही स्वतंत्रता को, न देने की इच्छा रखने वालों के हातों से छीनेगी। इसका प्रारम्भ बहुत छोटे रूप में कुछ थोडे से साहसी लोगों के द्वारा हुआ था, लेकिन उस समय भी ऐतिहासिक घटना का यह एक प्रभावशाली अङ्ग थी और देश के लोगों की इसके प्रति सदभावना थी। हरसाल कांग्रेस बढती ही गई, और जब जब इसने आगे बढने का निश्चय किया तो तबतब आपस के मतभेदों का सामना भी किया, लेकिन उनके कुछ सदस्यों ने ही उसको आगे बढने से रोका। परन्तु आगे बढने की इच्छा बहुत प्रबल थी, नीचे से इसके लिये अधिक जोर लगाया गया और हालाँ कि कुछ ऐसे लोगों ने, जो इस बदलती हुई हालत के अनुकूल अपने को नहीं

बना सके, हमारा साथ छोड दिया। दूसरे लोग बहुत बडी संख्या में कांग्रेस में शरीक हुये। हिन्दुस्थान की यह एक जबरदस्त प्रचार करने वाली संस्था बन गई। लेकिन जो लोग इस में सम्मिलित हुये उनका संगठन बहुत कमजोर था और किसी पैमाने पर कोई शक्तिशाली या नियम पुरस्सर काम कर सकना इनकी ताक़त के बाहर था। गांधीजी के आते ही किसानोंका समूह काँग्रेस में आया, और नागपुर में १९२० के अधिवेशनमें जो इसका नया विधान उनकी सलाह से बनाया गया, उसने कांग्रेस संगठन के अनावश्यक फैलाव को कम किया और प्रतिनिधियों की संख्या आबादी क आधार पर सीमित कर दी। इस प्रकार सम्मिलित रूप से नियम पुरस्सर काम करने की शक्ति इसे प्राप्त हुई। इस के बाद ही सारे देश भर में आन्दोलन हुआ और फिर अगले सालों में कई बार आन्दोलन चलें। लेकिन इसी सफलता और प्रतिष्ठा के कारण कांग्रेस में अक्सर ऐसे लोग आगये जिन्होंने विधान की बुराइयाँ बढ़ा दीं। कांग्रेस का संगठन अनावश्यक ढंग पर बहुत बड़ा हो गया था जिसके कारण इस के काम में कुछ शिथिलिता आगयी थी और इस में इस बात की भी सम्भावना थी कि, अपने अपने ज़िले, तहसील आदि में कुछ खास जमायत या समूह कांग्रेस के नाम पर खुद फ़ायदा उठालें। दो साल हुये गांधी जी के ही सलाह से कांग्रेस विधान में फिर परिवर्तन किये गये। उससे एक बात यह हुई कि अब कांग्रेस सदस्यों की संख्या के आधार पर प्रतिनिधियों की संख्या नियत की जाती है। इस तब्दीली ने हमारे कांग्रेस चुनाव में एक वास्तविकता पैदा कर दी है और हमारे संगठन को भी मजबूत बना दिया है। लेकिन अब भी कांग्रेस की देश में जितनी प्रतिष्ठा और सम्मान है उसके अनुसार हमारा संगठन अभी बहुत पीछे है। और हमारी कमीटियों में साधारण काम करने वालों तथा जनता से बिल्कुल कटे हुये रह कर अर्थात् हवा में काम करने की प्रवृत्ति आ गयी है।

इसी कमी को दूर करने के लिए लखनऊ कांग्रेस में जन साधारण का सम्पर्क (मास कॉन्टैक्ट) सम्बन्धी प्रस्ताव स्वीकृत हुआ था। लेकिन जो कमेटी इनके लिए नियत की गई थी उसने अपनी रिपोर्ट अभी तक नहीं पेश की है। उस प्रस्ताव में जितनी बातें सम्मिलित थीं उनसे यह कहीं ज्यादा बडा सवाल है। इसके द्वारा कांग्रेस के वर्तमान संगठन को ही बदलने का विचार है ताकि कांग्रेस एक अधिक मजबूत, संगठित, और नियम पुरस्सर काम करनेवाली संस्था बन सके। कोई कार्य तब ही कुछ असर पैदा कर सकता है जब वह जनता की संगठित शक्ति द्वारा किया जाय, और कांग्रेस की शक्ति का एक मात्र कारण यही रहा है कि उसने जनता को दृष्टि में रख कर काम किया और इसी लिए उसके दिए हुए कार्यक्रम पर जनता अमल करने के लिए सदा अग्रसर रही। हालाँ कि कांग्रेस का दृष्टिकोन जनता का ही दृष्टिकोन है, लेकिन कांग्रेस के संगठन में उसकी छाया नहीं दिखलाई पडती, और यह हम लोगों की कमजोरी का एक खास कारण है। हम लोगोंने कांग्रेस चंद ऊँचा जमायत के कहे जाने वाले लोगों के हाथों से निकलकर बहुसंख्यक मध्यमश्रेणी के और फिर जनता के हाथों में जाते देखा है। ज्यों ज्यों जनता की ओर हमारा झुकाव हुआ है या होता जा रहा है, त्यों त्यों इस संस्था का स्वरूप बदला है और बदलता जा रहा है; क्यों कि संस्था की आर्थिक बुनियाद पर ही उस के राजनैतिक स्वरूप का अधिकतर संगठन होता है।

हम लोग पहले से ही जनता को आधार स्वरूप मानकर काम करने के लिए बाध्य हैं; क्योंकि बिना इसके हममें कोई शक्ति और ताक़त रह ही नहीं जाती। इनको हमें अपने संगठन में और अधिक स्थान देने की आवश्यकता है, ताकि हम अपने साधारण कांग्रेस मेम्बरों को स्वयं कार्यों के चलाने और ठोसकाम करने का अधिकार प्रदान कर सकें और उन्हें दिन प्रतिदिन के कामों में हिस्सा लेने का अवसर प्राप्त हो। दूसरे शब्दों में हमें कांग्रेस को अभी और अधिक प्रजातन्त्रवाद की ओर ले जाना है।

इस प्रश्न का दुसरा पहलू वह है जिसपर पिछले साल बहस भी हुई थी कि किसानों, मज़दूरों, और ऐसी दूसरी संस्थाओं को जिनका उद्देश्य देश की स्वतन्त्रता हो, काँग्रेस के साथ शामिल किया जाय और इस प्रकार काँग्रेस को देश के समस्त साम्राज्य-विरोधी शक्तियों की एक व्यापक संस्था बना दी जाय। इस समय भी स्थिति यह है कि, काँग्रेस के सदस्यों की बहुत बड़ी संख्या इन्हीं वर्गों से आती है। क़रीब क़रीब ७५ फ़ी सदी सदस्य किसानों में से ही बनते हैं। लेकिन इसके खिलाफ़ यह दलील पेश की जाती है कि इस प्रकार के प्रतिनिधित्व को बढ़ाने से काँग्रेस में किसानों और मज़दूरों को आवश्यकता से अधिक शक्ति प्राप्त हो जायगी। इस प्रस्ताव का इसी डर से विरोध किया गया है कि काँग्रेस शायद इन नए आगन्तुकों से भर जाय और उनका बहुमत हो जाय, और यह भी सम्भव है कि राजनैतिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोग भी किसी समय इसमें शक्तिशाली हो जायँ। यह प्रश्न हम लोगों की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। और यदि इस सम्बन्ध में कोई निर्णय किया जाय तो इससे मौजूदा परिस्थिति में कोई अन्तर नहीं पड़ता। यह हमारी सदिच्छा का एक शुभ चिन्ह मात्र होगा क्योंकि ऐसी संगठित मज़दूर और किसानसभायें देश में बहुत कम हैं जो काँग्रेस में शामिल होने से कोई विशेष लाभ उठा सकेंगी। उनकी काँग्रेस पर हावी हो जाने की कोई सम्भावना नहीं है और यह हर हालत में आसानी से बचाया भी जा सकता है। मेरा विचार है कि अभी या आगे चल कर काँग्रेस ऐसी संस्थाओं को प्रतिनिधित्व देने के लिये बाध्य होगी, और यह उस के लिये लाभदायक भी होगा। संस्थाओं के अपने संगठन में सम्मिलित करने के सम्बन्ध में काँग्रेस के लिये ऐसे नियम बना देना आसान है जिससे झूठे, नक़ली, और सिर्फ़ चन्द रोज़ जिन्दा रहने वाली, तथा अवांछनीय संस्थाओं या सभाओं को काँग्रेस से लाभ उठाने से रोका जा सके। काँग्रेस में शरीक होने वाली सभायें कितने प्रतिनिधि भेज सकें इसकी भी एक सीमा नियत कर दी जाय। मेरा ख्याल है कि संयुक्त प्रान्तीय काँग्रेस कमेटी ने कुछ इस तरह की सिफ़ारिश भी की है।

हमारा मुख्य लक्ष्य यह है कि हम देश की समस्त साम्राज्य-विरोधी शक्तियों को एक सूत्र में बाँध सकें। काँग्रेस ही ऐसी संस्था है जो ऐसी सब शक्तियों को मिलाकर काम करने का मौका पहले भी देती रही है, और इस समय भी दे रही है। और स्वभावतः इस प्रकार सम्मिलित ढंग पर कार्य करने के लिये काँग्रेस को ही इसका आधार बनाना होगा। संगठित किसान और श्रमजीवियों का इसमें शरीक होना काँग्रेसको दृढ़ और तथा शक्तिशाली बनायेगा और हमें इसका स्वागत करना चाहिये। पिछले वर्ष की यह एक विशेषता रही कि उनका और काँग्रेस का सहयोग बढ़ता गया है। इस प्रवृत्तिको प्रोत्साहित करना चाहिये। भारत के लिये संगठित नीति का अवलम्ब परमावश्यक है। कांग्रेस के अन्दर साम्राज्य-विरोधी शक्तियाँ मौजूद

हैं। विचार और दृष्टिकोण में अन्तर होते हुये भी देश के लाभ के लिये जब जब अवसर आया है सबने मिलकर सदा सहयोग से काम किया है। यह हमारे बृहद् आन्दोलन की सजीवता और आपस के सहयोग का सुन्दर चिन्ह है। इसका मुख्य आधार साम्राज्यवाद का विरोध और पूर्णस्वतंत्रता है। इसकी तात्कालिन माँग "विधान-निर्माण-संघ" है जिसके द्वारा एक ऐसा प्रजातंत्रवादी राष्ट्र स्थापित हो, जिसमें राष्ट्र के सब राजनैतिक अधिकार जनता को सौंप दिये जायँ। इसका स्वाभाविक नतीजा यह होगा कि जो विदेशी फ़ौज यहाँ क़ायम है उसके लिये उस समय हमारे देश में कोई स्थान नहीं रह जायगा। उन्हें यहाँ से चले जाना होगा।

ये उद्देश्य हमारे सामने है लेकिन हम प्रतिदिन के प्रश्नों और समस्याओं को नज़र अन्दाज नहीं कर सकते। हमारी आँखों के सामने सदा रहने वाली ये वास्तविकताएँ घोर ग़रीबी और करोड़ों आदमियों की बेकारी जिनमें मध्यम श्रेणी के भी लोग पिस रहे हैं, बढ़ते हुये लकवे के मर्ज़ की तरह हमारे राष्ट्रीय जीवन पर बराबर आघात कर रही है। आज संसार दर्दनाक विरोधों से भरा हुआ है, लेकिन कहीं भी यह विरोध इतनी तीव्र मात्रा में नहीं है जितना हमारे देश में। एक तरफ़ दिल्ली की राजधानी है जो ब्रिटिश राज्य की शक्ति का एक प्रतिबिम्ब है और जहां हर तरह की शान और शौकत, सजावटें, और दुसरी फ़जूल खर्चियाँ पायी जाती हैं, उसके कुछ ही मील के फ़ासिले पर भारत के भूखे किसानों के मिट्टी के झोंपड़े खड़े हैं जिनकी आय से देहली के महल तैयार किये गये हैं; ऊँची से ऊँची तनख्वाहें और भत्ते दिए जाते हैं। रियासतों के राजा अपनी पीड़ित और दुखी तथा बदनसीब प्रजा के सामने अपने महलों की शान दिखाते और हर तरह का सुख भोग करते हैं। और इसके साथ ही अपनी संधियों तथा अपनी स्वेच्छाचारिता के नैसर्गिक अधिकारों की बातें करते हैं। और गवर्नमेंट ने यह नया ऐक्ट और विधान हमारे ऊपर इस लिये मढ़ा है कि यह इन उच्चत्तम और स्पष्ट विरोधों को आजन्म बनाए रक्खे और उसकी रक्षा करे, एकतंत्रवाद और साम्राज्यवाद के शोषण को सहूलियत से जीवित रहने का अवसर प्रदान करे।

जिस वक्त मैं यह भाषण लिख रहा था एक बड़ी रेल्वे की हड़ताल जारी थी। अरसे से रेल के कर्मचारियों में नौकरियों के कम होने और तनख्वाहों के घटने के कारण हलचल रही है, और उनके विरुद्ध गवर्नमेन्ट की सारी शक्ति है। कुछ दिन हुए बम्बई के नज़दीक अम्बरनाथ की दियासलाई के कारखाने में बड़ी दिलेरी और हिम्मत के साथ एक हड़ताल की गई थी जिसका मालिक एक विदेशी संघ था। लेकिन उस विदेशी ट्रस्ट को गवर्नमेंट की ओर से असाधारण मदद मिल रही थी। हमारे यहाँ के श्रमजीवियों को अब भी प्रारम्भिक अधिकारों को हासिल करना है। उनको इस ज़माने में भी अधिक से अधिक आठ घंटे के काम, बेरोज़गारों के लिए बीमे का प्रबन्ध, तथा जीविका भर के लिए मज़दूरी प्राप्त करने आदि बातों के निमित्त लड़ना है।

लेकिन इन सबसे गम्भीर और अत्यन्त आवश्यक प्रश्न किसानों का है, क्योंकि हिन्दुस्तान किसानों का ही देश है। इसी बात को दृष्टि में रख कर और कांग्रेस को, किसानों के अधिक समीप लाने के लिये ही हम किसी बड़े शहर में एकत्र न होकर यहाँ फ़ैज़पुर गाँव में कांग्रेस का अधिवेशन कर रहे हैं। लखनऊ कांग्रेस ने किसानों की समस्या पर बहुत

ज़ोर दिया था और प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों को किसानों की परिस्थिति के सम्बन्ध में कार्यक्रम तैयार करने का आदेश दिया था। यह काम अभी तक अपूर्ण है क्योंकि यह प्रश्न इतना विशाल और कठिन है कि इसके हल के लिए बहुत अच्छे तरीक़े और एक बड़े पैमाने पर खोज करने की ज़रूरत है। लेकिन इस प्रश्न के महत्व के कारण इस सम्बन्ध में कोई उपाय सोचने तथा रास्ता तय करने की जल्द से जल्द ज़रूरत है। लगान और मालगुजारी की वर्तमान प्रथा में मौलिक परिवर्तन करने और ग़ैर क़ानूनी वसूल्याबियों के बिल्कुल मिटा देने की माँगें अधिकांश प्रान्तों से आई हैं। खेती करने वाले कर्ज़े के बोझ से दबे और पिसे जा रहे हैं। इस कारण क़र्ज़े की कुल रक़म का एक अच्छा हिस्सा बिल्कुल माफ़ कर देने और कुछ समय तक के लिये क़र्ज़े की वसूल्याबी बंद कर देने की सर्वत्र आवाज़ उठायी जा रही है। पंजाब में किसानों की रक्षा के लिए क़र्ज़ा कमेटियों का संगठन हुआ है। ये सब तथा इनके अलावा और दूसरी भी माँगें बराबर पेश की जा रही हैं, और किसानों की सभाओं आदि के अवसर पर, उनकी अपार भीड़ इस बात का सबूत देती है कि वे अपना मौजूदा बोझ उठाने की क्षमता नहीं रखते। लेकिन इसमें बहुत सन्देह है कि यह समस्या छोटे छोटे और थोड़े थोड़े हिस्सों में पूरी की जा सकती है और किसनों के मौजूदा क़ानून में मौलिक परिवर्तन किए बिना हल हो सकती है। खेती सम्बन्धी वर्तमान बन्दोबस्त शिथिल और निर्जीव हो गया है; उसका क़ायम रहना मुश्किल है। इस ओर एक स्पष्ट क़दम उठाना उचित होगा कि राष्ट्र और किसान के बीच में जो श्रेणी है वह न रहे। और उसके बाद सहयोग तथा सामूहिक ढँग पर खेती करने का तरीक़ा अख्तियार किया जाय।

बड़े और छोटे पैमाने पर व्यापार, कारीगरी, और हुनर आदि की उन्नति पर ही वर्तमान खेती की दशा का सुधार अवलम्बित है। क्योंकि इनके ज़रिए करोड़ों बेरोज़गार लोगों को काम दिया जा सकता है, और लोगों के रहन-सहन की वर्तमान दयनीय दशा में कुछ उन्नति की जा सकती है। उद्योग धन्धे का सम्बन्ध, शिक्षा, घर बनाना, सड़क, सफ़ाई, औषधि आदि की सहायता तथा दूसरी सामाजिक सेवाओं आदि बहुत सी चीजों से है। कारीगरी और उद्योग आदि भी गवर्नमेंट की आर्थिक नीति के कारण उन्नति नहीं कर सकते क्योंकि वह साम्राज्यवादी व्यापारिक नीति के अनुसार हिन्दुस्तान में ब्रिटिश माल के लिये रियायतें दिलाती है और व्यापार सम्बन्धी सब बातों में लंदन शहर बड़े बड़े बैंकरों और धनाढ्यों के हित का ध्यान रखती है। रुपये के विनिमय का जो अनुपात था वह हमारे विरोध पर भी अभी तक जारी है। यद्यपि सारा हिन्दुस्तान इसका तीव्र विरोध करता है लेकिन पिछले पाँच साल से सोना बड़ी मिक़दार में तेजी से बराबर इंगलिस्तान चला जा रहा है। और नए ऐक्ट के अनुसार यह स्पष्ट है कि हम लोग कोई ऐसी चीज़ नहीं कर सकते जो वाइसराय या गवर्नर के ख्याल से ब्रिटिश व्यापार या व्यापारी हितों के विरुद्ध जाता है। पुराने सब क्रम बदल कर नवीन रूप धारण करते जायँ लेकिन ब्रिटेन के हित सुरक्षित रहें, उसमें कोई परिवर्तन न हो।

इस प्रकार एक समस्या दूसरी में उलझी हुई है। और ये सब कुल मिलकर जटिल गुत्थियों का वह स्वरूप तैयार करती हैं जिन्हें आज हिन्दुस्तान कहता है। क्या हम छोटे छोटे सुधारों या परिवर्तनों से इस बड़े सवाल का हल कर सकते हैं जब कि हर क़िस्म के अपने निजी

हितों को सुरक्षित रखने वाले हम लोगों के रास्ते में बाधा डालते और उन्नति को रोकते हैं। सारे देश भर के लिये एक ऐसे सुव्यवस्थित और सिलसिलेवार कार्यक्रम की आवश्यकता है जो इन तमाम विभिन्न राष्ट्रीय कार्यों को नज़र में रख कर तैयार किया गया हो और इन सबको एक दूसरे से इस प्रकार सम्बद्ध करे कि इस का प्रत्येक अङ्ग समस्त जनता के हित में आवद्ध हो। इस प्रकार की सुव्यवस्थित स्कीम के ही द्वारा जिसमें साहस और दूरदर्शिता से काम लिया गया हो, एक रास्ता निकल सकता है। लेकिन ऐसी कोई भी स्कीम स्वार्थ पूर्ण हितों की रक्षा और साम्राज्यवाद की शोषण नीति, और एकाधिकार की प्रवृत्ति की छाया में सफल नहीं हो सकती। उसके लिये सामाजिक और राजनैतिक स्वतंत्रता की आबोहवा की पूरी आवश्यकता होती है।

हम लोगों के लिये आज ये दूर की मंज़िलें हैं, लेकिन दुनिया में होने वाली घटनाओं की तेज़ी, सम्भव है जितनी जल्दी हम आशा करते हैं उससे पहले ही हमें वहाँ पहुँचा दे। पूर्ण स्वतंत्रता का तात्कालिक लक्ष्य अधिक नज़दीक और ज्यादा निश्चित है, और शायद यही कारण है कि हम एक बहुत बड़े हद तक उस दुखमय, निराश और मायूसी के शिकार होने से बच जाते हैं जिसके शिकार बहुतेरे यूरोप निवासी होते हैं।

हम लोग ज़ाहिरी कमजोर हैं लेकिन वास्तव में बात ऐसी नहीं है। हमारी जितनी ही शक्ति बढ़ेगी उतना ही ब्रिटिश साम्राज्य निर्बल पड़ेगा। चूँकी हम लोग राजनैतिक और आर्थिक दोनों दृष्टियों से दबे हुये हैं, हमारे नागरिक तथा राजनैतिक अधिकार छीन लिये गये हैं, हमारी सैकड़ों संस्था गैरकानूनी करार दी गई हैं, हजारों नौजवान स्त्री और पुरुष जेलों में पड़े हैं या नजरबन्द हैं, हमारी हर एक कारवाई की देख रेख झुंड के झुंड खुपिया वालों के द्वारा की जाती है, हमारे बोले हुए एक एक शब्द नोट किये जाते हैं ताकि बग़ावत के रोकने वाले कानून का उलंघन कोई न करें, इन सब बातों और इनके अलावा ऐसी ही दूसरी चीजों के कारण हम कमजोर नहीं हैं बल्कि ज़्यादा मजबूत हैं क्योंकि ये सब कड़ी सख्तियां हमारी बढ़ती हुई राष्ट्रीय भावना और शक्ति के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। युद्ध और क्रान्ति सारे संसार में मँडरा रही है और सभी राष्ट्र घबराहट की दशा में हैं। अगर युद्ध या और कोई ऐसी बड़ी नाजुक परिस्थिति पैदा हो तो हिन्दुस्तान का उस समय का निश्चय और नीति उसमें कुछ अंतर पैदा कर सकेगी। सफलता की कुंजी हमारे हाथ में है अगर हम उसे ठीक इस्तेमाल करें। हमारे दिलों में इस बात का अनुभव ज्यों ज्यों बढता है त्यों त्यों हमारी पराजय और निराशा की प्रवृत्ति दूर होती जाती है।

इस बीच में चुनाव हमारी सारी शक्ति लिये ले जा रहा है, और हमारा ध्यान उसी ओर लगा हुआ है। यहाँ भी गवर्नमेन्ट अफ़सरों और अहलकारों का दखल जारी है यद्यपि इससे वे इंकार करते हैं। बे-पढ़े लिखे वोटरों को पोशीदा तरीके पर वोट देने के अधिकार को भी बेकार बना देने का एक विचित्र यत्न जारी है। इस नीति को अमल में लाने के लिये संयुक्त प्रान्त खास तौर पर चुना गया है और रंगे हुये सन्दूक़ों का तरीक़ा जो अन्य जगहों में इस्तेमाल किया जायगा संयुक्त प्रान्त में इस्तेमाल करने के लिये मना कर दिया गया है। लेकिन हम लोग गवर्नमेन्ट के दबाव और विरोधी दलों के ऐसे यत्नों की अधिकता के होते हुए भी इस चुनाव में विजयी होंगे।

यह इस लम्बी यात्रा में एक छोटा सा ही क़दम होगा और हम लोग खतरे और कष्ट को अपना साथी बनाकर बढ़ते ही जायँगे। हमारी इस यात्रा में ये हम लोगों के पुराने साथी हो गये हैं और हम लोग उनके आदी हो गये हैं। जब हम इन पर अपना प्रभुत्व जमा लेंगे तो हमें यह भी मालूम हो जायगा कि विजय पर भी हम किस प्रकार अधिकार प्राप्त कर सकते हैं।

प्रधानः—अब मैं कुछ प्रस्ताव आप लोगों के सामने रखता हूं। जिनपर कोई व्याख्यान नहीं होंगे। यदि समय मिला तो एक दो प्रस्ताव ऐसे भी रखवे जायेंगे जिन पर कुछ बोला भी जायगा।

१ शोक प्रस्ताव

काँग्रेस का अधिवेशन निम्न लिखित महानुभावों की मृत्युपर शोक प्रकट करता है:— डॉक्टर एम्. ए. अन्सारी, श्री. अब्बास तैय्यबजी, डॉक्टर एम्. के. शम्भाशिवम्, श्री. बी. ओ. चिदम्बरम् पिले, श्री. कृष्णा कुमार मित्रा, ए. बी. सुबरमन अय्यर, पं. प्यारे मोहन दत्त और श्री. वामनराव नाईक।

प्रधानः—हमारा दस्तूर है कि ऐसे प्रस्ताव हम खड़े होकर पास करते हैं लेकिन खड़े होने में दिक़त हो जायेगी, इस लिये आप बैठे बैठे ही इस प्रस्ताव को पास करें और अपने हाथ उँचे कर के अपनी राय दें। राय लेने पर प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुआ।

प्रधानः—आप को खुशी होगी कि महात्माजी ने स्वीकार किया है कि कुछ शब्द यहाँ कहें। (महात्मा गान्धी की जय नारे लगाने लगे)

महात्मा गान्धीजी का अभिभाषण

महात्मा गान्धीजी ने हिंदी भाषा में बोलते हुये कहा:—"भाईयों और बहनों, बात यह है कि आप लोगों को अब थकान हुआ होगा, काम भी आप के सामने काफी है मेरी जबान से क्या सुनोगे ? । मेरे पास आप लोगों को सुनाने कोई नयी चीज़ नहीं है। जो कह सकता था वह आज ५॥ बजे प्रदर्शनी की जमीन पर कह भी दिया। इतना मजमुआ यहां इकट्ठा हो गया है कि मुझे तो बड़ी ही खुशी हुई। देहातों में काँग्रेस को ले जाना मेरा ही ख्याल था। मेरा ख्याल कई वर्षों से था कि अब काँग्रेस के अधिवेशन देहातो में करने चाहिये। इस से खर्च भी कम होगा और देहाती जनता काँग्रेस के अधिक निकट आयेगी। मेरा यह ख्याल कई वर्षों से था। महाराष्ट्र के कई साथियों ने कहा कि यह बात सहल है। वे मेरे पास आगये, मैंने उन्हें चन्द बातें सुना दीं। यह रिवाज़ पड़ गया है कि मैं तो बात कहता हूं ठीक है, मै कहता हूं ऐसी बात नहीं, ईश्वर का नाम लेकर इन लोगों ने अपने हाथों मोल लिया और बड़ी सुन्दरता के साथ इन्हों ने इस नगरी को बसाया है, इनके रास्ते में कितनी दिक़तें थीं इनके पास पैसे भी नहीं थे, आप देख रहे हैं कि जैसे दूसरे २ जगहोंपर लोग बहुत संख्या में इकट्ठे हो जाया करते थे वैसे यहाँपर भी लोग आ गये हैं, और मेरा तो ख्याल है कि जितने लोग यहाँ पर आये हैं उतने और कहीं नहीं आये थे। मुझे विश्वास नहीं था कि इतने लोग यहाँ पर आ जाएंगे। मैने इन से कहा था कि एक लाख मनुष्यों का यहाँ इन्तजाम रखना चाहिये। मुझे सुनाया गया है, दो लाख मनुष्य यहाँ थे, कुछ भी हो एक या दो लाख,

मुझे परवा नहीं रही, इतनी काफी तादाद मे यहाँ लोग आ गये हैं कि लोग डर गये हैं कि ३ दिनों तक काम कैसे चल सकेगा। खाने के लिये पहनने के लिये भी रही, लोगों को तो इतनी भी तमीज नहीं कि पाखाने की जगह पेशाब जायँ या पेशाब की जगह पाखाना जायँ। इतना न जानते हुए लोग रास्ता बिगाड देते हैं। आज तो भंगी भी है, अगर ज्यादा हालत हो जाय कि कहाँ तक कोई काम करें। यह भी हो जाय कि लोग बीमार हो जायँ अस्पताल हैं, लेकिन अस्पताल में भी कितने आदमियों की तीमारदारी हो सकती है। ऐसी हालत में यह सवाल हो गया है कि कलसे आगे अधिवेशन न किया जाय। हमें यहाँ जो अनुभव हो गया है वह काफी अनुभव है, वह कम नहीं है, हमारा तो यह विचार हो गया है कि हम हमेशा काँग्रेस को देहातों में ले जायँ। हम पचास वर्ष तक शहरों में मिले हैं, हेरफेर कर हम आये साल उन्हीं शहरों में मिले हैं। शहरों से तो काम होता ही है, क्यों न हम अबसे देहातों में मिलें? जो त्रुटियाँ आगई हैं उन्हें ठीक करने की जरुरत है। हमारे अन्दर कुछ शिथिलता सी भी आगयी है, उसे दूर करने की जरुरत है। मैं कह सकता हूं कि देहातों में कमसे कम पैसे चाहिये। इस वर्ष के खर्चे की जब जांच पड़ताल (ऑडिट) होगी, आप देखेंगे कि वह और स्थानों के मुकाबले में कितना कम है, लेकिन वह भी ज्यादा होगा। मैं तो कहता हूं कि पाँच हजार से ज्यादा खर्च न करें। यहाँ खर्चा ज्यादा हुआ हैं। जिस जगह हम बैठे हैं, उसका भी दाम देना पडा है। मैं तो कहता हूं कि काँग्रेस अधिवेशन करने के लिये जमीन मुफ्त मिलनी चाहिये। यहाँ तो मजबूरी हो गयीथी इसलिये इस जमीन का किराया देना पडा। यहाँ और भी कुछ दिक्कतें होगयी थीं। पानी पड़ गया था, जमीन को ठीक कराने में भी काफी खर्चा हो गया था। यहाँ शुरुआत में मुसीबत थी। ईश्वर का नाम यहाँ भी कायम रहने का निश्चय करलिया था। अगर आप सचमुच देहात में फैल जाना चाहते हो तो इकरार करके आओ कि काँग्रेस देहात में ही हो।

आपने प्रमुख साहब के मुख से ही बहुत सी बातें सुन लीं हैं, कॉन्स्टिटयुअन्ट असेंब्ली का नाम सुना, लम्बा चौडा अग्रेजी में नाम है। देहाती लोग न जाने, कि स्वराज्य कैसा है, कैसे वे इन्तजाम करते हैं, वे कैसे हैं, मुझ जैसा आदमी आया सुनाकर चला गया। प्रमुख, व सोशालिस्ट (साम्यवादी) भाई भी कहते हैं कि चवन्नी लेकर छोड देने से काम नहीं चलता, ५ रोज में काँग्रेस नहीं बनती। यहाँ काम करनेवाले दो चार नहीं बहुत हैं, आप जान गये हैं उनसे कितनी मदद मिल सकती है। वे समझते हैं कि काँग्रेसवाले सब हमारे हैं, आप इकरार करें कि जो काँग्रेस करेंगे देहात में करेंगे।

हिन्दुओं में कहते हैं कि कुम्भ होता है, उसका बडा फल होता है, हम उससे भी आगे जाना चाहते हैं यह कुम्भ ऐसा तीर्थ है कि इसमें सब आ सकते हैं। हम सब मिलकर उस बडे तीर्थ स्वराज्य की प्राप्ति के लिये यत्न करें, वह फैसला पंचायती तभी होगा कि उसमें सभी का सहयोग हो। यह लेना तो है। हम अच्छी तरहसे समझलें कि कैसे मुकाबला करना है। कॉन्स्टिटयुअंट असेंब्ली तबतक बैठ सकेगी जबतक स्वराज्य प्राप्त करने की शक्ति न होगी। यह शक्ति देहली व बंबईसे नहीं मिलेगी। इसमें तो पंगु की भी सहाय्यता से काम चलेगा। जब आप ताकत काफी करलेंगे तो स्वराज्य मिल सकेगा। ऐसी बात कहकर मैं चला जाऊं; सो मैंने सन १९१९ व सन १९२० में कहा था कि चर्खे

से स्वराज्य मिलेगा, शराब का त्याग, हिन्दू मुस्लिम प्रेम, छूवां छूत का न रहना क्या यह सब बातें टूट गयी, अगर नफरत दिलों में है तो स्वराज्य कभी नहीं आयेगा यही तो स्वराज्य की जड हैं। एक बूढे की भविष्यवानी है। अगर यह न हुआ तो स्वराज्य कभी नहीं आनेवाला है।

प्रधानः—..अब मैं सभापती की हैसियत से कुछ प्रस्ताव रक्खूंगा। '

२ सार्वदेशिक शान्ति सम्मेलन

यह काँग्रेस श्री. वी. के. कृष्णा मैनन की सार्वदेशिक शान्ति सम्मेलन पर दिया हुआ रिपोर्ट पर विचार करने के बाद, उनके इस कार्य में हमारे प्रतिनिधि रूप में हिस्सा लेने के काम की, सराहना करती है। यह शान्ति सम्मेलन के उद्देश्यों से पूर्णतया सहमत है और यह विश्वास रखती है कि दुनिया में शान्ति तब ही हो सकती है जब कि लड़ाई के कारणोंको हटा दिये जायें और इस आवश्यक काम के लिये यह काँग्रेस अपना पूरा सहयोग देने के लिये तैय्यार है। यह काँग्रेस साफ कह देना चाहिती है कि लड़ाई का खास कारण साम्राज्यवाद है और दुनिया में शान्ति तब ही हो सकती है जब यह हटा दी जाये। प्रधानजी को इस सम्बंध में कार्य करने का अधिकार दिया जाता है, जो आवश्यक हो।

यह प्रस्ताव प्रधानजी की ओर से रक्खा गया और सर्व सम्मति से पास हुआ।

३ बरमा

यह काँग्रेस अखिल भारतीय काँग्रेस कमेटी को आदेश करती है कि, वह बरमा का भारत से राजनैतिक विच्छेद होने के कारण, यह विचार करें कि काँग्रेस के विधान में कोई तबदीली की जाये या नहीं। इन दोनों देशों का भाग वर्षों समता के नाते एक जगह जुडा है। वह और यह वर्षों तक ब्रिटिश साम्राज्य के खिलाफ स्वराज्य के लिये एक साथ लड़े हैं। राजनैतिक विच्छेद जो इस समग्र बरमा की अधिक जनता की इच्छा के खिलाफ किया जा रहा है उससे यह नहीं हो सकता कि हमारे पुराने सम्बंध में कोई कमी आ जाये, और हमारी संयुक्त लडाई में कमी आ जाये। बरमी लोगों से पूछ ताछ करने के पश्चात् यह निश्चय करना चाहिये कि बरमा का स्थान काँग्रेसी विधान में कहां हो, और इस काम के लिये वर्किंग कमेटी अपने किसी प्रतिनिधी को बरमा भेजे। यदि विधान में जहां तक बरमा से सम्बंध है, यदि कोई तबदीली करनी हो तो अखिल भारत वर्षीय काँग्रेस कमेटी करलें और उस पर अमल भी कर लें।

यह प्रस्ताव प्रधानजी की ओर से रक्खा गया और सर्व सम्मति से पास हुआ।

४ स्पेन

इस काँग्रेस ने, स्पेन में जो युद्ध हो रहा है उसे बड़ी सहानुभूति के साथ अवलोकन किया है। यह युद्ध स्पेन की जनता और कुछ फौजी लोगों में जिन की मदद के लिये बाहर के देशों के किराये के सिपाही और फैसिस्ट लोगो की ताकतें काम कर रही हैं। काँग्रेस महसूस करती है कि यह युद्ध जो स्वतन्त्रता व फैसिस्ट लोगों के बीच में हो रहा है दुनिया के भविष्य

आचार्य श्री० विनोबाजी के द्वारा तिलक-नगर का आधारस्तंभ खडा किया जा रहा है. तिलक-नगर के विश्वकर्मा श्री० रामदास गुलटीजी (बाएं तरफके)

" खादी-ग्रामोद्योग " के उद्घाटन के समय पर म. गांधीजी पण्डितजी के साथ ' ग्रामोद्योग ' के विषय में वार्तालाप कर रहे हैं.

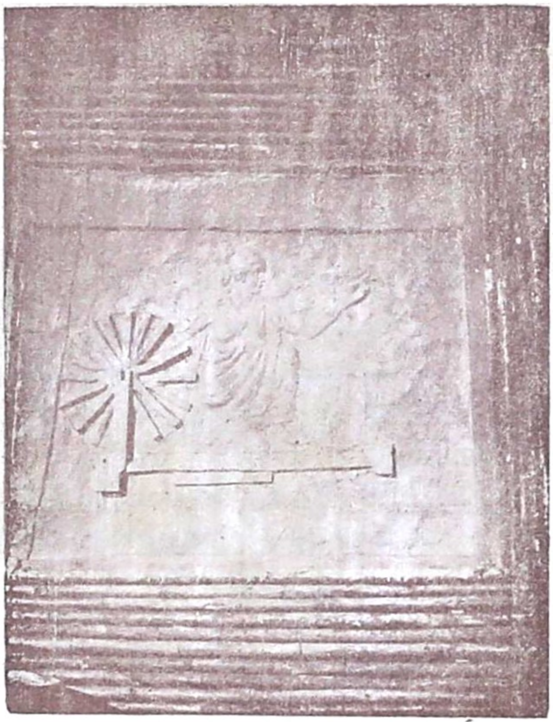

प्रदर्शिनी के प्रवेशद्वार के उपर की मिट्टीसे बनाई हुई कारिगरी.

स्वयंसेविकाएं अपने कामपर जाते हुए का दृश्य.

पर बडा असर डालेगा, और साम्राज्यवाद तथा भारत पर भी इसका असर होगा। इस युद्ध में अंग्रेज सरकार की दखल न देने की नीति रही है। उसे यह काँग्रेस आश्चर्य से देखती है, इस नीति के कारण स्पेन की सरकार के रास्ते में बहुतसी बाधायें खडी होगई हैं, परंच बागियों को जो फैसिस्ट शक्तियों से मदद पा रहे हैं सहाय्यता मिली है। यह काँग्रेस भारत की जनता की ओर से स्पेन की जनता को अपना साधुवाद भेजती है और उनकी स्वतन्त्रता की लडाई के लिये उनके साथ सहानुभूति प्रगट करती है।

यह प्रस्ताव प्रधानजी की ओर से रखखा गया और सर्व सम्मती से पास हुआ।

५ वर्जित स्थान

काँग्रेस का मत है कि वर्जित तथा निम वर्जित और चीफ कमिश्नरों के सूबे बनाने हैं, जिसमें ब्रिटिश बिलोचिस्तान को भी शामिल करना है, जो पहली जनवरी सन १९३७ से बन जायेंगे, जिनका क्षेत्रफल २०७९०० बर्ग मील है जिन में लगभग १३० लाख मनुष्य रहते हैं, इसका का अर्थ यही है कि भारत की जनता को और भागों में बांट दिया जाये और उनके साथ न्यायपूर्ण वह एक तरह का बरताव न किया जावे, जिससे देश में रहनेवालों के हृदयों में स्वतंत्रता का भाव एक साथ पैदा न होसके।

कांग्रेस का पुनः यह मत है कि इन वर्जित या अर्धवर्जित स्थानों के बनाने का यही मतलब है कि ऐसे स्थानों के खनिज पदार्थ और जंगलों की पैदावार पर अधिक कबजा रह सके और वहाँ के रहनेवालों को भारत में दूसरे स्थानों पर रहनेवालों से अलग रखखा जा सके ताकि उन्हें आसानी से दबाया जासके और उनको चूसा जासके।

अिस काँग्रेस का मत है कि प्रजाराज्यतंत्रानुवर्ती और स्वयं शासित संस्थाओं के जैसी समानता हिन्दुस्तान के सारे विभागोंके लिये विना भेद भाव के स्वीकृत की जाय। यह प्रस्ताव भी प्रधानजी की ओर से रखखा गया और सर्वसम्मती से पास हुआ।

६ स्वाभाविक आपत्तियां

कांग्रेस ने बड़े दुःख के साथ अवलोकन किया है कि हमारे देश में पिछले वर्ष बहुत सी स्वाभाविक आपत्तियां आयी हैं, और बाढ सूखा व अकाल व तूफानों के कारण हमारे बहुतसे देशवाशियों पर आपत्तियां आयी हैं, जो बेरोजगारी और गरीबी के कारण पहले से ही बुरी दशा को पहुंचे हुए है। कांग्रेस उन सब लोगों के साथ सहानुभूति प्रकट करती है, जो इनके शिकार हुए हैं, और उनकी सराहना करती है जिन्होंने इसका मुकाबिला किया है। यह उन व्यक्तियों तथा गैरसरकारी संस्थानों की सराहना करती है जिन्होंने उनकी सहाय्यता की और उन्हें इस मुसीबतसे बाहर निकलनें में सहायता की। कांग्रेस यह अनुभव करती है कि गव्हर्नमेंट ने इन बाढ इत्यादि के लिये, कोई वैज्ञानिक जांच पडताल, कारण ढूंढने के लिये नहीं की हैं, क्यों कि यह अब आये दिन जाते ही रहते हैं, जब कि बहुत कुछ हदतक इनको रोका जा सकता है, कि पानी एक स्थान पर एकत्रित होने से रोका जा सकता है। पानी को एक स्थान पर एकत्रित होने से रोका जाय जैसे रेल की सडकों पर जगह २ जैसे बंध बांधे है जैसे बांधे जाय जिससे कि पानी स्वतन्त्रता से आ जा सके।

कांग्रेस का मत है कि इन आपत्तियों से जो यातना एं आती हैं उनको रियासत की और से रोकने का प्रबन्ध किया जाय, जैसे लगान, महसूल और पानी का कर कम करके जिन स्थानों पर यह भिन्न २ प्रकार की आपत्तियाँ आई हैं वहाँ लगा देना चाहिए, यहाँ का लगान कम किया जाय जो स्थान ऐसे हैं कि जहाँ अधिक मात्रा में इनका प्रकोप नहीं हुआ है, वहीं भी लगान में माफी की जाय और कृषि लोन किसानों को दिया जाय, बिना सूद के कर्ज दिया जाय, कम सूद पर कर्ज दिया जाय और उनकी हरप्रकार से सहाय्यता की जाय, जिस से वहाँ के लोग अपने जीवन को फिर नये सिरेसे शुरु करसकें।

प्रस्ताव प्रधानजी की ओर से रक्खा गया और सर्वसम्मती से पास हुवा।

७ युद्ध की आपत्ति

कॅांग्रेस अनेकवार साम्राज्यवादी खतरे की ओर ध्यान खींच चुकी है और घोषित कर चुकी है कि भावी युद्ध में भारत शामिल न होगा। कॅांग्रेस के गत अधिवेशन के बाद से विश्वसंकट और भी अधिक उग्र हो गया है। सत्तावादी राष्ट्रों के हौसले बढ गये हैं तथा उन्होंने यूरोप और विश्व पर आधिपत्य जमाने तथा राजनैतिक और सामाजिक स्वाधीनता को कुचलने के उद्देश से युद्ध के लिये गुट्बंदी करना शुरु कर दी है।

कॅांग्रेस इस विश्व संकट का संसार के प्रगतिशील राष्ट्रों तथा जातियों—विशेषकर साम्राज्यवाद तथा सत्तावाद द्वारा सताये गये लोगों के सहयोग से मुकाबला करने की आवश्यकता से पूर्णतया परिचित है। भावी विश्वयुद्ध में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के लिये भारतियों तथा उनकी हरचीज़ के काम में लाये जाने का खतरा है। अतः कॅांग्रेस देश को इस खतरे के विरुद्ध चेतावनी देती है और उससे अपने शोषण को रोकने के लिये ताकत पैदा करने की अपील करती है। भावी युद्ध के लिये न तो किसी ऋण सम्बन्धी प्रस्ताव पर स्वीकृती दी जाय, न स्वयंसेवक भेजे जाये और न इसी किस्म की दूसरी बातों में भी सरकार को साथ दिया जाय।

आचार्य नरेंद्र देवजी का भाषण

आचार्य नरेन्द्र देव ने प्रस्ताव उपस्थित करते हुये कहा:—

सभापतिजी, भाईयों और बहनों। जिस युग में हम रह रहे हैं वह क्रांति का युग है, इस युग में गतियां कितनी तिव्रता के साथ कार्य कर रही हैं, हम महीनों की मंजिल को मिनटों में तय कर रहे हैं।..................ऐसे परिवर्तन हो रहे हैं कि बहुतों को तो कदाचित यह विश्वास भी न होता हो कि हमारे पहिले क्या ढंग थे, क्या भेद पैदा हो गया, हमारे विचारों में सन्देह व शंका, व बेचैनी की मात्रा अधिक दिन प्रतिदिन बढती जा रही है, ऐसे समय में हमें विचार करना चाहिये कि, क्यों हमारे विचारों में यह भेद पैदा हुआ। हमारा व्यापार आर्थिक संकट में है, वह बन्दसा ही है। दूसरे देश के रहनेवाले उसे पादाक्रांत करना चाहते हैं। पूंजीवादी सत्ताएँ हमारे व्यापार को हडपना चाहती है। पूंजीवादी सत्ताएँ हमारे व्यापार को हडपना चाहती हैं।....................................पूंजीवादके साथ २ ही साम्राज्यवाद भी चलता है, यह युग ऐसा आ रहा है कि साम्राज्यवाद बहुत शीघ्र ही समाप्त

होनेवाला है, और कारण तो साफ ही इ कि, साम्राज्यवादी युग में किसी प्रकार की उन्नति के लिये कोई स्थान नहीं। आज हमारे सन्मुख वह अवस्था उपस्थित होगई है कि, पूंजिवाद प्रथा अपली अंतिम मंजिल को पहुंच गयी है, वह अपने को सुरक्षित रखने के लिये व्यथित है, वह अब शक्तिहीन होगई है। एक घटना जो भूमण्डल के एक कोने में होती है दूसरे उससे बच नहीं सकते, पूंजीवाद प्रथा के संकटों में और संकट बढ़ते हैं, जैसे २ पूंजीवाद प्रथा बढती जाती है वैसे २ ही किसानों की आपत्तियाँ बढती जाती हैं, और ज्यों २ किसान और मजदूरों में अशान्ति और बेचैनी बढती है वैसे ही उन राष्ट्रों में जहाँ पूंजी प्रथा के माननेवालों का जोर होता है, उन्हें मजबूर होना पडता है कि वह स्वतंत्रतावाद को बन्द कर दें। ....फैसिज्म के नेता दावा करते हैं कि, हम वर्गों का अन्त करने लिये हैं, पूंजीप्रथा और साम्राज्यवाद फैसिज्म का रूपधारण कर लेता है, वह अपनी रक्षा के लिये और अपना प्रभुत्व दूसरें पर जमाने के लिये भ्रातृभाव, स्वतंत्रतावाद को सब भूल जाते है, हम देखते हैं कि इसी प्रकार वर्ग संघर्ष बढता जाता है। वह समझने लगते हैं कि, दूसरे राज्यों को अपने आधीन किया जाय। यूरोप में जो देश संगठित है, वह स्वतन्त्रता पूर्वक अपने विचार प्रकट कर सकते है, जहाँ यह नहीं वहाँ क्या होता है कि, फैसिज्म का जोर होता है फेसिज्म नागरिक स्वतन्त्रता को जीत लेता है। एक ओर तो यह है दूसरी ओर वे लोग हैं जिनको उनसे खत्रा है, जो साम्राज्यवाद की चक्की में पिसे जाते हैं, वह समझने लगते हैं कि फेसिज्म से छुटकारा तभी हो सकता है जब कि अपनी शक्तियों को भी संगठित किया जाय, और ऐसी अवस्था में जो राज्य लोकसत्तात्मक की दुहाई देते हैं, वे भी मजबूर हो जाते हैं कि विचार अपहरण करने के लिये कानून बनायें। स्पेन के युद्ध में आप देख रहे हैं कि, जो शान्ति प्रिय लोग हैं उनपर बम्ब बरसाये जाते हैं। वह लोग अपने देश को बरबरता से बजाना चाहते हैं और वह फेसिज्म का मुकाबला करने के लिये तैय्यार हो रहे हैं। जो मुसीबत उनपर आ गई है उससे बचने का और कोई उपाय ही नहीं, कि वह अपनी शक्ति को संगठित करके इस आपत्ति का सामना करें।

इस आतंक का सामना करने के लिये युरोप में एक नई शक्ति का अद्भुत उत्थान हो रहा है, यह शक्ति शनै २ बन रही है, यही कारण है कि आज युरोप में एक यूनायटेड फ्रंट, (संयुक्त संघ) खडा हो रहा है। इन बढते हुए फॅसिझम का मुकाबला करने के लिये सब अपने भेदभाव मिटाकर एक हो रहे हैं। अन्तर राष्ट्रीय, ॲन्टी इंपीरिॲलिस्टस सब एक हो रहे हैं, मैं आपसे कहता हूं कि, जो आर्थिक संकट जिसके अन्दर युरोप व हमारा देश दबा जा रहा है अब मिटने जा रहा है। हम देख रहे हैं कि इस अंधकार और रोशनी में यह संघर्ष चल रहा है। आप तभी अपने कार्यक्रम में सफल होंगे जब आप को वर्तमान युग का स्पष्ट ज्ञान हो। ऐसा संगठन हो कि समाज में जो भिन्नता है वह दूर हो, मानवसमाज का अभ्युदय हो, और वर्तमान सामाजिक विषमता दूर हो। मेरा आपसे एक यह प्रश्न है कि आप को एक पक्ष चुन लेना होगा। हम आज मानव समाज की उन्नति के लिये एक नया राष्ट्र बनाना चाहते हैं, हम एक ऐसा राष्ट्र बनाने जा रहे हैं जिस में हर मनुष्य को बराबर अपनी शक्ति प्रकट करने की स्वतन्त्रता व अधिकार हो। जो देश फैसिज्म का विरोध करते हैं वे हमारे विचारों के साथ हैं। हम इस अवसर की खोज में हैं कि जब समय आए हम

इस वर्तमान युग का अन्त कर द, आर एक नया युग पैदा करें। गुलाम हिंदुस्तान की जो दशा हो रही है यह किसी से छिपी नहीं है। मजदूर समाज पुंजीप्रथाकी शिकार हो रही है। किसान अलग इस प्रथा के नीचे पिसे जा रहे हैं। सब संस्थाएं इकठ्ठी होकर इन आपत्तियों का मुकाबला करें। इस कार्य को केन्द्रीभूत करने की आवश्यकता है, और उस कार्य को करने के लिये काँग्रेस है। हमें जब सत्याग्रह संग्राम से छुट्टी मिली तो हम समझे कि हार गये बात यह नहीं, हम अकेले नहीं हमारे साथ बहुत मनुष्य हैं। यह तो बरबरता को समाप्त करने का युद्ध है। दुनिया के बहुत भाग के आदमी हमारे साथ इस प्रथा को मिटा देने के लिये साथ हैं। आज हम काफी मजबूत नहीं है, हम अवश्य चाहते हैं कि, लढाई रोकें, लेकिन हमारे हाथ में इतनी शक्ति नहीं है कि, हम इस में कोई इस युद्ध का रोकने के लिये हस्ताक्षेप कर सकें। कभी २ बुराई से भी भलाई निकलती है। अगर हम इस युद्ध को नहीं रोक सकते तो हम इ के जिम्मेदार भी नहीं हैं। अगर ब्रिटिश शासन जिनके सामने स्वार्थ है, किसी युद्ध में हिस्सा लेते हैं तो हमारा कर्तव्य है कि हम फौज में भरती न हों, हम चंदा न दें, वॉर लोन (लडाई का कर्जा) में रुपया न दें।

श्री. सज्जाद जहीर ने प्रस्ताव का समर्थन किया आपने हिंदुस्तानी में बोलते हुए कहाँ:— बहनों और भाइयों!

अभी आप के सामने आचार्य नरेन्द्र देवजी ने बतलाया कि जंग कैसे पैदा होती है, और यह जनता की न की प्यासी होती है, इन जंगों से मालदार व पूंजी–पति लोगों का कोई नुकसान नहीं होता, इस में मरते हैं गरीब मजदूर लोग। यह साम्राज्यवाद ही है जो जंग पैदा करता है। जबतक उसका नाश नहीं होगा तबतक हम जंग को दुनिया से नहीं हटा सकते। ....हमें यह सोचना है कि अगर ऐसा ही जंग फिर छिड जाय तो हम आइन्दा क्या करेंगे। हमें साफ २ लफ्जों में कह देना चाहिये जैसा कि हमने लखनऊ में भी कह दिया था कि, हम किसी शकल में भी जंग की सहाय्यता नहीं करेंगे, न हम अपने मुल्क के लोगों को फौज में भरती होने देगे और न हम जंगी कर्जे में रुपया देंगे।..

प्रस्ताव को मरहटी में श्री. अच्युत पटवर्धनजी ने सुनाया तत्पश्चात् इस प्रस्ताव पर मत लिया गया और प्रस्ताव सर्वसम्मती से पास हुवा।

८ सीमान्त नीति

कांग्रेस की राय में भारत की सरकार ने जो नीति का उत्तर पश्चिमीय प्रान्त में अवलम्बन किया है वह पूर्ण रुपसे निष्फल रही है और उस से भारत तथा सीमान्त के पार रहनेवालों कबीलों को, दोनों को ही क्षति पहुंची है। इस नीति का अनुकरण साम्राज्यवाद के हित के लिये तथा फौजी खर्च का बहाना पूरा करने के लिये किया जा रहा है, ताकि इस बहाने से अर्थ युद्ध की दिशाएं पैदा करके बेकार फौजों को साम्राज्यवाद के लिये शिक्षा दे सकें। कोई भी नीति जिसका फल यह हो कि जंगली और अमानुषिक ढंगों से हवाई जहाजों द्वारा बम्ब बरसाये जाते हो, और सीमान्त के पार बहुधा फौजी हमले किये जाते हों, बडी घृणा की दृष्टि से देखने योग्य है। उस के साथ यह भी हुआ है कि इस नीति से

सीमान्त में कोई शान्ति भी कभी नहीं हुई है परंन्त सामान्त पर रहनेवाले कबीले जो मित्रता का भाव रखतें हैं वह भी शत्रु होते जा रहे हैं।

भारत के बाह्य और घरेलू हितों के लिये यह आवश्यक है कि, सीमान्न पर शान्ति रहे, और पडोसियों से मित्रता रहे। कांग्रेस का यह विश्वास है कि भारत के सीमान्त शान्ति पर बिना किसी अधिक दिक्कत के रह सकती है, यदि सीमान्तपर रहनेवालों के साथ मित्रता, तथा अच्छे पडोसियन का बर्ताव किया जाय और उन्हें आर्थिक सहाय्यता पहुँचाने तथा दूसरे बहाने के अन्दर वहां फौजी काम के लिये सडके न बनाकर और वहां सभ्यता फैलाने का बहाना न करके, इनके साथ कोई दखल दाजी न की जाय। यदि इस प्रकार की नीति का अनुशीलन किया जाय तो वह हमारी ताकत बढाने के सहाय्यक होंगे और भारत परसे फौजी खर्चा भी कम होगा। काँग्रेस का विश्वास है कि, इस सीमान्त पठानों को जो यह कहा जाता है कि ये पालतू नहीं हैं, भयानक हैं, और हमलावर हैं। सब बेसूद हैं और यह बातें केवल इसी लिये कही जाती हैं कि किसी प्रकार इस भारी फौजी खर्चे को ठीक साबित कर सकें।

कांग्रेस यह एलान करती है कि भारत के लोग अपनी पडोसियों से मित्रता का भाव रखना चाहते हैं और जन-समुदाय की शान्ति के लिये पूर्ण सहयोग करने के लिये तैय्यार है।

सीमान्त पारहिस्से में जो सक्ती के कानून पिछले दिनों बनाये गये हैं, काँग्रेस उसकी भर्तुसना करती है, जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि भारत की गवर्नमेंट उत्तर पश्चिमीय प्रान्त पर बेकार तथा खतरनाक अनुभव कर रही है, जिस का फल यह होगा कि, वहाँ दुखही दुख पैदा होगा और आपस में मनमुटाव पैदा होगा।

काँग्रेस की राय में सीमान्त स्थिति को ठीक रुपसे सुलझाने का यही तरीका है, कि सीमान्त-पार के कबीलों के सहयोग से निश्चयात्मक शान्तिमय सीमान्त की समस्याओं का हल किया जाय जिसके लिये आर्थिक, राजनैतिक तथा फौजी स्थिति की जांच पडताल की जाय।

श्री. भूलाभाई देसाई का भाषण

श्री. भुलाभाई देसाई ने प्रस्ताव को उपस्थित किया और हिन्दुस्थानी बोलते हुए कहा—

जनाब सदर बहनों और भाईयो! जो सवाल पेश हुए हैं, अपने जो आदर्श है मुकम्मिल आजादी के उसको भी आप जनते हैं। सरहद की जो हालत है वह आप भाई जानतें हैं। वह किसी से छिपी नहीं है। .... बहना करते जाते हैं कि सीमान्त पार के लोग तो बडे खूंखार हैं, जालिम. लडाके हैं। हमें पढाया जाता है कि हिन्दुस्तान को दूसरे मुल्कों के हमलों से बचाना है, अगर हिन्दुस्तान की हिफ़ाजत इतनी न हो. तो पठान लोग हमला बोल देंगे। ऐसे २ बहाने करके लश्कर बढाते रहे। सन १९१४ में जंग हुआ, कोई भी हमला इधर से हिन्दोस्तान पर नहीं हुआ, कोई खतरे की दहशत रही ही नहीं, फिर इतना बडा भारी खर्च क्यों? सन १९१४ में २९ करोड फौजपर खर्च होता था, उससे बढाकर ५० करोड कर दिया उसके बाद बिना किसी खास सबब के ५५ करोड कर दिया और अब तक वही जारी है। सरकार एक ना एक बहाने पर फौजी बजेट पर खर्च करने को तुली हुई है। कभी वह कहती है कि हिन्दोस्तान को चीन की तरफ से खतरा है और कभी कहती है रुस की तरफ से।

बात यह है कि, यह सब बहाने बाजी है, उनके लिए यह सवाल नही है कि, आपकी हिफाजत हो, बल्कि उनके सामने तो यह सवाल रहता है कि अपनी हिफाजत हो, वह तो हिन्दोस्तान को अपनी मिलकियत समझते हैं, खर्चा कितना भी हो उनकी क्या जेब से जाता है ? यहां तो हिन्दोस्तान को अपनी मिलकियत समझने का सवाल है। वह समजते है कि उनके साम्राज्य की हिफायत के लिए यह जरूरी है कि एक बडी भारी फौज हरवक्त उन्हें तैय्यार मिल सकें और वह हिन्दोस्तान में हिन्दुस्तानियों के खर्चे पर पाली जाती है।............ ....कहते हैं कि वह जंगली हैं, मूर्ख हैं, उन्हें सिव्हिलाइज्ड (सभ्य) करते हैं, इटली ने भी अबेसिनिया की आजादी छीनली और इसी तरह से इटली ने भी कहाथा कि हम अबिसिनिया के हबशियों को सभ्य बनाना चाहते हैं, यही एक बहाना सब के लिये रह गया है। उनकी आजादी छीनली अपने मुल्क की पेट भरने के लिये।...................... ....अंग्रेजी फौजे बेकार पडी रहती है, उन्हें कुछ काम करने नहीं मिलता तो यही किया जाता है कि वक्त बे वक्त अपने लश्कर लेकर सरहद पर हमला कर बैठते हैं, वे इस बहाने से अपनी फौजों को लडाई का तजुर्बा दिलाना चाहते हैं।

मैं सरहद के बारेमें कह सकता हूं कि, वे लोग अहिंसा के मानने वाले हैं। वह बडे दिलेर हैं, खान अबदुल गफ्फार खाँ जिन्हें सरहदी प्रान्त का गर्व समझा जाता है, उन्हें लोग, फ्रॉंटियर गांधी (सरहद गांधी) के नामसे बोलते हैं, यह कैसे हो सकता है कि, उनके घुसते ही सरहदी सूबेवाले अहिंसा छोड देंगे। फिर जब सरहदी सूबे के लोग तो ऐसा कोई काम भी नहीं करते कि, उनके उपर बमों का वर्षाव करने की जरुरत हो फिर यह कैसे हो सकता है कि वहाँ से कुछ मील चलकर लोगों के मिजाज बदल गये हों। अगर हमारे पास हुकूमत होती तो यह कभी नहीं होता, जैसा हो रहा है, हम अपने पडोसियों से लडना नहीं चाहते, हमतो उनसें मिल्ना का भाव रखना चाहते हैं, सरकार की इस तरह की नीति क यह नतीजा हो रहा है कि, हमारे पडोसी हमें शत्रु समझने लगेंगे। .... हमारे सामने साफ सवाल है, हमारा सरहद-पार कबीलों से क्या तरीका होना चाहिये, वह तरीका यही हो सकता है कि दोस्ती का, हम अपने किसी पडोसी से दुश्मनी का बर्ताव रखना नहीं चाहते, उनका दिल साफ है, उन में आजादी की दिलचस्पी है, अगर यह तरीका बदल दिया जाय तो वह हमारी हिफाजत के लिये खडे होंगे। .... जबतक हमारी हुकूमत हमारे हाथ में न होगी यह सब होना नामुमकिन है। अगर इस जंग को छोड दिया जाय तो हमारी हम-साथियों से दोस्ती होगी; और दूसरे मुल्कों से जो डर, हमारे मुल्क को लगा रहता है वह भी दूर होगा।..

सरदार शार्दूलसिंह कवीश्वरने प्रस्ताव का अनुमोदन हिन्दुस्तानी में करते हुए कहा:—

प्रधानजी, बहनों और भाइयो ! जो सख्त बेइन्साफी, गवर्नमेन्ट हमारे साथ कर रही है वह यह है कि, हमारे हमसाथियों के साथ हमें लडवाया जाता है, उनको हमारे साथ मोहब्बत का रिश्ता करने के बजाय गवर्नमेन्ट उन्हें हमारा दुश्मन बनाती है ! .... बहाना क्या किया जाता है, यह कहा जाता है कि, सरहद पार के पठान हिन्दुओं के लडके और लडकियों को उठाकर ले जाते हैं। कैसा गलत प्रोपॅगॅंडा (प्रचार) हमारे

लोगों में किया जाता है। कोई हद झूठ की भी होती है ? ....
.... गवर्नमेन्ट उनके जोश को ठंडा करना चाहती है, बात यह है कि, गवर्नमेन्ट सरहदी सूबे को मिलिटरी (फौजी) सूबा बनाना चाहती है, वह समझते हैं कि शायद हिन्दुस्तान में आप इतने लॉयल सरकार परस्त न रहे, जब कि आप ऐसे रेझोल्यूशन (प्रस्ताव) पास करते हैं, तो शायद उन्हें डर है कि हमें हिन्दुस्तान से रंगरुट न मिल सकें तो वहींसे लेलेंगे, चाल तो असली यही है।..................................हम कॉंग्रेसवाले तो साफ कह देना चाहते हैं कि, हम गवर्नमेन्ट की इस फॉरवर्ड पॉलिसी (अग्रसर नीति) के खिलाफ है। सरहदपार के लोगों के हम साथ हैं और वे हमारे साथ हैं। वे हमारी आजादी के लिये लड रहे हैं। हम दोनों एक साथ मिलकर आजादी की लड़ाई के लिये तैय्यार हैं, हमें उनसे कोई नफरत नहीं।

प्रस्ताव राय लेने पर सर्वसम्मतिसे पास हो गया।

इसके बाद प्रधानजीने घोषणा की कि, अधिवेशन २५ की शाम को समाप्त हो जायगा।

दुसरा दिन

२५-१२-३६

आज कॉंग्रेस का खुला अधिवेशन ठीक चार बजे आरम्भ होगया, प्रथम वन्दे मातरम् तथा दूसरे मधुर गीत गायें गये। आज कल से अधिक भीड थी। नेताओं के साथ राष्ट्रपति ठीक चार बजे पेंडाल में पधारे।

प्रधानः—भाइयो और बहनो, अब आज का कार्यक्रम प्रारंभ होता है। मैं कुछ प्रस्ताव खुद ही पढकर रख देता हूं, फिर कुछ ऐसे प्रस्ताव होंगे जिनके ऊपर और बोलेंगे। आज यह यत्न किया जायगा कि इस अधिवेशन को आज ही समाप्त कर दिया जाय। कल आप को देर तक बैठे रहने में तकलीफ हुई, आज जो बोलेंगे उनसे तो दरखास्त करता हूँ कि लम्बे न बोलें।

९ बंगाल नजरबंदी

बिना दोष लगाये अथवा मुकदमा चलाये भारत की ब्रिटिश सरकारने जो हमारे हजारों भरतीयों को अनिश्चित काल के लिये नजबन्द कर रखखा है। कॉंग्रेस, सरकार की इस अन्याय-पूर्ण ओर पाशविक नीति की जोरदार निन्दा करती है। कॉंग्रेस का मत है कि, यह नीति स्वाधीनता के राष्ट्रीय आंदोलन को कुचलने के लिये अख्त्यार की गई है। कॉंग्रेस भारत-वासियों की इस मांग पर जोर देती है कि, जो व्यक्ति इस समय, बिना किसी अभियोग अथवा मुकद्दमे के नजरबन्द हैं, उन्हें फौरन रिहा करदिया जाय और पाबन्दी की विभिन्न आज्ञायें वापस ले लीं जाएं। कॉंग्रेस उन नजरबन्दों को सरगर्म अभिवादन और सहानुभूति प्रेषित करती है कि, जो वीरतापूर्ण साहस सें भारत की स्वाधीनता के लिये चुपचाप विपत्तियाँ झेल रहे हैं।

कॉंग्रेसनें बडे दुःख और चिन्ता के साथ सुना है कि, गतचार सप्ताहों में बंगाल में तीन नजरबन्दों ने आत्मघात किया है। कॉंग्रेस का यह ख्याल है कि, आत्मघात जैसे कार्यों का होना इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि, जिन स्थितियों में नजरबन्दों को रखखा जाता है,

वे असह्य उ र शरारत अंगेज हैं। काँग्रेस इन कारणों की सार्वजनिक जांच की मांग करती है कि जिनके कारण आत्मघात जैसे कार्य हुये, और साथ ही उन स्थितियों की जांच की मांग करती है कि जिन में नजरबन्दों को रक्खा जाता है। काँग्रेस तीनों नजरबन्दों के परिवारों को सम्वेदना भेजती है। काँग्रेस, गवर्नमेन्ट के इस कार्य की निन्दा करती है कि वह उन स्थितियों की कि जिनमें नजरबन्दों को रक्खा जाता है स्वतंत्र जांच नहीं होने देती और गैर सरकारी व्यक्तियों को जांच करने से रोकती है। इसका प्रमाण है काँग्रेस दलकी ओरसे लेजिस्लेटिव असेम्ब्ली में पेश किए गए प्रस्ताव का सरकार की ओर से विरोध। काँग्रेस अण्डमान के उस कैदखाने की पुनर्स्थापना की निन्दा करती है कि जिससे, सरकारद्वारा नियुक्त कमेटी के निन्द्नीय ठहरने के परिणाम रुप हठा दिया गया था। काँग्रेस की राय में अण्डमान की स्थितियां खास कर कैदियों के साथ मुलाकात करनेकी, उन्हें अलग अलग स्थानोंपर रखने की, और शिक्षत राजनैतिक कैदियों को बौद्धिक मनोरंजन के सुविधाओं की कमी की–असह्य है और इस लिये अण्डमान के राजनैतिक अपराधियों को फौरन भारत वापस ले आना चाहिये।

प्रस्ताव हिन्दी में पढा जाने के पश्चात् श्री. गाडगीळजीने उसका अनुवाद मराठी में पढ़ सुनाया।

प्रस्ताव प्रधानजी की ओर से रक्खा गया ओर सर्व सम्मती से पास हो गया।

१० प्रवासी भारतवासी

काँग्रेस अपने भाई प्रवासी भारतवासियों के लिये अपनी शुभ इच्छा प्रकट करती है और दूसरे देशों में, जिनमें वे बसे हैं, वहाँ जो उनकी बुरी दशा है तथा उनके नागरिक हक कम होते जा रहे हैं, उसके साथ सहानुभूति प्रकट करती है। काँग्रेस उनकी दशा सुधारने के लिये जो उसकी शक्ति के अन्दर सब काम करने को सदा तत्पर है और इच्छुक भी है, लेकिन यह बता देना चाहती है कि उनकी दशा में भारी तबदीली तभी आ सकेगी जब भारत स्वतन्त्र होगा और उसके हाथ में अपनी प्रवासी भाइयों की रक्षा करने की समुचित शक्ति होगी।

प्रस्ताव प्रधानजी की ओर से रक्खा गया और सर्वसंमतिसे पास हुआ।

११ कोयलों की कानों की दुर्घटना

बंगाल और बिहार की कोयलेकी कानों में जो बहुधा दुखप्रद दुःर्घटनाएं होती रहती हैं, जिनसे असंख्य मनुष्यों की हत्या होती है, बचे हुए मनुष्यों को आपदाएं घेर लेती हैं और भारत के खनिज दौलत का ऱ्हास होता है, उसको काँग्रेस दुःख और लोभ के साथ देखती है। काँग्रेस के मतानुसार ऐसी दुर्घटनाएं रोकी जा सकती हैं, और इससे सरकार की अयोग्यता प्रकट होती है, साथ ही यह कि इन कानों के मालिक और मैनेजर भी अपने काम में अयोग्य हैं, और उन्हें मनुष्यों के कष्टों का कोई ध्यान ही नहीं है। यह आवश्यक है कि कानून द्वारा शीघ्रही और सख्त प्रतिबंध लगाये जाँय और कडी चांच रक्खी जाय कि ऐसी दुर्घटनाएं भविष्य में नहों। इन कानों मालिकों को कानून बाध्य किया जाय कि, इस प्रकार क्षति पाये तो हर मनुष्यों और उनके वारिसों को पर्याप्त म्वाजा दें।

प्रधानजी ने यह प्रस्ताव रखते हुए कहा कि इन कानों के मालिक व मैनेजर लापरवाही से काम करते हैं। वे ठीक २ इन्तजाम नहीं रखते कि इन भयानक बातों को रोक सके। इस में सारा कसूर है गवर्नमेंट का, और कानों के मालिकों का।

प्रस्ताव सर्व सम्मतिसे पास हुआ।

१२ बंगाल-नागपूर रेलवे हडताल

सरकारी रेल्वै में काम करने-वाले, तथा उनकी ऐसी संस्थाएं, जिन्हें जनता से सहाय्यता मिलती है, उनमें काम करनेवाले इस प्रकार की तहकीकात जारी करने की मांग पेशकर रहे हैं कि, आम तौर पर रेल्वै में आदमियों की कमी की जा रही है और खास तौर पर छोटे दरजे की नौकरियों की तनखाओ में कमी की जा रही है। सरकार व रेल्वै बोर्डने उनकी इस ठीक और युक्त मांग को हरबार ठुकराया है। कॉंग्रेस की राय है कि यदि अबभी ऐसी पूछताछ जारी की जाय तो बंगाल-नागपूर रेलवे की हडताल का प्रश्न शान्तिपूर्वक तय हो सकता है।

कॉंग्रेस, बंगाल नागपूर रेल्वे पर काम करने वालों को, जिन्होंने इस बहादुरी और एकता के साथ अपने हक्को पर हमले होते हुए रोका है, उनको धन्यवाद देती है और आशा करती है कि जनता हडतालियों के साथ सहानुभूति प्रगट करेगी और उन्हें पूरी सहायता देगी।

प्रस्ताव राय लेने पर सर्वसम्मतिसे पास हुआ।

१३ विधान और जन-सम्पर्क

कॉंग्रेस इस बात पर फिर जोर देना चाहती है कि, कॉंग्रेस संस्थाओं के साथ जन साधारण का सम्पर्क उत्तरोत्तर बढना चाहिये और चार आना सदस्यों को ऐसे अवसर दिये जाने चाहिये जिससे वे कॉंग्रेस की राजनीति व कार्यक्रम में भाग लें और विचारविनिमय करें। यह कैसे हो इसपर विचार करने के लिये राष्ट्रपति, बाबू राजेन्द्र प्रसाद, श्री. जयरामदास दौलतराम, श्री जयप्रकाश नारायण और प्रधान मंत्री (संयोजक) की एक समिति नियुक्त की जाती है, जो, विधान में अपेक्षित परिवर्तनों पर विचार करके अप्रैल १९३७ तक अ. भा. कॉं. क. को अपना रिपोर्ट पेश करेगी। साथ में यह समिति लखनऊ कॉंग्रेस द्वारा नियुक्त जन-सम्पर्क समिति की रिपोर्ट पर भी विचार करेगी।

कॉंग्रेस की राय है कि यह पुनरसंगठन तो जब हो तब देखा जायेगा किन्तु प्रान्तीय कॉंग्रेस कमेटी को इससे पहले से ही अपने प्रान्तो का निम्न आधारों पर संगठन करना शुरू कर देना चाहियेः—

(१) जहां तक हो सके गांव २ और मुहल्ले २ में प्रारम्भिक कॉंग्रेस कमिटियां स्थापित की जायें।

(२) प्रारम्भिक कमिटीयों के सदस्यों को साल में कमसे कम दो बार एकत्र होकर स्थानिक समस्याओं और तकलीफों पर, और फिर कॉंग्रेस की नीति, एवं सर्व कार्यक्रम पर विचार करके सिफारशों के साथ अपनी रिपोर्ट कमिटीयों के पास भेजनी चाहिये। प्रारंभिक कमेटी के सदस्यों की एक संख्या निश्चित हो जानी चाहिये, जिसे यह अधिकार हो कि किसी खास विषय पर उस कमेटी से विचार करा सके।

(३) चार आने साल का जो चन्दा है, उसे स्थानिक माल के रूप में भी वसूल किया जा सकता है।

उपर्युक्त आदेशों को अमल में लाने और कांग्रेस संगठन को अधिक कार्यक्षम व जन-साधारण की आवश्यकता—आकांक्षाओं के अनुरुप बनाने की दृष्टिसे काँग्रेस कार्य-समिति को एक संगठन कर्ता मंत्री नियुक्त करने का आदेश देती है। और प्रान्तीय काँग्रेस कमेटियों से भी ऐसे संगठनकर्ता मंत्री नियुक्त करनेको कहती है। काँग्रेस को विश्वास है कि जनसाधारण के दैनिक सम्पर्क स्थापित करने में काँग्रेस-वादी आम तौर पर पूरा सहयोग देंगे।

प्रस्ताव प्रधानजी के ओर से रक्खा गया और सर्व सम्मतिसे पास हुआ।

१४ काँग्रेस अधिवेशन का समय

अखिल भारत वर्षीय काँग्रेस कमेटी को यह अधिकार दिया जाय कि, यदि वह उचित समझे तो यह काँग्रेस के विधान में इस प्रकार की तबदिलि करसके कि, काँग्रेस का अधिवेशन दिसम्बर को छोडकर और किसी मास में भी हो सके।

यह प्रस्ताव भी प्रधानजी की ओर से रक्खा गया और आपने कहाः—

आप जानते हैं कि बहुत वर्षों से काँग्रेस का अधिवेशन दिजम्बर मास में होता था, इधर कई वर्षो से यह निश्चय हुवा कि बजाय दिजम्बर फरवरी या मार्च में हो, इसलिये कि दिसम्बर में सर्दी काफी पडती है।.......................................यह कोई खास बात नहीं है, सिर्फ इस प्रस्ताव में यह कहा गया है कि अखिल भारत वर्षीय काँग्रेस कमेटी को यह अधिकार दे दिया जाय कि यदि कभी उचित हो तो विधान में इस तबदिलि करने का अधिकार उसे हो।

श्री. सुबुमनिया (तामील नाड) ने प्रस्ताव का विरोध करते हुए अंग्रेजी में कहा कि काँग्रेस अधिवेशन का समय, विधान में निश्चित कर दिया गया है। कार्यसमिति इसको उप-नियम बनाकर नहीं बदल सकती।

Mr. N. Subramaniam :—

"...I take it that the Congress shall ordinarily be held in the month of December. It is a fundamental right affecting the delegates. My difficulty is : this resolution is being moved from the chair. According to me the plenary session of the Congress has alone the right to change the Congress constitution. This resolution should be moved in such a form so that it may not be a precedent of authorising the A. I. C. C. Ordinarily speaking the meeting of the Congress should be held in December, but in special circumstance the A. I. C. C. may decide to hold it in any other month. What I want is to preserve the right of the plenary session. As for the change suggested, I do not very much mind.

प्रधानः—आप लोग जो यहां बहुतसे बैठे हैं, वह शायद समझे नहीं होंगे कि इन्होंने

क्या कहा, बात यह है कि प्रस्ताव मामुली है, इससे कोई ऐसी बात पैदा नहीं होती कि आपके अधिकारों को छीना जाय।.............................

प्रधानः—अच्छा तो यह प्रस्ताव वापिस ले लिया गया। और अब श्री गाडगीळ इसको पेश करेंगें।

श्री. गाडगीळजीनें इसको पेश करते हुए मरहटी में कहा।

प्रस्ताव का समर्थन करते हुए प्रो. चक्रवर्ती ने अंग्रेजी में भाषण किया।

श्री सुबरमनिया (तामील नाड) ने प्रस्ताव का विरोध अंग्रेजी में किया।

"It is true that the venue of the Congress is generally decided by the A. I. C. C., but the time is very important so far as the delegates are concerned. Therefore, I do not like the idea of delegates giving up their right of saying when the Congress session should be held. This is the whole point of the objection. But I was willing to recognise and allow that in special circumstances the A. I. C. C. may be authorised to hold the plenary session at a time as circumstances may demand and require.............

If this is only a temporary arrangement, even then it is a deviation from the constitution itself. Therefore, I would like the resolution to be amended in this form that "notwithstanding anything in the exsisting constitution, the A. I. C. C. is authorised to hold the next session of the Congress in any month other than December."

तत्पश्चात् श्री नरिमन ने प्रस्ताव का विरोध करते हुए अंग्रेजी भाषा में भाषण किया।

Mr. K. F. Nariman :—

"I submit that in a vast country like India where there is much wide variation in climate, there is bound to be objection on the point of hot and cold....... In the south of India there will be objection to March on the ground of heat, while in Northern India there will be objection to December on the ground of cold.

December was selected because there happen to be long holidays when we are used to get railway concession, which means a saving of thousands of rupees. It must weigh as a great consideration particularly when we want poor delegates to come.

Another consideration which we have to enter into is our parliamentary programme and policy. From February to April in all provincial legislatures as well as in the central legislature, there will be budget sessions and 1500 of our congress leaders and members will be engaged in the provincial legislatures and the central legislatures. Therefore, there will be a conflict between these two. Therfore, last year the congress altered the time to December.

Lastly, an august body like the congress should have some finality about their decision. It is not a small matter. Gandhiji pointed out yesterday the significant success of the session, because of the large number of visitors. That success is due to a certain extent to the fact that the convenient time of the session and the railway concession have been taken advantage of. Therefore, the decision taken at the Lucknow session should continue."

श्री. अनोखेलाल अवहरे ने भाषा में बोलते हुए विरोध किया।

स्वामी सहजानन्द ने प्रस्तावका समर्थन करते हुए कहा :- प्रधानजी,

पहले महात्माजीनें कांग्रेस के अधिवेशन के समय को बदलवायाथा। लाहोर में काफी सर्दी पड रही थी उससे लोग घबरा गये थे। एक भाई ने कहा था कि फरवरी मार्च में किसानों को फुरसत हो जाती है और वह अधिक संख्या में कांग्रेस में शामिल हो सकते हैं। हम तो किसान व मजदूरों को यहां लाना चाहते हैं, इस वर्ष इतनी भीड हम भाईयों की आयी गई। यह प्रस्ताव सुन्दर है इसे आप पास कीजिये।

प्रधानः—इस प्रस्ताव पर बहुत बहस हो गई, मैने छोटासा प्रस्ताव २ लाइनों का रक्खा था।

आपने पुनः प्रस्ताव पढ़ा, मत लेने पर बहुमत से प्रस्ताव पास हुवा।

१५ नागरिक स्वाधीनता का अपहरण

कांग्रेस पुनः ध्यान दिलाती है और भरत में नागरिक स्वाधीनता के अपहरण की निन्दा करती है, जो दिन प्रतिदिन बढ़ती पर है और जनता की दैनिक दिनचर्या के रास्ते में घातक है, व्यक्तिगत स्वाधीनता के रास्ते में भी आडचन डालता है और भारतकी वर्तमान संतति को पीसता है। सैकडो कॉंग्रेस कमिटियोंको, मजदूर और किसान संघ और दूसरी संस्थाओंको अभीतक गैरकानूनी ठहरा रक्खा है, पिनल कोड और जाब्ता फौजदारी कानून जो पहले से ही सख्त है, आर्डिनन्स कानून के साथ और भी सख्ती से जनता की कार्य-प्रणाली को तथा मत प्रकट करने को कुचलता है, प्रेसके कानून और उनपर प्रतिबंध, समाचार पत्रों का गला घोटता है, पुस्तकें, समाचार पत्र, समुद्री कस्टम कानून के अन्दर, वहां आनेतक से रोकी जाती है, शहर, बंदर या अन्दर ही कैद करने से लोगों का इधर उधर आना जाना रुका जाता है, नजरबन्द कैदियो को बिनामुकद्दमा चलाये हुए ही उन्हें कैम्पों में रक्खा जाता है, जरायमपेशा कानून शान्तिप्रिय नागरिकों के लिये बडी मुसीबत है, इसके अतिरिक्त यह तथा वैदेशिक कानून, राजनैतिक कार्यकर्ताओं के उपर लागू किये जाते है, भारतवर्षीयों को बाहर समुद्रपार जाने के लिये पासपोर्ट नहीं दिये जाते, बहुत से भारत-वासियों को बाहर से नहीं आने दिया जाता उन्हें वहीं जलावतनी में रहना पडता है। बंगाल और सरहदी प्रान्त में औरभी अधिक, रुकावटे लगा रक्खी हैं, जिससे जनता के काम धंधेपर बोझा पडता है।

कांग्रेस पुनः २ दुःख के साथ कहती है कि इसी प्रकार की तथा इनसे अधिक पाबंदिया, जिससे नागरिक स्वाधीनता का अपहरण होता है, देशी रियासतों में लगा रक्खी हैं।

कांग्रेस सारें भारतवर्ष के लिये, यह देसी रियासतों के लिए पूर्णतया वैयक्तिक नागरिक तथा राजनैतिक स्वाधिनता चाहती है। और भी इस प्रकार की स्वाधीनताओं के लिये बराबर लडती रहेगी, परन्तु काँग्रेस यह महसूस करती है कि इस कार्य के लिये राजनैतिक स्वतंत्रता आवश्यक है तथैव जातिको पूर्णतया स्वतन्त्रता प्राप्त करने में जुटाना चाहिये।

श्री. गोविन्द वल्लभ पन्त जी ने उक्त प्रस्ताव को पेश करते हुए भाषा में कहा:—

सभापतिजी व भाईयो !

जो प्रस्ताव आपके सामने पढकर सुनाया गया है यह बडे महत्व का है। सभ्य जीवन कुछ मौलिक स्वत्वों के हकों पर कायम रहता है, दशा हरएक सभ्य देश में ऐसी ही होती है और जहाँ नहीं है वहाँ होनी चाहिये कि, आपस में मिलकर सब विचार कर सकें जब कि समाचार पत्र बिना किसी रुकावट के छापे जा सकते हैं, तभी हम सत्यपर पहुँच सकते हैं। आजकल जो विधान है उसके अन्दर हम बहुतसी कठिनाइयों के नीचे आये हुए है, डब्ल्यू. एस्. ए., अमेरिका में कुछ ऐसे विधान हैं और कुछ ऐसे मौलिक स्वत्व हैं कि, उनके खिलाफ कोई कानून नहीं बन सकता, इसके विरुद्ध आप अपने देश में देखें, यहाँ ऐसे कानून हैं कि बात २ में मनुष्य की स्वतन्त्रता छीनी जाती है। आप प्रत्येक व्यक्ति को जकडे हुए पाते हैं। आपने सुनाही होगा कि खां अब्दुल गफ्फार खाँ को जेल से निकलते ही आज्ञा दी गई कि वह अपने प्रान्त में भी न जायें। उसकी अवधी नियमित थी, कि कल ही ज्योंही यह अवधी समाप्त हुई एक और सरकारी हुक्म मिला कि, एक सालतक और वह अपने प्रान्त में न जायें। इससे ज्यादा और क्या पाशविकता हो सकती है, वह दण्ड को साबित करें तो भी एक बात है, एक आदमी अपने देश में भी न जा सके ! इससे ज्यादा असभ्यता का नमूना और क्या मिल सकता है। आपने सुना होगा कि सरहदी सूबे में ऐसी जुल्म की बातें भी की जाती है कि जो कुछ करना चाहता है, उसे करने नहीं दिया जाता। ....कौन ऐसा भारती है जिसका कलेजा इन आपत्तियों को सुनकर न हिल जाता हो, हमारा देश, हमारी भूमि और हमें ही उस पर स्वतन्त्रता के साथ चलने की मनाई है ! हजारों निर्दोष नौजवानों को घरों में बन्द किया जाता है उन्हें जेलों में सडाया जाता है, जो एक चिठ्ठी भी अपने घरवालों को लिखते है तो उन्हें, एक या दो साल की सजा दी जाती है यह है, सरकारकी सभ्यता ! नौजवानों को न पढने दिया जाता है न कहीं जाने दिया जाता है, वे भूलें मरतें हैं, इन सब बातों को सुनकर किसका खून न खैलता होगा। कही भी न फैसिज्म व नाजिज्म ऐसा जुल्म होता है जैसा कि हमारे देश में होता है।

..................आप जिधर भी नजर डालें उधर ही देखेंगे कि जो बातें कोई जुल्म करने की सोच सकता है वह बातें की जातीं हैं। पिछले ४–५ सालों में ऐसे २ कानून बनाये गये कि कहने को तो कहा जा रहा है कि प्रान्तीय स्वराज्य दिया जा रहा है लेकिन वास्तव में बात ऐसी है कि इन कानूनों में बंधाकर मजेसे प्रान्तीय स्वराज्य का आनन्द लो। ....बंगाल में बहुत से नवयुवकों ने ऐसे कानूनों से तंग आ कर आत्मघात कर लिया है उनका जीवन इनके कारण कितना असहाय होता है यह वही जान सकते हैं, उनको

जब रोटी नहीं मिलती तो वह पागल हो न जाय तो और क्या,आत्मघात न करें तो क्या करें। अब ऐसी अवस्था में आप का और हमारा धर्म क्या है, यह प्रस्ताव हमारे सामने है। ब्रिटिश राज्य में ऐसे कानून हों तो कोई ताज्जुब नहीं लेकिन देसी रियासतों में भी ऐसे और इससे ज्यादा सख्त कानून है, वहाँ कुछ लोगों को ब्रिटिश भारत से आने भी नहीं दिया जाता, मनुष्य का धर्म है कि यह अपनी पूर्ण स्वतन्त्रता के लिये लडता है। ११ वर्ष हुए हमने रोलेट अक्ट के समय देश में एक आन्दोलन खडा किया था, आज उससे भी ज्यादा कहीं काले कानून हमपर लादे गए हैं, पूर्ण स्वराज्य के बिना क्या और तरीका हमारे सामने है, हम दृढ संकल्प करे कि, जबतक पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त न कर लेंगे तबतक चैन से न बैठेंगे।

श्री. अणेजी प्रस्ताव का समर्थन मरहटी में करते हुए कहाः—

नागरिक हक्कांवरील आक्रमण लोकांच्या इतकें आंगवळणीं पडलें आहे कीं तें त्याकडे दुर्लक्ष करूं लागले आहेत. बॅ विनायकराव सावरकर यांच्यावरील निर्बन्धांकडे लोकांचें असेंच दुर्लक्ष झालें आहे."

श्री. अणेजी ने प्रस्ताव का अनुमोदन मरहटी में किया और तत्पश्चात् श्री. राजकुमार चक्रवर्ती ने प्रस्ताव का समर्थन अंग्रेजी भाषा में किया और राय लेनेपर प्रस्ताव सर्व संमतिसे पास हुआ।

Prof, Chakaraborty :—

"From Chittagong in the east to Midnapur in the west it has been all a tale of suppression of liberties. With detention of the finest flowers of Bengal in detention camps like those of Deoli, of jails in the Cambelpur in the Punjab and Trichy in Madras, with numerous internments in villages and far off nooks and corners of the country, with restrictions of thousand kinds imposed on the movement of numerous men and women in Bengal, there is not a single family which has not been affected by the suppression of civil liberties. There is not a single family which has not shed tears for long separation from some one near and dear to them. Well, the cup of Bengal's miseries has been full to the brim. The latest instance of suppression of civil liberties has been the arrest of a number of genuine trade union workers under the Bengal Suppression of Terrorist Outrage Act, which is meant for terrorits only. I need not multiply instances. All this is being done in the interests of law and order. But the law in these cases is the desire of an irresponsible bereaucracy and the order is the order of the members of the secret service department and the police who pay and protests depends more upon such detentions and suprpession of organisations than anything else.................

I will tell you another phase of the suppression of civil liberities which has destroyed the freedom of the press in Bengal. News articles which can be printed outside Bengal connot be printed in

Bengal. News about detenus cannot be published as the Prese Officer tells us there that the publication of these will come under press law. Securities after securities have been demanded from nationalist papers and forefeited. The Anandabazar Patrika has been recently forced to deposit Rs. 200,00. The sword of Democles is ever hanging on them."

१६ चुनाव और राष्ट्रीय मंचायत

काँग्रेस फिरसे गवर्नमेन्ट ऑफ इंडिया एक्ट, डिपू का नया भारत सरकार के कानून को, तथा उस विधान को भारत के ऊपर जनता के मत के विरुद्ध लादा गया है, नामंजूर करने की घोषणा करती है। काँग्रेस क मतानुसार इस विधान से सहयोग करना, भारत की स्वतंत्रता की लडाई के साथ विश्वास घात के समान होगा, और अंग्रेजी साम्राज्यवाद को मजबूत करने में सहायक की भान्ति होगा और भारतीय जनता, जो साम्राज्यवाद के नीचे पहिले ही कुचली जा रहीं हैं, को बदलना तथैव काँग्रेस अपने विचार पुनः दोहराती है कि, इस विधान के सन्मुख नहीं झुकेगी, या इसके साथ सहयोग करेगी, बल्कि इसका बाहर और धारा सभाओं के अन्दर से, इसे समाप्त करने के लिये मुकाबला करेगी। काँग्रेस भारत का राजनैतिक व आर्थिक ढांचा बनाने के लिये बाह्य किसी शक्ति व अधिकार को नहीं मानती है, और न मानेगी और हरप्रकारसे यत्न किया जायगा कि इसका मुकाबला सुसंगठित तथा अटल विरोध जनसाधारण की ओर से किया जाय। भारत की जनता सिर्फ उसी विधान को मान सकती है जो उसने स्वयँ बनाया हो, इस सिद्धान्तपर कि भारत एक स्वतंन्त्र जाति और वह–अपनी इन्छा और आवश्यकताओं के अनुसार उसमें रद्दोबदल कर सके।

कांग्रेस उस वास्तविक प्रजासत्तात्मक राज्यप्रणाली के लिये खडी है कि, जिससे राजनैतिक शक्ति भारतियों के हाथ में दी हुई हो और राज्यप्रणाली उनके हाथ में हो। ऐसे राज्य की स्थापना राष्ट्रीय पंचायत से हो सकती है, जो हरएक बालिग के मतसे बनी हो, और जो देश का प्रान्तिक विधान बनाने की शक्ति रखती हो। इसी उद्देश्य को सामने रखते हुए कांग्रेस देश में कार्य करती है, जनसाधारण को संगठित करता है और जो कांग्रेस के प्रतिनिधि धारा सभाओं में जांय वह भी यही उद्देश्य सामने रक्खें।

कांग्रेस अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमिटी के चुनाव घोषणापत्र को पुनः मानती है और सब उम्मेदवारों को जो कांग्रेस की ओर से खडे हैं उन्हें, यह आदेश करती है कि वे अपने कांग्रेस चुनाव आन्दोलन को इसी की बिनापर रक्खें और चुनाव के बाद धारा सभाओं में अपना कार्य भी इसी के अनुसार रक्खें। धारा सभाओं में कांग्रेस द्वारा चुने हुए सदस्यों को सबसे प्रथम धारा सभाओं में ऐसे प्रस्ताव पेश करने चाहिये कि राष्ट्रीय पंचायत शीघ्र से शीघ्र बुलायी जाय जो बालिग के मत से चुनी हुई हो, और इस मांग के साथ बाहर भी आन्दोलन हो कि जिस से भारतीय अपने स्वावलंबी इरादे के अधिकार को बता सकें।

धारा सभाओं में पहुंचकर मन्त्रिपद स्वीकार किए जाये या नहीं, यह तो प्रश्न अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी तय करेगी, ज्यो ही प्रान्तीय चुनाव के बाद सुविधाजनक होगा। चुनाव के समाप्त होते ही प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियां जिला तथा स्थानीय कांग्रेस कमेटियों से

पूछेगी कि, वह अपना अपना मत इस प्रश्नपर दें। जिससे अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमिटी को इस प्रश्न को हल करने में सहाय्यता मिल सकें।

प्रस्ताव पर बोलते हुए बाबू राजेन्द्र प्रसादजी ने हिन्दी में कहाः—

प्रधानजी, बहनो और भाइयो,

लखनऊ व बम्बई में हमने अपनी राय जाहीर कर दी थी कि, हमें यह मौजूदा विधान जो हमारे उपर थोपा जा रहा है मंजूर नहीं है, जिस तरह भी होगा हम इस का विरोध करेंगे। जबतक इसे तोड न देंगे और बिलकुल रद्द न कर देंगे चैनसे हम नहीं बैठेंगे और न बैठने देंगे। इस प्रस्ताव द्वारां उम्मेदवारों को हितायत दी गई है कि वे वहां जाकर किसी तरहसे भी सहयोग न करें और चुनाव के घोषणा-पत्र का मतलब ही यही है। इसके बाद यह रास्ता बतलाया गया है कि जो लोग वहां जॉंय वे राष्ट्रीय पंचायत (कॉन्स्टिटयुअन्ट असेम्बली) की मांग पेश करें उसे होशहवासवाले लोग चुनेंगे और वही हमारे लिये विधान बनायेगी, हम एक मिनट के लिये भी कभी यह मंजूर नहीं कर सकते कि कोई विदेशी हमारा विधान बनाये और किसी भी विदेशी को हमारे ऊपर राज्य करने का हक नहीं है, जो उल्टी गंगा बह रही है, उसे हम शीघ्र ही सीधा करना चाहते हैं। यहाँ यह भी बतालाया गया है कि जो लोग कौन्सिलों में जा रहे हैं उनके साथ यही काम है। और बाहरसे भी लोगों को यत्न करना होगा कि शीघ्र से शीघ्र भारत पूर्ण स्वतन्त्र देश हो। हमने तो पिछले तजुर्बो से यह देखा है कि जब कांग्रेसमैन कौंसिलों में नहीं रहते तो वहां और लोक घुस जाते हैं जो उनसे अपने देश के खिलाफ जो भी, विदेषी गवर्नमेंट चाहती है काम करा लेती है, गवर्नमेन्ट ने पिछले वर्षों में जब कि कांग्रेसवाले वहाँ नहीं थे बहुतसे ऐसे कानून बनाये कि, जो भारत की जनसाधारण के अधिकारों पर कुठाराघात था, इन सब कानूनो को अंधे होकर इन्हीं हमारे देश के भाइयों ने जो उस समय हमारे नुमाइन्दें बनकर वहां गये थे इनको पास कराया। जब पिछले वर्षों कांग्रेस की और से सत्याग्रह की लडाई चल रही थी तो उस समय उन्हीं लोगों ने गवर्नमेन्ट से कानुन बनवाये और गवर्नमेन्ट को दमन नीति को चालू करने में मदद की, इसलिए हम कौन्सिल में जाकर ऐसे लोगों को रोकना चाहते हैं। हम जिन लोगों को भेज रहें है, उनको यह आदेश किया जायगा कि वह कौन्सिलों में जाकर ऐसा प्रोग्राम रक्खें कि जिससे देशका भला हो। और जनता जो बहुत कमजोर होगई है, वह अपनी कमजोरी को निकाल सके, चूंकि हम जो स्वराज्य चाहते हैं वह जनता के जरिए से ले सकते हैं। और हम यह जानते हैं कि, कौन्सिलों में जानेसे हमें स्वराज्य नहीं मिल सकतां है, जनता के बल पर ही हम अपने प्रोग्राम को कौन्सिलों में जाने के लिये बना रहे हैं। एक और चीज, जो इस प्रस्ताव में बताई गई है वह यह है कि, बहुधा यह बहस चलती है कि हम मंत्रीपद स्वीकार करें या न करें इसमें मतभेद है। और कांग्रेस में भी इस प्रश्न पर दो पक्ष है, एक पक्ष तो यह कहता है कि मंत्रीपद स्वीकार करके हमें गवर्नमेन्ट के गढ के अन्दर अपने कांग्रेस के प्रोग्राम को जारी रखना चाहिए और हम वहां से गवर्नमेन्ट का मुकाबिला अच्छी प्रकारसे कर सकेंगे। दूसरा पक्ष मंत्रीपद स्वीकार करनें के विरोध में है। हमने लखनऊ में यह निश्चय किया था और बम्बई में भी यही निश्चय हुआ था कि इस प्रश्न का फैसला आगे होगा यहां पर यह कहा गया है कि जब चुनाव खतम होगा और प्रान्तीय और

मातहत कमेटियाँ इस प्रश्नपर अपने विचार ए. आय. सी. सी. के सामने रखेंगी तब जैसा उचित होगा फैसला कर लिया जायगा।

जो कि इस प्रश्न पर मतभेद है कि मंत्रीपद स्वीकार किया जावे या नहीं लेकिन इस प्रश्न पर कोई मतभेद नहीं कि कोई भी इसे चालू करे, और इस कानून के साथ सहयोग करें कुछ लोग जरुर ऐसे है जो चालू मंत्रीपद स्वीकार करके इसे तोडना चाहते हैं। इस प्रश्न के बारे में शायद कुछ तानीतानी आयेगी। मुझे आशा है कि आप लोग इस प्रस्ताव को स्वीकार करेंगे।

महामना माल्वीयजीने बाबू राजेन्द्र प्रसाद के राष्ट्रीय सरकार और चुनावसंबंधी प्रस्ताव का ओजस्वनी शब्दो में समर्थन करते हुये कहाः—हम नये विधान को अस्वीकार क्यों करते है? हम इस विधान के द्वारा स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते, यह न केवल हमे जरा भी स्वतन्त्रता देता, बल्कि हमें जो थोडी बहुत स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है उसका भी अपहरण कर लेता है, जबतक अंग्रेज भारत में हैं अपना ही भला देखेंगे भारत का नहीं।........... ....हम योग्यता और बुद्धि रखते हुए भी अंग्रेज के गुलाम हैं। क्या हमें शर्म नहीं आती? अंग्रेज लोग कहते हैं "इस एक्ट से १० वर्ष तक काम चलाओ और फिर तुम्हें दूसरी किस्म देदेंगे। क्या हम इसे बरदास्त कर सकते हैं? मेरा तो यह विश्वास है कि, जबतक ब्रिटिश पार्लियामेन्ट हमपर शासन करती रहेगी हमें औपनिवेशिक स्थिति या कोई अन्य स्थिति प्राप्त नहीं हो सकती। जरा देखिये तो स्वतन्त्र देशों में क्या हो रहा है। जापान की ओर नजर डालो। संसार में उसका मान होता है। अन्य देश जो वास्तवं में पतन की अन्तिमावस्था को पहुँच चुके थे स्वाधीनता प्राप्त कर रहे हैं, मुझे तो इससे गहरा आघात पहुँचता है। स्वतन्त्रताप्राप्ति हमारा अधिकार है, अंग्रेज राज्य चाहे देवताओं का राज्य ही क्यों न हो, हम इसे वश्त नहीं कर सकते। हमें स्वराज्य ही लेना है। जो स्वार्थ और अभिमान में डूबे हैं ये भारत की इस दुर्दशा का अनुभव नहीं कर सकते। ब्रिटिश शासन स्वतन्त्र होने की हमारी ख्वाईश पर केवल अंग्रेज ही भय और आश्चर्य प्रकट नहीं करते परन्तु कई भारतीय भी ऐसे हैं जो पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त करने के हमारे निश्चय पर ताज्जुब करते हैं। क्या कोई ऐसा भारतीय है जिसका यह ख्याल हो कि, हम स्वयं अपना राज्य न करें और स्वाधीन न हो। इस पर बहुत जनसमूह से "नहीं नहीं" की आवाज आई। क्या कोई ऐसा भारतीय हो जो यह नहीं चाहता कि हमारी भी स्थिती वैसी हो जैसी कि अंग्रेज की। हमें यह निश्चय करना है और शपथ लेनी है कि हम तबतक खुश न होंगे जबतक स्वाभीनता प्राप्त न कर लें।

आपने कहा कि राष्ट्रीय पंचायत (कॉन्स्टिटयुअन्ट असेंब्ली) काँग्रेस लक्ष्य की, ओर एक बडा कदम है।

काँग्रेस की सब मांगों को पूरा करने के लिये भारत सरकार कभी भी राष्ट्रीय पंचायत नहीं बुलायेगी। राष्ट्रीय पंचायत स्वयम्भू ब्रिटिश सरकार के भारत के वास्ते विधान बनाने के अधिकार को खुला चेलेंज है। कहा जाता है कि राष्ट्रीय पंचायत शक्ति प्राप्त करने के बाद

ही बुलाई जा सकती है। मगर उनका यह ख्याल गलत है। परसों हमने शक्ति प्राप्त करने के लिये एक प्रस्ताव पास किया था। वह प्रस्ताव शक्ति हासिल करने में हमें और एक कदम आगे ले अजावेगा! हम भारतीय जनता का भारत के वास्ते विधान बताने का अधिकार स्थापित करना चाहते हैं। .... चुनाव हो जाने के बाद निर्णय करने का अवसर आयेगा चुने गये मेम्बर, असेम्ब्ली में पहुँचते ही राष्टीय पंचायत की मांग पेश करेंगे। और बाहर काँग्रेस द्वारा इसके लिए क्षेत्र तैयार किया जायगा। राष्ट्रीय पंचायत समायान्तर में शक्ति हासील करनेका एक साधन हो जायगी। हम कांग्रेस को राष्ट्रीय पंचायत में परिवर्तित कर देंगे कांग्रेस को केवल भारतीय जनता का मनोभाव ही नहीं प्रगट करना चाहिये परन्तु उसे भारतीय जनता की इच्छा को संगठित करना चाहिये। .... धारा सभाओं के अन्दर से विधान नहीं तोडा जा सकता। हम उसे तभी तोड सकेंगे कि जब हम पूर्णतया संगठित हो जांय, हम अपने भेदभाव मिठा दें, हम आपस में लडना छोड दे, हिन्दु मुसलमान मिलकर ही देश को आजाद करें। देशके सामने इस समय बडी २ समस्यांएं उपस्थित हैं, हमे संगठित होकर विदेशी शक्ति का, जो बडी ही संगठित है मुकाबला करना है, इसके लिये हमें तैय्यारी करनी है। .... आपने दर्शको से पूछा, " क्या आप स्वराज्य चाहते हैं ! और कुछ देर जबाब के लिए रुके, उपस्थित जनों ने " हाँ हाँ " की ध्वनी की, तब आपने कहा, गांव में यह ध्वनी फैल जानी चाहिये, और एकहि बार नहीं बल्कि सालभर तक बराबर सारे देश में यही ध्वनी निकलनी चाहिए।

हमारा काम है कि हम कांग्रेस को हरतरह शक्तिशाली बनाये, हरएक मर्द, और बच्चों को यह समझ लेना चाहिए, हिन्दुस्तान के पास सब तरह की ऐसी चींजें हैं जिनसे वह सुखी हो सकता है, लेकिन वह लेयुक्त नहीं है और इसी लिए वह विदेशी शासन की असह्य गुलामी में पडा हुआ है, उस गुलामी को दूर कर अपना शासन स्थापित करने के लिए देश की सभी जातियों को आपस में मिल जाना चाहिए।

जबतक हम विदेशी शासन का दुःखानुभव नहीं करेंगे, हमारी दशा नहीं सुधरेगी। यह कहते हुए आपने इस युक्ति का स्मरण कराया कि ब्रिटिश लोग तबतक यहांसे नहीं हटेंगे जबतक कि उन्हे अपना यहां रहना खतरनाक न मालूम होने लगेगा। आप उनपर खतरा बैठा दें तभी ब्रिटिश सरकार हमारी मांओंको समझेगी और स्वीकार करेगी। लेकिन इसके लिए काँग्रेस के खुले अधिवेशन में एक दिन चिल्ला देना यह काफी नहीं है। इसके लिए तो बराबर साल के ३६५ दिन काम करना होगा।" आप अपनी कायरता को फेंक दें, बहादुर बनें और प्रतिज्ञा करें कि आजाद होकर ही दम लेंगे।

तत्पश्चात श्रीयुत डांगेजी ने इस प्रस्ताव में एक संशोधन पेश किया और अंग्रेजी में भाषण किया।

Comred S. A. Dange :—

" Such state can come into existence through uncompromising anti-imperialist struggle and seizure of power by masses, and the democratic form of the state will be determined by a constituent

assembly elected by adult suffrage and having the power to determine finally the constitution of the country.

There is an attempt to think in terms of a constituent Assembly that may be sometimes called by the British Government. The British Government may call a constituent assembly or may not call it.

The thing we propose is the constituent Assembly slogan. It is meant for this purpose that if we do not want a bad constitution, a constitution, which is not based on our power, we ought to bring about a stage when we can get a constitution which embodies real power. The immediate question is therefore power. The immediate question is an anti-imperialist struggle and development of the struggle which will bring into existence a democratic state.

A united front of these (anti-imperialst) organisations will be the kind of struggle necessary for capture of power and when power has been seized, a constitution can be formed. Seizure of power does not cannote violence or non-violence, you can not simply oust one constitution and impose another by formulation of a constituent assembly. We have to lead an uncompromising anti-imperialist struggle. The result of that struggle is seizure of power, which alone can bring a constituent Assembly."

श्री सार्दूलसिंह कविश्वर ने अपना संशोधन अंग्रेजी में पढकर सुनाया और हिन्दी में भाषण देते हुए कहा—

सभापतिजी भाइओ और बहनो !

बाबू राजेन्द्र प्रसाद साहब ने अभी कहा है कि मंत्रीपद के प्रश्न को हम अभी मुलतवी करें हमारा तो कहना है कि हमें किसी शक्ल में भी मंत्रीपद को ग्रहण नहीं करना चाहिए जब हम कई बार यह कह चुके हैं कि यह कानून हमारें उपर जबरदस्ती ठोका गया है और, हम इसे किसी हालत में भी मंजूर नहीं करेंगे तो फिर हम किस तरह से मंत्रीपद को लेकर यह भी कह सकते हैं कि हमने इस कानून के साथ सहयोग नहीं किया। समझ में नहीं आतां कि मंत्रपद स्वीकार करके कैसे हम स्वराज्य की लडाई को आगे बढ़ा सकते हैं। हम कहते हैं कि मंत्रीपद स्वीकार करना बिलकुल ही गलत होगा। ....लखनऊ में जब यह प्रस्ताव पास हुआ था तब यह लब्ज......इसके साथ में नहीं थे अब यह लब्ज.........इसके साथ में लाये गये हैं यानी कि इसके साथ सहयोग नहीं करेंगे इसलिये अब दरवाजा बन्द हो गया है कि हम इस कानून के साथ किसी प्रकार से भी कोई सहयोग करें। .... महात्माजी ने जो क्रान्ति की लहर हमारे देश में पैदा की है उसको धक्का लगेगा अगर हम इस कानून को चलाने को राजी बने। अगर हमने ऐसा किया तो हमारी आजादी लडाई को बडा भारी धक्का पहुँचेगा। हमारे मुल्क

के सामने अभी बडे २ सवाल हैं जो हमें तय करने हैं। इस लिये हमें ऐसी छोटी बातों में पडकर मुल्क की आजादी के सवाल को पीछें नहीं हटा देना चाहिये।

तत्पश्चात् श्री ठाकूरप्रसाद सक्सेना ने अपना संशोधन अंग्रेजी भाषा में पेश किया और हिन्दी में बोल्ते हुए कहा कि मेरा संशोधन इस प्रकार है, मूल प्रस्ताव में कहा गया है कि अखिल भारतवर्षीय कॉंग्रेस कमटी के उपर इसका निर्णय छोड दिया जाय कि वह फैसला करे कि हम मंत्रिपद स्वीकार करें या नहीं, यह अधिकार तो हम प्रतिनिधीयों का है और हम इसे छोडना नहीं चाहते, इसका मतलब यह नहीं कि मैं यह कहतां हूं कि अखिल भारत-वर्षीय कॉंग्रेस कमेटी जिम्मेदाराना तौर पर काम न करेगी। जरुर करेगी लेकिन जो अधिकार कॉंग्रेस विधान के अन्दर प्रतिनिधियों को दिया गया है वह उन्हीं का रहना चाहिए। ......

अंग्रेजी में श्री सत्यमूर्तीजी ने सब संशोधन का विरोध करते हुए मूल प्रस्ताव का समर्थन किया।

Mr. S. Satyamurthi :—

"I stand here to support the resolution moved by Babu Rajendra Prasad and oppose all the amendments.

The resolution as it stands merely says that this question shall be decided by the A. I. C. C. after the provincial Assembly elections are over as soon as it is practicable. I would like to ask why they should object to a decision being arrived at by the A. I. C. C. It will be immediately after the elections. The provincial Congress Committee will consult all district and local committees and they will send their recommendations along with their own and on that the A. I. C. C. will decide that it is a practically wise and stateman like decision which ought not to be questioned.

So far as the resolution is concerned, the main features of it are: no co-operation with the Act. Yes; A thousands times Yes. All congressmen are bound to accept this position, if they accept the election manifesto, which states unequivocally that the Congress stands for the rejection of the Act and nonco-operation with it.

Give us a chance to demonstrate in the proper manner before the proper authority that the best way to end the Act is by a acceptance of offices. I venture to suggest to all courageous men and women to wait patiently for a decision which is bound to be correct.

I conceive that when we have got a disciplined, honourable compact majorities amenable to congress discipline and willing to obey the orders of the Congress, the best way for us to accept the ministries and there is no fear of going astray. There is a great deal of misrepresentation about Cogress ministers going astray. I submit we can lay down three distinct conditions to safeguard against all

fears. That (1) there must be a disciplined compact congress majo rity willing to obey the Congress orders. (2) Ministers must be men in whom the Congress high commands have absolute confidence; and (3) When office is offered we will lay down condions in advance and we will accept ministery if those conditions in are accepted. The ministers will go there if they have a majority. They put forward their programme. If the Governor does not accept, the Ministers go to the legislatures and get their mandate. If they are not still accepted, they resign. Fresh election is held, they go and force their will again on the Governor. Then the alterative for the Governor, if he does not accept it, is to suspend the constitution. After that what will happen I need not say, there is Mahatma Gandhi and there is the country. We are here and we know what to do.

Today Mr. President, we have set up more than a 1000 candidates with an election menifesto which says that the decision on the question of office acceptance will be taken after the elections. Of course legally it is open to the congress to go back upon that. But it is not wise to stick to the election manifesto. I venture to suggest that nothing has happened of any importance since the A. I. C. C. meeting at Bombay to compel us to go back on the clear verdict of the election manifesto. Our friends say, if you want to reject the constitution you cannot accept office. Take the history of Ireland. De Valera accepted office under a constitution which he did not like and yet the first thing he did was to do away with the oath o' allegiance.

We are told that we must not accept office, because we must think in terms of deadlock and crisis. I cannot see any prospect of creating deadlock except by the methods of placing before the Governor our programme and asking him to accept our programme or reject it. I think we have passed nearly twenty resolutions, many of them advocating immediate action. Take the resolution on agration programme and debt moratorium, etc. In all the matters, Ministers can undoubtedly take the initiative under the Government of India Act. I agree that the Governor can come in the way. If this pro gramme means anything at all, and we who are delegates and candidates must show the masses of the country that we mean what we say, let us put forward this programme before the legislature. If we succeed we get the conflict with the Governor and a constitutional crisis immediately occurs.

So far as the first amendement is concerned, I want to say there is no use giving analogies of other countries. The last chapter on humanity has not yet been written. Therefore, there is no need to put these frightening phrases. Even in war there is peace. Therefore, I do not think we should say that we cannot put forward the demand for a constituent Assembly except after seizure of power.

As regards the second amendement I want to ask Sardar Sardul Singh Caveshar whether the Congress is not getting any majority.

The justice party would not be allowed to occupy ministry in Madras. We have suffered under them for long fifteen years. We want other delegates to understand our position. We are anxious that no more any kind of power should be given in the hands of the people who help the bureaucracy in repressing. We want therefore that we should be given real oppurtunity that we can wreck the constitution.

For any congressman to suggest that we cannot accept office because people might betray, shows an inferiority complex unworthy of the Indian National Congress. The arm of the Congress is long enough and the power of the Congress is big enough to see that such traitors are brought to book. It takes away the whole argument for Swaraj.

We must have courage, self-confidence and respect for one another. We must carry on fight on all fronts. If we get concrete majority in the legislatures we shall gain our object in ending the constitution. We are determined to bury the Act and on its grave will arise the spectacle of a free self-governing state for India."

श्री एस्. एम्. जोशीजी ने, सरदार शार्दूलसिंहजी के उपसूचना को जोरदार समर्थन करते हुए कहा।

मुंबई प्रांतांत ब्राह्मणेतर पक्षाला कांहीं वजन होतें तें त्यानें दिवाणगिऱ्या स्वीकारल्यानंतर घालविलें.

तत्पश्चात् श्री. एस्. एम. जोशी ने अपना संशोधन मरहटी भाषा में पेश किया और तत्पश्चात् श्री सरदार अमरसिंहजी सहगल ने इस प्रकार हिन्दी में भाषण दिया।

श्री. शंकररावजी देव ने प्रस्ताव का समर्थन मरहटी भाषा में किया।

प्रधान :—एक प्रतिनिधी नें बहस को बन्द करने का प्रस्ताव भेजा है इसलिए आप जो लोग चाहते हैं कि बहस समाप्त की जाय, वह हाथ उठा दें। हाथ उठाने पर बहस खतम करने का प्रस्ताव पास हुवा और तत्पश्चात् श्री राजेन्द्रबाबूने सारी बहस का उत्तर दिया। उन्होंने कहा:—

..............पहिला संशोधन तो श्री डांगे का है उसमें यह बतलाया है कि राष्ट्रीय पंचायत के पहिले क्या क्या होना चाहिए। हम भी तो कहते हैं कि राष्ट्रीय पंचायत तभी हो सकती है जब हममें शक्ति आजाय, और जब हम देश को इस प्रकार तैय्यार कर सकें कि वह जो भी अपनी मांग रक्खे उसके सामने हरएक शक्ति को झुकना पडे, जबतक हम में यह शक्ति न हो तबतक हमें समझना चाहिये कि राष्ट्रीय पंचायत नहीं आ सकती। हम तो यही चाहते हैं कि लोगों में राष्ट्रीय पंचायत बुलाने की शक्ति आसके और वही शक्ति इन लोगों में पैदा करना चाहते हैं। उन्होंने यह कहा है कि उन बातों को भी बतलाया जाय जिससे राष्ट्रमें वह शक्ति आवे कि वह राष्ट्रीय पंचायत बुला सके। .... भाई डांगे ने यह कहा है कि वह तरीका कब मालूम हो सकेगा यह कुछ पता नहीं, चूंकि हम कुछ कर नहीं सकते कि कब यह शक्ति आयेगी क्या इसी विजय से हाथ के उपर हाथ रखकर बैठ जाय, नहीं यह नही, हमने पिछले बर्सों में देश को सिखलाया है कि वह अपनी आजादी की लड़ाई के लिए सत्याग्रह अहिंसात्मक असहयोग का प्रयोग करें और हम कह सकते हैं कि हमारे भाई उस रास्ते पर चले हैं और उसके अनुसार चलकर बहुत कुछ कर दिखाया है कि किस प्रकार से कुछ निशस्त्र लोग एक बडी भारी शक्ति का मुकाबला कर सकते है। ....और कुछ संशोधन भी हमारे सामने इस प्रस्ताव में रक्खे गये हैं उन सबका सारांश यही है आज ही इस बात का फैसला कर दिया जाय कि हम कौन्सिलों में जाकर मंत्रीपद को स्वीकार नहीं करेंगे। हम कहना चाहते हैं कि जब मोका आजाय तभी इस सवाल का फैसला करना ठीक होगा। .... हम तो तीसरी ही बात कह रहे हैं, हम तो कहते हैं कि जबतक समय न आवे इस बात का फैसला ही नहीं करना चाहिए, चुनावकी लड़ाई लड़ी जा रही है एक ओर काँग्रेस है और दूसरी ओर विरोधी लोग भी बडे जबरदस्त हैं, उनसे मुकाबला है यह हमें उम्मीद है कि हम जीतेंगे, अगर इस मौकेपर हम यह दिखलावें कि कांग्रेस के आन्दर दो दल हैं तो हमारे विरोधी खुश होंगे, हमारे सामने इस वक्त यही प्रश्न है कि हम एकमत होकर इस चुनाव के युद्ध में कामयाब हों। .... एक तीसरा संशोधन है यह कि इस समय इसका निश्चय मुलतवी किया जाय और काँग्रेस का अधिवेशन करके इस प्रश्न का फैसला किया जाय। मैंने आपको बतलाया है कि इस प्रश्न का निश्चय प्रान्तीय तथा जिला काँग्रेस कमेटियों को पूछताछ कर लेने के बाद होगा, उनकी राय मांगी जायगी और जैसा उन सब का निश्चय होगा वैसाही किया जायगा। काँग्रेस के प्रतिनिधियों की अधिक संख्या प्रांतीय काँग्रेस कमेटियों में होती है जब उनकी राय आ जाती है तो प्रतिनिधिओं की ही राय आ जाती है। जो प्रस्ताव मैने रक्खा है वह बहुत सोचसमझ-कर रक्खा है, देश में इस समय स्थिति यह है कि हम अपनी चुनाव की लडाई को कामयाब बनायें। हम मंत्रीपद को स्वीकार करने के प्रश्न को महत्वपूर्ण नहीं समझते, सबसे जरुरी प्रश्न हमारे सामने तो स्वराज्य का है, इस प्रश्नपर जो भी फैसला होगा वह प्रश्न लोगों की सलाहसे ही होगा, हमने इस प्रस्ताव में साफ कह दिया है कि हम इस विधान के साथ सहयोग नहीं करेंगे और यहि हमने अपने चुनाव घोषणापत्र में कहा है। आशा है कि आप इस प्रस्ताव को स्वीकार करेंगे।

मत लेने पर श्री डांगे का संशोधन बहुमत से गिर गया, सरदार सार्दूलसिंह कवीश्वर

का संशोधन भी बहुमत से गिर गया, श्री सक्सेना का संशोधन भी बहुमत से गिर गया। श्री सरदार सार्दूलसिंहजी कविश्वर के संशोधन पर विभाग मांगा गया और संशोधन के पक्ष में २६२ राय आयी और ४५१ विरोध में आई। मूल प्रस्ताव बहुमत से पास हो गया।

१७ राष्ट्रीय सभा

कँग्रेस निश्चय करती है कि चुनाव के पश्चात् एक सभा बुलायी जाएगी जिसमें कँग्रेस की ओर से धारा सभाओं में चुने हुए सभासद तथा केन्द्रित धारा सभा के कँग्रेस सभासद अखिल भारतीय कँग्रेस कमेटियों और ऐसे दूसरे लोग जिनको कँग्रेस वर्किंग कमेटी उचित समझे, बुलाये जायंगे। यह सभा राष्ट्रीय विधान सभा की मांग को पेश करेगी, और सब प्रकार से यत्न करेगी कि प्रान्तीय नया कानून को तोडे तथा केन्द्रित फिडरल विधान को बनने ही न दें और कँग्रेस चुनाव घोषणापत्र, कँग्रेसद्वारा पास किये हुए प्रस्ताव तथा अखिल भारतवर्षीय कँग्रेस कमेटीद्वारा निर्धारित प्रस्तावों को किस प्रकार कार्यक्रम में परिणित किया जाय। कँग्रेस वार्किंग कमेटी इस सभा को बुलाने के उचित प्रबन्ध करेगी और इसको चालू करने के विधान को भी निर्धारित करेगी।

प्रस्ताव प्रधानजी के ओरसे रखा गया और पास हो गया।

१८ खेती हर प्रोग्राम

पिछले अधिवेशन में यह अच्छी तरह से जानते हुए, कि देश का सर्व प्रथम और मुख्य प्रश्न गरीबों को काम न मिलना और किसानों का कर्जदारी होना है, प्रान्तीय कँग्रेस कमेटियों को कँग्रेस ने आदेश किया था कि अखिल भारतवर्षीय कँग्रेस कमेटियोंको खेतीहार... प्रोग्राम बनाने के लिए अपनी २ शिफारिशें भेजें, बहुतसी प्रान्तीय कँग्रेस कमेटियों ने अभी ऐसी शिफारशें नहीं भेजी हैं, कँग्रेस को देर हो जानेसे अवश्य दुःख है। लेकिन बात यह भी हैं कि विषय बडा गूढ और बडा है और पर्याप्त पूछताछ का है। यह विश्वास करती है कि जिन प्रान्तीय सभाओं ने अभी अपनी २ शिफारशें नहीं भेजी हैं वह शीघ्रही भेजेंगी।

कँग्रेस का यह पक्का निश्चय है कि इस प्रश्न का अन्तिम निबटारा तो ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा लूटमार को समाप्त करना है और पुराने तथा सख्त लगान के कानूनों को एकदम बदलना है। यह महसूस करती है कि इस समय अधिक बोझ के कारण किसानों की दशा और भी खराब हो गयी है और उनके लिये तुरन्त ही साधनों की आवश्यकता है। अखिल भारतवर्षीय खेतीहर प्रोग्राम जबतक बने तबतक निम्मालिखित बातों के आधार पर काम करना चाहिये।

(१) वर्तमान आर्थिक अवस्था के अनुसार लगान और मालगुजारी कमः की जाये। कम से कम दोनों में ५० प्रतिशत कमी की जाय। (२) अलाभदायक काश्तपर लगान व भूमिकर न लिया जाय। (३) खेतीहर की आमदनी पर इनकमटॅक्स के समान कर लगाया जाय, और निश्चित आमदनी से अधिक पर मृत्युकर लगाया जाय, (४) नहर और सिंचाई पर वास्तविक रुप से कर कम किया जाय, (५) जमीनदारी (सामन्तशाही) करों, और

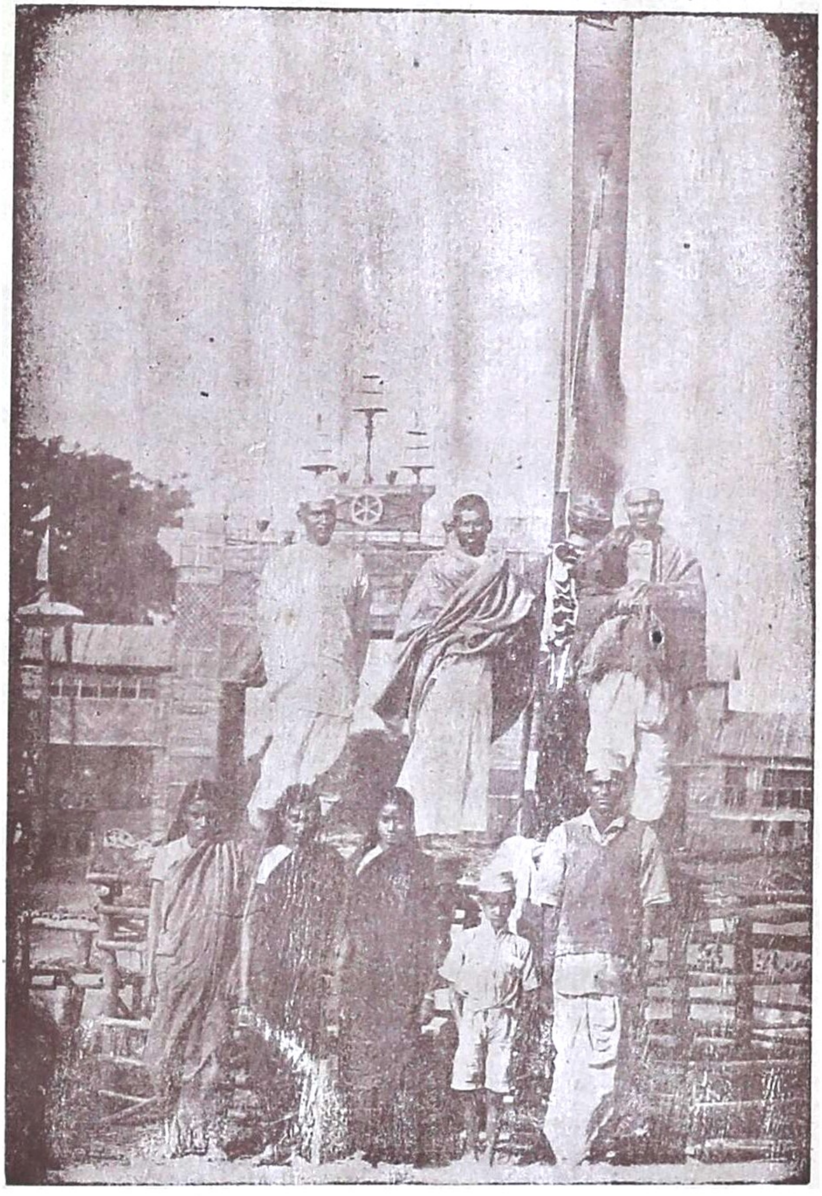

'ध्वज-ज्योति-पूजन'
स्वागताध्यक्ष शंकररावजी देव (बीचके), ध. ना. चौधरी, प्रधानमंत्री (बाएं तरफके)

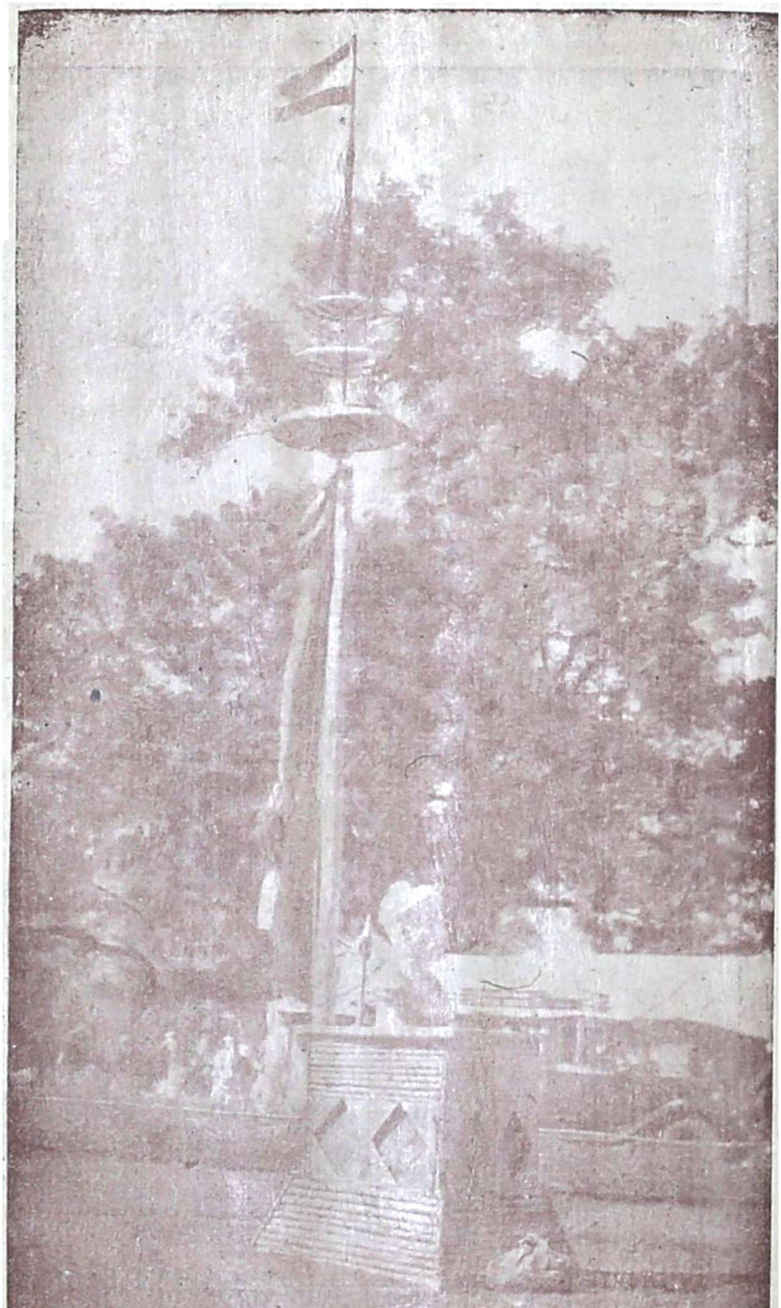

तिलक-नगरके प्रवेश-द्वारमें

बेगारों का अन्त कर दिया जाय, लगान के अलावा अन्य मौजूदा कर पर कानूनी करार दिया जावे, (६) खेती पर किसान का स्थिर रूपसे अधिकार स्वीकार किया जाय, (७) छोटे २ काश्तों को इकठ्ठा किया जाय और सामूहि खेती के लिये प्रयत्न किया जाय, (८) पीस डालनेवाला देहाती ऋण का बोझ हटा दिया जाय, किसानों के कर्जे की जांच के लिये एक ट्रिब्यूनल बैठाया जाय, जो किसानों को उन कर्जोंसे मुक्त कर के जिन को वे चुकाने में असमर्थ हो और जो उन्होंने अज्ञान में ले लिये हों, (९) बकाया लगान छोड दिया जाय। (१०) कारागार छोडी जाय। तालाब, कुआं, जोहड, जंगल और ऐसी चीजों पर किसानों का अधिकार स्वीकार किया जाय और इन अधिकारों से उन्हें कभी वंचित न किया जाय (११) बचे हुए लगान को उसी प्रकार वसूल किया जाय जैसे माल का कर्जा वसूल कियां जाता है, जमीनसे बेदखल कर के नहीं। (१२) खेतीहर मजदूरों को भरपेट भोजन तथा काम करने में अधिक असुविधाएं न हों, उनके लिये कानून होना चाहिये। (१३) किसान संघों को माना जाय।

तत्पश्चात् श्री गाडगीलजी ने किसानसम्बंधी प्रस्ताव पेश करते हुए कहा:—

या ठरावांत शेतकऱ्यांच्या हितासंबंधींच्या बाबींचा विचार करण्यांत आला असून कर्ज, खण्ड, सावकार, जमीनदार वगैरे बाबतींत यांत स्पष्टीकरण केलें आहे. हा ठराव म. प्रां. कॉं. कमिटीच्या शेतकी कमिटीच्या रिपोर्टानुसार केला आहे. पण त्यांत खोतीसंबंधीं बिलकूल उल्लेख नाहीं.

श्री. भूलाभाई देसाई ने प्रस्ताव का समर्थन हिन्दी में बोलते हुए किया।

सभापतिजी, बहनो और भाइओ, मैं प्रस्ताव को पढकर सुनाता हूं, सुनाया और कहा कि मैंने इस बारे में लखनऊ में बहुतसी चीजें रक्खी थीं, इन वक्त दो तीन चीजें रखने की इजाजत मांगता हूं, आप इस प्रस्तावको सुनकर यह न समझे कि किसानों की तरक्की करने के जो भी तरीके हैं सब इसमें आगये हैं। इस सवालपर सिफारिशें प्रान्तीय कांग्रेस कमिटीयों से मांगी गई थीं, वें अभीतक नहीं आईं, लेकिन यह सवाल इतना अल्प है कि इसमें देर नहीं होना चाहिए, चाहे हमारा राज्य हो या परराज्य हो, हमारे मुल्क में सबसे बडा सवाल किसानों का है हमारे देश की आमदनी क्या है, कुछ भी नहीं और मुल्कों की आमदनी देखी जाय तो मालूम होगा कि हमारी आमदनी सालभर में १५ रुपये है, विलायत में एक महिने में १५ रुपये हैं, हमें अभी कितनी बडी मंजिल चलनी है, शर्म की बात है कि अंग्रेजों की यहां १५० वर्ष हुकुमत रही और इस लम्बे अरसे में हमारी यह हालत हो पाई है, इस सबकी वजह यह है कि हमारे किसानों से बहुत जादा कर लिये जाते हैं, यह ध्यान में नहीं रक्खा जाता कि आमदनी किसानों की क्या है, गल्ले की कीमत कितनी गिर गयी है, पहिले माल्गुजारी ३ रुपये देते थे तो अब १० रुपये देने पडते हैं, फिर कहां से पैसा बचे और बातों के लिए।

हमारे किसान १५ व २० लाख फीतादाद कर्जे में है, किसानों का सवाल बडा है, कॉंग्रेस का आगे का प्रोग्राम किसानों का ही प्रोग्राम है, काश्तकारके लिये कर्जे का सवाल सबसे जबर-

दस्त सवाल है, जब किसान एकबार कर्जा ले लेता है तो उससे कभी नहीं निकलता, यह रकम दुगनी व तिगुनी होती चली जाती है, इस तरह के कर्जे की रकम १२ सो करोड रुपया आंका जाता है जबतक किसान इस कर्जे से मुक्त न होगा उसका उद्धार न होगा, यह खुशी की बात है कि जो ऐसी बात थी कि किसानों को पकड कर बेगार लेओ वह अब नहीं है, यह यह और कहा गया है कि उसे जमिन से न निकाला जाय। काँग्रेस का मुख्य धर्म किसानों का उद्धार करना है।

प्रधान :—यह बडे महत्व का प्रश्न है, इसमें मूल बातें ही प्रस्ताव में रक्खी गई हैं, कोई सारा किसानों का प्रोग्राम यह नहीं है, जो कोई जरुरी बाते हैं उहें ही इस प्रस्ताव में रक्खी गई है। प्रस्ताव मत लेने पर पास हो गया।

१९ मतदाताओं से आवेदन

काँग्रेस राष्ट्र का ध्यान अब चुनाव की और खेंचती है जो शीघ्रही सब प्रांतो में होनेवाला है, जिसमें काँग्रेस चुनाव घोषणापत्र की नीति के अनुसार कार्य करने के लिये एक हजार से उपर काँग्रेस उम्मेद्वार खडे किये गये हैं। इस लडाई में काँग्रेस को साम्राज्यवादी ताकतों तथा ऐसे लोगों से मुकाबला करना है जिनके पास धन है और शक्ति है, काँग्रेस, स्त्री व पुरुष मतदाताओं से आवेदन करती है कि वह भारत की स्वतन्त्रता के लिये काँग्रेस उम्मेद्वारों को राय दें, और आशा करती है कि वे इस तथा इससे बडे युद्ध के लिये काँग्रेस का साथ देंगे।

सरदार वल्लभभाई पटेल ने प्रस्ताव पेश करते हुए हिन्दुस्तानी में कहा:—

सभापतिजी, बहनो और भाईयो।

इस प्रस्ताव का मतलब यह है कि मुल्क में चन्द दिनों बाद जो आम चुनाव आनेवाला है उसकी ओर यह प्रस्ताव जनता का ध्यान खींचता है, काँग्रेस ने १००० से ज्यादा काँग्रेस टिकट पर उम्मेद्वार खडे किये हैं, भारतवर्ष एक बहुत बडा देश है, यह पहिला ही मौका है कि इतने कई लाख आदमी अपनी राय देंगे। कई वर्षों की कुरबानी के बाद ३॥ करोड आदमीयों को सारे हिन्दुस्तान में राय देने का अधिकार मिला है। आप के सामने चुनाव के रोज एकही प्रश्न होगा, आपको तय करना होगा कि यदि आप स्वाधीनता चाहते हैं तो काँग्रेस को वोट दो और यदि गुलामी चाहते हो तो आप उन्हें वोट दे सकते है जो काँग्रेस के बाहर हैं। .... हमने योग्य और देशप्रेमी लोग खडे किये हैं, उनके मुकाबले में बडे २ राजा, जमीनदार, जिन्हें सरकार गुप्त रूपसे सहायता दे रही है, लड रहे हैं और हमें उन सब से लडना है। इस लिये आपका सहयोग आवश्यक है। हम आप की पूर्ण हार्दिक सहायता और सर्वसम्मत वोट चाहते हैं। हमारे प्रतिद्वन्द्वियों के पास अमित साधन और धन है, परन्तु कोई परवाह नहीं। हमें इस बात का विश्वास है कि जनवर्ग हमारे साथ है। काँग्रेस नगर में लाखों व्यक्तिओं की जो भरमार हुई है उससे यह बात पूर्णरूपसे स्पष्ट हो गई है। .... अब आपको यह दिखाना है कि आप स्वाधीनता चाहते हैं, अगर आप गलती कर गये तो आप यह याद रक्खें कि हमारी हार होने पर सरकार फौरन यह घोषणा कर देगी कि भारतवासी काँग्रेस के साथ नहीं, बल्कि सरकार के साथ हैं।

स्वराज्य कोई थोडे से आदमियों का राज तो नहीं है, वह तो सारे देश की जनता का है, हमारे सब करोडों हिन्दुस्तानी भाई चाहे वह हिन्दु हो या मुसलमान, उच्च जाति के हो या नहीं, मर्द या औरत यह सब स्वराज्य में हिस्सेदार होंगे। सब अपने २ गांवों में, शहरों में, जिलों में या प्रान्त में और देश में पंच चुनेंगे और इन पंचों के द्वारा देश का काम चलावेंगे, तो यह पंचायती राज्य होगा।

ऐसे पंचायती राज्य में जनता के हाथ में सारी शक्ति होगी और वह जो चाहेगी कर सकेगी। आजकल तो थोडे से बडे हाकिम ऊपर बैठकर हुकूमत करते हैं, इनको जनता की मर्जी से क्या मतलब ? इसी स्वराज्य या पंचायती राज्य के लिये कांग्रेस कोशिश करती है, जबतक यह नहीं आता तब तक जनता के दुःख दूर नहीं हो सकते।

यह स्वराज्य कैसे आवे ? अपनी शक्ति बढाने से, और शक्ति संगठन से बढती है, कांग्रेस का देशभर का संगठन इसी लिये बनाया गया। जितनी कांग्रेस की शक्ति बढती जाती है उतनी ही देश के जनता की ताकत बढती है।

इस काँग्रेस के संगठन को हमें बढाना है, गांव २ में उसकी कमेटियां और पंचायतें फैलानी हैं जितना यह फैले उतनाही हम स्वराज्य के करीब जाते हैं। इस लिये आप सब गांवों में काँग्रेस की पंचायतें बनाइये, उसमें अभी गांव के लोग मिल सकते हैं। दो महिने बाद नई कौन्सिलों का चुनाव होगा। कौन्सिलों में जाने से हमें स्वराज्य नहीं मिलेगा, स्वराज्य के लिये तो हमें बाहर गांवों में शहरों में बहुत काम करने हैं। लेकिन इस स्वराज्य के लडाई में कुछ सहायता हम को कौन्सिलों में अपने उम्मेदवारों को भेजने से मिल सकती है। वहां अक्सर ऐसे लोग जाते हैं जो काँग्रेस और स्वराज्य के विरोधी होते हैं, जो किसानों के खिलाफ काम करते हैं और अंग्रेजी सरकार को साथ दिया करते हैं। ऐसे लोग हमारे काम को हानी पहुँचाते हैं। इस लिये इन लोगों को हमें वहां भेजना चाहिये। इनकी जगह तगडे स्वराज्यवादी काँग्रेसी लोग जो किसानों के हित के लिये खडे हैं, उनको भेजना है।

इसलिये काँग्रेस ने कौन्सिलों के लिये उम्मीदवार खडे किये हैं और जो लोग काँग्रेस के सिद्धान्तों को पसन्द करते हैं और स्वराज्य की लडाई में भाग लिया चाहते हैं, किसानों के बोझ हटाना चाहते हैं और उनका काँग्रेस के उम्मेदवारों को वोट देना चाहिये।

मैं आशा करता हूं कि सब किसान भाई और बहिन सब जिलों में काँग्रेस उम्मेदवारों को ही वोट देंगे।

श्री गंगाधररावजी देशपांडेजी ने इस प्रस्ताव का जोरदार समर्थन करते हुए कहाः—

राबणाऱ्या लोकांना मतें न देतां १ एप्रीलपूर्वी टाकाऊ नवीन घटना नाहींशी करण्यासाठीं चंग बांधणाऱ्या काँग्रेसच्याच उमेदवारांना मतें द्या (टाळ्या) काँग्रेसशिवाय अशी कोणतीहि संस्था नाहीं कीं, तिनें लोकांना समर्थ बनविले आहे व त्यांच्यामध्यें स्वातन्त्र्याची लालसा उत्पन्न केली आहे (टाळ्या). महाराष्ट्रांत काँग्रेसवर खोटे नाटे आरोप करणारे लोक आहेत हें मला माहीत आहे. काँग्रेसमध्यें पू. पं. मालवियांसारखे धर्माभिमानी आहेत. काँग्रेस मुसलमानधार्जिणी झाली असती तर त्यांनीं प्रथम काँग्रेस सोडली असती. पण आजारी असतांनाही फैजपूरसारख्या खेड्यांतील काँग्रेसला ते हजर राहिलेले आहेत. (टाळ्या) त्यांनीं काँग्रेस-

मध्यें भाग घेतलेला आहे. तेव्हां कोणत्या ना कोणत्या तरी कारणानें काँग्रेसला नामोहरम करण्यासाठीं ज्यांनीं चंग बांधला आहे त्यांच्या म्हणण्याकडे लक्ष देऊं नका आणि काँग्रेसच्याच उमेदवारांना मतें द्या. (टाळ्या) काँग्रेसशीं एकनिष्ठ राहणें हीच लोकमान्यांची शिकवण आहे (टाळ्या) म्हणून लो. टिळकांच्या महाराष्ट्रानें काँग्रेसच्याच उमेदवारांनाच मतें देऊन ते निवडून येण्यासाठीं प्रयत्न केला पाहिजे (टाळ्या). बाहेर उभे राहून काँग्रेसला शिकवण देईन असें लो० टिळकांनीं कधींच म्हटलेलें नाहीं. काँग्रेसमध्यें राहून त्यांनीं तन, मन, धन स्वातंत्र्यासाठीं खर्च केलेले आहे ही गोष्ट लक्षांत ठेवून काँग्रेसच्या उमेदवारांना मतें द्या आणि स्वातंत्र्याला पाठिंबा द्या.

काँग्रेसचें सरकार जरी अस्तित्वांत आलें तरी काँग्रेस धर्माचे बाबतींत कधींही ढवळाढवळ करणार नाहीं. जो कोणी हिंदुस्थानास अधिक काळपर्यंत परकीय सत्तेखालीं ठेवण्याचा प्रयत्न करील तेवढाच काँग्रेसला फक्त एकच शत्रु आहे.

तत्पश्चात् श्री केशवराव जेधेजी ने कहा :–

काँग्रेसच्या उमेदवारांत ब्राह्मणेतर लोकच जास्त उमेदवार निवडण्यांत आले आहेत. तरी काँग्रेसच्या उमेदवारांना निवडून देऊन महाराष्ट्राचें नांव राखा. समान दर्जा मिळण्यासाठींच काँग्रेस प्रयत्न करीत आहे. म्हणून बहुजनसमाजानें काँग्रेसच्या उमेदवारांना आपला पाठिंबा दिला पाहिजे (टाळ्या). आज काँग्रेस बहुजनसमाजाच्या स्वराज्यासाठीं चळवळ करीत आहे; म्हणूनही बहुजनसमाजानें काँग्रेसच्याच उमेदवारांना निवडून देऊन काँग्रेसची इभ्रत राखावी अशी माझी विनंति आहे.

२०–राजगद्दी तथा दूसरे साम्राज्यवादी कार्यों से असहयोग

भारत को स्वतन्त्र करने का जो प्रश्न कांग्रेस ने लिया हुआ है, साथ ही यह कि साम्राज्य वादी सरकार से मुक्ति मिले और भारतीय जनता का लूट खसोट से छुटकारा हो। बहुत से सालों से ऐसी नीतिका अवलम्बन किया है कि ऐसे कार्यों में सहयोग न दिया जाय, जिससे अंग्रेजी साम्राज्यवाद या उसकी शानका सिक्का बैठता हो, यह नीति कांग्रेस सदस्यों को माननी ही चाहिए। विशेषतया कांग्रेस यह प्रकट कर देना चाहती है कि कांग्रेस सदस्य नये बादशाह की ताजपोशी के बारे में जितने भी काम होंगे उनमें कोई हिस्सा न लेंगे, और विश्वास करती है कि राष्ट्र इन सब कार्यों से अलग रहेगा। कांग्रेस यह साफ २ प्रकट कर देना चाहती है कि इसका अर्थ यह नहीं कि बादशाह की जात के लिये कोई बुरा विचार या बेअदबी का जाहिर करना है।

प्रस्ताव प्रधानजी की ओर से रक्खा गया और सर्वसम्मति से पास हुआ।

२१—१ अप्रैल की हड़ताल

जोरदार तौरपर भारतीय राष्ट्र की इच्छा प्रकट करने के लिए कि वह इस बने हुए नए कानून का मुकाबला करेगी और यह भी प्रकट करने के लिये कि इसे नष्ट करने कि लिये देशव्यापी जनसाधारण में इसका आन्दोलन हो, कांग्रेस राष्ट्र से अपील करती है कि वह १ पहिली अप्रैल को जब यह कानून भारत में लागू होगा हड़ताल रक्खे।

प्रस्ताव प्रधानजी की ओरसे पेश हुवा और सर्व सम्मतिसे पास हुआ।

२२—आगामी अधिवेशन

यह निश्चय किया जाता है कि कांग्रेस का आगामी अधिवेशन गुजरात में किया जाय।

सरदार पटेलजी ने प्रस्ताव पेश करते हुए कहा कि आगे के साल कॉंग्रेस का अधिवेशन करने की जम्मेदारी बढती जाती है, अब कॉंग्रेस गावों की कांग्रेस होती जाती है, हम कोशिश करेंगे कि इस जिम्मेदारी को पूरा करें।

प्रस्ताव मंजूर हुआ।

धन्यवाद का आदान प्रदान

अन्त में राजेन्द्र बाबू ने कांग्रेस कार्य समिति की ओर से फैजपूर स्वागत समिति को धन्यवाद देते हुए बतलाया कि १० मास पूर्व किस दुखद स्थिति में श्री नेहरूजी स्वदेश लौटे और हमारे राष्ट्र की बागडोर अपने हार्थों में ली, हम लोग तो उस दिन की प्रतिक्षा कर रहे हैं जब वह कांग्रेस के प्रधान ही नहीं सारे देश के प्रधान होंगे। श्री शंकरराव देवजी तथा इतर सहयोगियों ने जिस सुकरता के साथ यह ग्राम अधिवेशन कामयाब बनाया है वह सराहनीय है।

तत्पश्चात् श्री. अणे ने मराटी में भाषण दिया और कांग्रेस का अधिवेशन सफल बनाने के लिये कार्यकर्ताओं को धन्यवाद दिया। तत्पश्चात् लो. ना. अणेजी ने कहा :—

वाङ्‌ यज्ञाचे पुरोहित पं. जवाहरलाल नेहरू यांचें मी अभिनन्दन करतों. पं. जवाहरलाल आमच्या पेक्षां तरुण असून आज आमच्या पेक्षां वृद्धपणानें कांग्रेसचें कार्य धडाडीनें चालवीत आहेत (टाळ्या). कायदेभंगाच्या चळवळीनंतर जें शैथिल्य प्राप्त झालें तें नाहींसें करुन राष्ट्रांत नवसंचार उत्पन्न केला म्हणूनच पं. जवाहरलाल नेहरू यांना तिसऱ्यांदां अध्यक्षत्व मिळविण्याचा अपूर्व कोणालाही न मिळालेला मान मिळाला याबद्दल त्यांच्या धडाडीच्या कार्यकुशलतेबद्दल आपण त्यांचें अभिनन्दन करणें आपलें कर्तव्य आहे (टाळ्या). हिंदुस्थान रिपब्लिकचें पहिले अध्यक्ष म्हणून पं. जवाहरलाल नेहरू होतील यांत शंका नाहीं (टाळ्यांचा गजर पं. जवाहरलाल यांचा जयजयकार). फजितपूर होईल अशी टीका चालू असतांना फजितपूर ऐवजीं फत्तेपुर म्हणून येथें जो विजय मिळविला त्याबद्दल मी देव, दास्ताने व गाडगीळ यांचे आभार मानतों. स्वयंसेविकांचे तर मी मुद्दाम आभार मानीत आहे (टाळ्या).

जिसका उत्तर देते हुये राष्ट्रपति पं. जवाहरलाल नेहरुजी ने अपना निम्नलिखित अन्तिम भाषण दिया :–

दो दिनों मे आपने बहुत कुछ देखा और बहु कुछ सुना। फिर भी मैं यहां अन्तिमबार खडा हुआ हूं। बाबू राजेन्द्र प्रसादजी और श्रीयुत अणेजी ने संगठन-कर्ताओं की जो प्रशंसा की है मैं भी उसमें सम्मीलित होता हूं। संयोजकों के ऊपर बडी भारी जिम्मेदारी थी और उन्होंने इसे बडे शानदार ढंग से अदा किया है। उनके कार्यकर्ताओं ने सहयोग की असाधारण भावना और कर्तव्य के प्रति अगाध भक्ति का परिचय दिया है। स्वराज्य की कुंजी हमारे हाथ आगई है। इसको कोई भी विदेशी शक्ति हमारे हार्थों से छीन नहीं सकती।

हां! जब हम में फूट पड जाती है तो वे उसका फायदा उठाते हैं। आप लाखों की संख्या में काँग्रेस और प्रदर्शिनी में आये हैं और आप में से हरएक उस कामका गवाह है कि जिसका कार्यकर्ताओं को सामना करना पडा है।

बाबू राजेन्द्र प्रसादजी और श्रीयुत अणेजी मुझे प्यार करते हैं। आप बहिनें और भाई मुझे प्यार करते हैं। कुछ दिन हुये किसी ने कहा था कि मैं कांग्रेस का बिगडा हुआ बच्चा हूं और कांग्रेस तथा देश को ले डूबूंगा। मैंने सोचा था कि यह धारणा गलत होगी क्यों कि मैंने कभी किसी को नहीं डुबाया, अब मैं सोचता हूं कि उन महाशय का यह कहना ठीक ही था कि मैं कांग्रेस का बिगडा हुआ बचा हूं। आपने अपने प्रेम से और प्रशंसाओं की बौछाड से मेरे अभिमान को बढा दिया है। आपने मुझे आसमान पर चढा दिया है, क्यों कि आप मेरे सम्बन्ध में बडी २ बातें करतें हैं। यह ठीक नहीं, हमें एक दूसरे के उपर प्रशंसाओं की अत्यधिक बौछाड़ नहीं करना चाहिये। आप नहीं सोचते कि हम और मेरे पूर्व नेता किस प्रकार विजय के इस उच्च स्तंभ पर पहुंचे हैं। हम छोटे आदमी थे। हम में अनेक गुण और अवगुण थे। समय ने हमे मौका दिया और हम एक महान् नेता के झण्डे तले महान् कार्य में जुट गये; यह एक महान् उत्तरदायित्व कार्य है। और उसमें हजारो के भाग्य हमारे पास सिन्निहित हैं और इसमें बहुतों की जिन्दगी और मौत अपेक्षित है। हमारे पास जो ताकत है वह सब आप ही से आपके प्रेम और भक्ति से आई है। यह ताकत आपकी ही है और आपने ही यह बडप्पन बख्शा है यदि आप अपनी ताकत वापिस ले लें, यदि आप अपने आशीर्वादों को हटा लें तो शक्ति कमजोर हो जायगी और गिर पडेगी।

स्वागताध्यक्ष का भाषण

काँग्रेस स्वागत समिति के अध्यक्ष श्रीयुत शंकरराव देवजी ने एक संक्षिप्त भाषण में प्रबन्ध की कमियों के लिये दर्शकों और डेलिगेटों से क्षमायाचना की। आपने यह आश्वासन दिलाया कि बाह्य आरामों में चाहे कितनी ही कमियां रह गई हों, परन्तु हृदय से हमने शुरुसे ही भरसक प्रयत्न किया था। आपने विभिन्न संघों और व्यक्तियों को धन्यवाद दिया क्यों कि उनके सहयोग और सहायता के बिना स्वागत समिति अपने कन्धेपर आपके बडे भारी काम को पूर्ण नहीं कर सकती थी। आपने उन स्वयंसेवकों की सेवाओं का खास तौर से बखान किया जिन्होंने दर्शकों और डेलिगेटों के आराम के लिये कुछ उठा न रखा।

अधिवेशन समाप्त

राष्ट्रीय कांग्रेस का ५० वां अधिवेशन बडे ही शाना के साथ समाप्त हो गया। बिदा होने से पूर्व समस्त उपस्थित जनता ने शान्त भावसे खडे होकर "वन्दे मातरम्" का अमर गान गाया।

Appendix A

राष्ट्र सभा ५० वा अधिवेशन

फैजपूर १९३६

स्वागत-कारिणी सभा

अधिकारी-मंडल

प्रमुख—श्री. शंकरराव देव

मुख्य मन्त्रि	सेनापति
श्री. ध. ना. चौधरी	श्री. रावसाहेब पटवर्धन
मन्त्रि	कोषाध्यक्ष
श्री. वा. वि. दास्ताने	श्री. पुनमचंद ओंकारदास
,, गोकुळभाई भट्ट	,, बा. चिं. लागू
,, गो. आ. देशपांडे	,, रा. ग. लाटे
,, शंकरराव ठकार	,, पुरुषोत्तम कानजी
,, शंकरशेट काबरे	
,, देवकीनंदन नारायण	

उपप्रमुख

श्री. काकासाहेब गाडगोळ	श्री. उखाभाई हुनाभाई वाणी
,, केशवराव जेधे	,, शालीग्राम रामचंद्र भारतीया
,, अच्युतराव पटवर्धन	,, आ. भा. पंडीत
,, पांडुअण्णा शिराळकर	,, राजमल लखीचंद
,, लक्ष्मीबाई ठुसे	,, रमणीकराय मेहता
,, माधव मार्तंड देशपांडे	,, रामकृष्णशेट जाजू
,, युसुफ मियां काझी	,, गोपाळरावजी गोगटे
,, वासुकाका जोशी	

उपसमिती और उनके अधिकारी

१ निधि समिति

श्री. राजमल लखीचंद (प्रमुख)

,, देवकीनंदन नारायण
,, अच्युतराव पटवर्धन
,, ह. मो. जोशी
} (मन्त्रि)

रचना समिति	श्री. वा. वि. दास्ताने	(प्रमुख)
	,, बा. र. देशपांडे	(मन्त्रि)
दफ्तर	,, गो. आ. देशपांडे	(मन्त्रि)
भोजन समिति	,, गोकुळभाई भट्ट	(प्रमुख)
	,, य. गो. नाईक	(मन्त्रि)
निवास व्यवस्था समिति	,, शंकरराव ठकार	(प्रमुख)
स्टेशन स्वागत समिति	,, बाळासाहेब खेर	(प्रमुख)
वहातुक	,, ना. ग. गोरे	(प्रमुख)
	,, मु. वि. दास्ताने	(मन्त्रि)
	,, एस्. जी. साठे	(मंन्त्रि)
प्रसिद्धि समिति	,, र. के. खाडीलकर	(प्रमुख)
प्रचार समिति	,, श्री. म. जोशी	(प्रमुख)
शुश्रूषा समिति	डॉ. भी. ग्र. चिकेरूर	(प्रमुख)
	डॉ. य. कृ. सोवनी	(मन्त्रि)
	डॉ. गो. ब. गोडबोले	(मन्त्रि)
स्वदेशी बाजार समिति	श्री. सुकाभाऊ चौधरी	(प्रमुख)
	,, रिषभदास प्रतापमल	(मन्त्रि)
स्वच्छता समिति	,, अप्पासाहेब पटवर्धन	(प्रमुख)
अन्नसामुग्री समिति	,, शंकरशेट काबरे	(प्रमुख)
जनरल स्टोअर्स	,, हुकमीचंद चोथमल	(प्रमुख)
	,, रिषभदास प्रतापमल	(मन्त्रि)
पाणी व्यवस्था समिति	,, अप्पासाहेब रणदिवे	
दिवाबत्ती व्यवस्था समिति	,, देवकीनंद नारायण	
किसान स्वागत समिति	,, सुकाभाऊ चौधरी	
हिसाब खाता	,, र. श्री. धोत्रे	
स्त्री स्वयंसेवक दल	,, प्रेमाबाई कंटक	
खादी ग्राम-उद्योग प्रदर्शन	,, वैकुंठभाई मेहता	
	,, अण्णासाहेब सहस्रबुद्धे	

Appendix A

राष्ट्रीय-सभा ५० वा अधिवेशन, फैजपूर, १९३६

स्वागत-कारिणी समिति

ता. ३० मई १९३६ से ता. ९ जुलै १९३७ आखीर तक का

आयव्यय पत्रक

आय

स्वागत कारीणी समिति सभ्य शुल्क		४४,०९६—०—०
दान		७,६९८-११—६
प्रकीर्ण	३,८८९-१४—६	
स्वयंसेवक दल	३८२—५—०	
स्वच्छता समिति	२६—८—०	
पाणी समिति	३,४००—०—०	
	७६९८-११—६	
निवास किराया		११,२८७—०—३
कुटुंब गृह	२,२८५—०—०	
प्रेक्षक निवास	६,९४३—०—३	
प्रतिनिधि निवास	२,०५९—०—०	
	११२८७—०—३	
प्रवेशिका विक्री		४२,१३०-१०—९
विषय कारिणी सभा	७,२६१—७—०	
अधिवेशन	३४,८६९—३—९	
	४२,१३०-१०—९	
समितिओं का उत्पन्न		९,६९६-१३—९
भोजन व्यवस्था समिति	४,६६०-१४—६	
स्वदेशी बाजार समिति	४,४३०—६—०	
खेती	६०५—९—३	
	९६९६-१३—९	
व्याज		७४-१४—०
		१,१४,९८४—२—३

व्यय

रचना समिति	रु०	२८,७०७—४—३
दिवाबत्ती समिति	,,	५,५८९—४—९
शुश्रूषा समिति	,,	४७०—३—९
भोजन व्य. समिति	,,	१७,१२६-१३—०
स्वयंसेवक दल	,,	१०,००२—२—६
प्रसिद्धी प्रचार समिति	,,	२,८९८—३—०
पाणी	,,	३,६७७-१४—६
स्वच्छता समिति	,,	१,८६२-१५—३
निधि समिति	,,	१,२८४-१५—०
जनरल स्टोअर्स	,,	१,४६०-१२—९
स्वागतसमिति दफ्तर	,,	५,७८६-१५—३
राष्ट्राधिपति और नेता स्वागत	,,	७४९—८—६
ट्रान्सपोर्ट कमिटी	,,	८९८—४—३
डेकारेशन	,,	१,०२१—६—६
निवास व्यवस्था समिति	,,	२६०-१४—०
प्रकीर्ण	,,	४२८-११—३
लाउड स्पीकर्स	,,	१,०००—०—०
जमिन किराय तथा लगान	,,	७,९३२-११—३
खानदेश प्रचार	,,	१२८-२—३
हुण्डावण		२३-१४—६
रिपोर्ट छपाई तथा अन्य खर्च के लिये	,,	३,०००—०—०
		९४,३१०-१५—९
आय की अधिकता	,,	२०,६७३—२—६
		१,१४,९८४—२—३

जाँचा और सही पाया	(सही) ध. ना. चौधरी	(सही) राजमल लखीचंद
(सही) गो. द. आपटे	मुख्य मन्त्रि	प्रमुख
अन्वेषक	(सही) पुनमचंद ओंकारदास	निधि समिति
पूना, ता. ९-७-३७	(,,) बा. चिं. लागू	(सही) देवकीनंदन नारायण
	(,,) रा. ग. लाटे	मन्त्रि
	(,,) पुरुषोत्तम कानजी	निधि समिति
	कोषाध्यक्ष	

राष्ट्रसभा ५० वा अधिवेशन

फैजपूर १९३६

स्वागत कारिणी समिति

उपसमितो ओं का ब्योरा

रचना समिति २८७०७-४-३

मजदुरी	१४,७२७-१०-०
सामान खरेदी	९,८३९-१५-९
,, किराया	३,०५४-८-०
प्रवास	९८९-१५-६
तार-टपाल	७०-६-०
फुटकर	२४-१३-०
	२८,७०७- ४-३

भोजन समिति १७,१२६-१३-०

भोजन सामुग्री	११,१४०-७-९
मजदुरी	३,९६२-९-३
प्रवास	२२५-४-०
प्राथमिक खर्च	१,७९८-८-०
	१७,१२६-१३-०

स्वागत कारिणी समिति दफ्तर ५,७८६-१५-३

वेतन	१,२९८-१४-०
टेलिफोन	२९०-११-०
मोटर खर्च	१,४२४-१४-०
प्रवास	४८०-१४-६
लेखनसाहित्य	१२४-१३-६
छपाई	२८०-४-०
मकान किराया	१३५-०-०
तार-टपाल	२५९-९-०
प्राथमिक खर्च तथा फुटकर	१,४९१-१५-३
	५,७८६-१५-३

दिवाबत्ती समिति ५५८९–४–९

लाल टेन मोल	७४—३–०
तेल	३७८—०–३
बिजली	२६०६—०–०
पेट्रोमेक्स मोल	२४—५–०
„ किराया	२,२७०—४–०
मजदुरी वगैरे	११४—१–०
फुटकर अन्य खर्च	१२२—७–६
	५,५८९—४–९

शुश्रूषा समिति ४७०–३–०

औषधि मोल	१३६—९–०
वेतन	१००—०–०
प्रवास	११७–१३–०
फुटकर अन्य खर्च (रुग्णालय का)	११५–१३–०
	४७०—३–०

स्वयंसेवक दल १०,००२–२–६

गणवेष	४,१७८—४–९
प्रवास	३,७८९–१४–०
ट्रेनिग कँप खर्च	१,६१५—०–६
फुटकर अन्य खर्च	४१८–१५–३
	१०,००२—२–६

प्रसिद्धि प्रचार २,८९८–३–०

	आय	व्यय
फैजपूर गाईड		२१५—२–०
रिपोर्टिंग		३२२—०–०
वेतन		१३७—०–०
राष्ट्राधिपति तथा स्वागत कारिणी के प्रमुख के भाषण और अन्य छपाई		१,७५०–१०–६
प्रवास		५१३—३–९
टपाल-तार		१०२–१४–९
अन्य फुटकर खर्च		१३२—४–०

कॅमेरा परवाना	८५—०-०	
पत्र प्रतिनिधी परवाना	१९०—०—०	
	२७५—०—०	३,१७३—३—०

	आय	व्यय
बाजार समिति		**४४३०—६—०**
स्टॉल किराया	४६१६—८—०	
वेतन मजदुरी		११५—३—९
टपाल-तार		२२—६—९
प्रवास		२५—८—६
छपाई		१५—१—०
फुटकर		७—१४—०
	४६१६—८—०	१८६—२—०

	आय	व्यय
खेती		**६०५—९—३**
माल विक्री	११८५—९—९	
मजदुरी		५१६—१२—९
फुटकर		६३—३—९
	११८५—९—९	५८०—०—६

पाणी समिति		**३,६७७—१४—६**
मजदुरी	१९२७—१२—६	
प्राथमिक खर्च	८१५—१०—६	
सामान में घाटा	४४३—१२—६	
इन्जिन किराया	२०८—०—०	
प्रवास	१२६—९—०	
फुटकर	१५६—२—०	
	३,६७७—१४—६	

स्वच्छता समिति		**१८६२—१५—३**
प्रवास	९७३—१—०	
छपाई	२७०—०—०	
गणवेष	२६५—०—०	
स्वच्छता साधन (झाड़ू वगैरे)	१८९—१—९	
मजदुरी	१३९—६—३	
तार-टपाल	१९—८—६	
फुटकर खर्च	६—१३—९	
	१,८६२—१५—३	

निधि समिति		१२८४–१५–०
प्रवास	८२०–८–९	
छपाई	३०४–१२–०	
टपाल-तार	६४—५–९	
वेतन	७५—०–०	
फुटकर	२०—४–६	
	१,२८४–१५–०	
जनरल स्टोअर्स		१,४६०–१२–९
लेखन साहित्य	७१५—८–९	
अन्य सामान	४२०—१–०	
खादी	१०८—१–०	
वेतन मजदुरी	१६४ · ४–०	
प्रवास	३०—९–६	
फुटकर	२२—४–६	
	१४६०–१२–९	

फुटकर लेन देन

	लेना	देना
म. प्रां. कॉं. कमेटी	६८२—२–०	
श्री. वा. वि. दास्ताने	३३९—५–३	
श्री. आनंदराम बामती	२४–१३–०	
श्री. इच्छाराम बाळू चौधरी	२१२–१५–०	
श्रीरामदास गंभीर वाणी	१५—६–९	
ग्रामउद्योग दुकान भुसावळ	१९९—१–०	
श्री. वि. कृ. साठे		४०—१–०
,, अच्युतराव पटवर्धन		१९—५–०
,, राजमल लखीचंद		४—७–६
,, मगनलाल भिकारीदास		१—०–०
	१,४७३–११–०	६४–१३–६

राष्ट्रसभा ५० वा अधिवेशन

फैजपूर १९३६

स्वागतकारिणी समिति

ता. ३० मई १९३६ से ता. ९ जुलै १९३७ तक का पक्का चिठ्ठा—

जमा		उधार	
श्री. माधव मार्तंड देशपांडे दान	२०,०००—०—०	फुटकर लेना	१,४७३—११—०
फुटकर देना	६४—१३—६	सिलक	४२,२६४—५—०
रिपोर्ट, अन्य खर्च तथा लेने के पेटे		दफ्तर ८१५—४—९	
अनामत	३,०००—०—०	बैंक ४१,४४९—०—३	
आय की अधिकता ता. ९-७-३७			
के आय व्यय पत्रक के अनुसार	२०,६७३—२—६		
	४३,७३८—०—०		४३,७३८—०—०

राष्ट्र सभा के ५० वा अधिवेशन की स्वागत कारिणी समिति का ता. ९ जुलै १९३७ तक उपर बताये हुए चिठ्ठे का मिलान समिति के बहीखाते और आधार पत्रों के साथ मैने करके देख लिया है और उसे बराबर पाया है।

(सही) गो. द. आपटे
अन्वेषक

(सही) ध. ना. चौधरी
मुख्य मन्त्रि

(सही) राजमल लखीचंद
प्रमुख
निधि समिति

(सही) पुनमचंद ओंकारदास
(,,) बा. चिं. लागू
(,,) रा. ग. लाटे
(,,) पुरुषोत्तम कानजी; कोषाध्यक्ष

(सही) देवकीनंदन नारायण
मन्त्रि
निधि समिति

पूना ता. ९।७।१९३७

APPENDIX C.

50th Session, Faizpur

Pt. JAWAHARLAL NEHRU'S

PRESIDENTIAL ADDRESS

COMRADES,

Eight and a half months ago I addressed you from this tribune and now, at your bidding, I am here again. I am grateful to you for this repeated expression of your confidence, deeply sensible of the love and affection that have accompanied it, somewhat overburdened by this position of high honour and authority that you would have me occupy again, and yet I am fearful of this responsibility. Men and women, who have to carry the burden of responsible positions in the world today, have a heavy and unenviable task and many are unable to cope with it. In India that task is as heavy as anywhere else and if the present is full of difficulty, the veil of the future hides perhaps vaster and more intricate problems. Is it surprising then that I accept your gracious gift with hesitation?

Before we consider the problems that face us, we must give thought to our comrades—those who have left us during these past few months and those who languish year after year, often with no end in prospect, in prison and detention camp. Two well-beloved colleagues have gone—Mukhtar Ahmad Ansari and Abbas Tyabji, the bearers of names honoured in Congress history, dear to all of us as friends and comrades, brave and wise counsellors in times of difficulty.

To our comrades in prison or in detention we send greeting. Their travail continues and it grows, and only recently we have heard with horror of the suicide of three detenues who found life intolerable for them in the fair province of Bengal, whose young men and women in such large numbers live in internment without end. We have an analogy elsewhere, in Nazi Germany where concentration camps flourish and suicides are not uncommon.

Soon after the last Congress I had to nominate the Working Committee and I included in this our comrade, Subhas Chandra Bose,

But you know how he was snatched away from us on arrival at Bombay and ever since then he has been kept in internment despite failing health. Our Committee has been deprived of his counsel, and I have missed throughout the year this brave comrade on whom we all counted so much. Helplessly we watch this crushing of our men and women, but this helplessness in the present steels our resolve to end this intolerable condition of our people.

One who was not with us at Lucknow has come back to us after long internment and prison. We offer cordial welcome to Khan Abdul Ghaffar Khan for his own brave self as well as for the sake of the people of the Frontier Province whom he has so effectively and gallantly led in India's struggle for freedom. But though he is with us, he may not, so the orders of the British Government in India run, go back home or enter his province or even the Punjab. And in that province of his the Congress organisation is still illegal and most political activities prevented.

I must also offer on your behalf warm welcome to one who, though young, is an old and well-tried soldier in India's fight for freedom. Comrade M. N. Roy has just come to us after a long and most distressing period in prison, but, though shaken up in body, he comes with fresh mind and heart, eager to take his part in that old struggle that knows no end till it ends in success.

The elements have been unusually cruel to us during these past few months and famine and floods and droughts have afflicted many provinces and brought great suffering to millions of our people. Recently a great cyclone descended on Guntur district in the South causing tremendous damage and rendering large numbers homeless, with all their belongings destroyed. We may not complain of this because the elements are still largely beyond human control. But the wit of man can find a remedy for recurring floods due to known causes, and make provision for the consequences of droughts and the like, and organise adequate relief for the victims of natural catastrophes. But that wit is lacking among those who control our destinies, and our people, always living on the verge of utter destitution, can face no additional shock without going under.

We are all engrossed in India at present in the provincial elections that will take place soon. The Congress has put up over a thousand candidates and this business of election ties us up in many ways, and yet I would ask you, as I did at Lucknow, to take heed of the terrible and fascinating drama of the world. Our destinies are

linked up with it, and our fate, like the fate of every country, will depend on the outcome of the conflicts of rival forces and ideas that are taking place everywhere. Again I would remind you that our problem of national freedom as well as social freedom is but a part of this great world problem, and to understand ourselves we must understand others also.

Even during these last eight months vast changes have come over the international situation, the crisis deepens, the rival forces of progress and reaction come to closer grips with each other, and we go at a terrific pace towards the abyss of war. In Europe fascism has been pursuing its triumphant course, speaking ever in a more strident voice, introducing an open gangsterism in international affairs. Based as it is on hatred and violence and dreams of war, it leads inevitably, unless it is checked in time, to world war. We have seen Abyssinia succumb to it; we see today the horror and tragedy of Spain.

How has this fascism grown so rapidly, so that now it threatens to dominate Europe and the world? To understand this one must seek a clue in British foreign policy. This policy, in spite of its outward variations and frequent hesitations, has been one of consistent support of Nazi Germany. The Anglo-German Naval Treaty threw France into the arms of Italy and led to the rape of Abyssinia. Behind all the talk of sanctions against Italy later on, there was the refusal by the British Government to impose any effective sanction. Even when the United States of America offered to cooperate in imposing the oil sanction, Britain refused, and was content to see the bombing of Ethiopians and the breaking up of the League of Nations system of collective security. True, the British Government always talked in terms of the League and in defence of collective security, but its actions belied its words and were meant to leave the field open to fascist aggression. Nazi Germany took step after step to humiliate the League and upset the European order, and ever the British 'National' Government followed meekly in its trail and gave it its whispered blessing.

Spain came then as an obvious and final test, a democratic Government assailed by a fascist-military rebellion aided by mercenary foreign troops. Here again while fascist Powers helped the rebels, the League Powers proclaimed a futile policy of non-intervention, apparently designed to prevent the Spanish democratic government from combating effectively the rebel menace.

So we find British imperialism inclining more and more towards the fascist Powers, though the language it uses, as is its old habit, is democratic in texture and pious in tone. And because of this contradiction between words and deeds, British prestige has sunk in Europe and the world, and is lower today than it has ever been for many generations.

So in the world today these two great forces strive for mastery—those who labour for democratic and social freedom and those who wish to crush this freedom under imperialism and fascism. In this struggle Britain, though certainly not the mass of the British people, inevitably joins the ranks of reaction. And the struggle today is fiercest and clearest in Spain, and on the outcome of that depends war or peace in the world in the near future, fascist domination or the scorching of fascism and imperialism. That struggle has many lessons for us, and perhaps the most important of these is the failure of the democratic process in resolving basic conflicts and introducing vital changes to bring social and economic conditions in line with world conditions. That failure is not caused by those who desire or work for these changes. They accept the democratic method, but when this method threatens to affect great vested interests and privileged classes, these classes refuse to accept the democratic process and rebel against it. For them democracy means their own domination and the protection of their special interests. When it fails to do this, they have no further use for it and try to break it up. And in their attempt to break it, they do not scruple to use any and every method, to ally themselves with foreign and anti-national forces. Calling themselves nationalists and patriots, they employ mercenary armies of foreigners to kill their own kith and kin and enslave their own people.

In Spain today our battles are being fought and we watch this struggle not merely with the sympathy of friendly outsiders, but with the painful anxiety of those who are themselves involved in it. We have seen our hopes wither and a blank despair has sometimes seized us at this tragic destruction of Spain's manhood and womanhood. But in the darkest moments the flame that symbolizes the hope of Spanish freedom has burnt brightly and proclaimed to the world its eventual triumph. So many have died, men and women, boys and girls, that the Spanish Republic may live and freedom might endure. We see in Spain, as so often elsewhere, the tragic destruction of the walls of the citadel of freedem. How often they have been lost and then retaken, how often destroyed and rebuilt.

I wish, and many of you will wish with me, that we could give some effective assistance to our comrades in Spain, something more than sympathy, however deeply felt. The call for help has come to us from those sorely stricken people and we cannot remain silent to that appeal. And yet I do not know what we can do in our helplessness when we are struggling ourselves against an imperialism that binds and crushes.

So I would like to stress before you, as I did before, this organic connection between world events, this action and interaction between one and the other. Thus we shall understand a little this complicated picture of the world today, a unity in spite of its amazing diversity and conflicts. In Europe, as in the Far East, there is continuous trouble, and everywhere there is ferment. The Arab struggle against British imperialism in Palestine is as much part of this great world conflict as India's struggle for freedom. Democracy and fascism, nationalism and imperialism, socialism and a decaying capitalism, combat each other in the world of ideas, and this conflict develops on the material plane and bayonets and bombs take the place of votes in the struggle for power. Changing conditions in the world demand a new political and economic orientation and if this does not come soon, there is friction and conflict. Gradually this leads to a revolution in the minds of men and this seeks to materialise, and every delay in this change-over leads to further conflict. The existing equilibrium having gone, giving place to no other, there is deterioration, reaction, and disaster. It is this disaster that faces us in the world today and war on a terrible scale is an ever present possibility. Except for the fascist Powers every country and people dreads this war and yet they all prepare for it feverishly, and in doing so they line up on this side or that. The middle groups fade out or, ghost-like, they flit about, unreal, disillusioned, self-tortured, ever-doubting. That has been the fate of the old liberalism everywhere, though in India perhaps those who call themselves Liberals, and others who think in their way, have yet to come out of the fog of complacency that envelops them. But we

"Move with new desires.
For where we used to build and love
Is no man's land, and only ghosts can live
Between two fires."

What are these new desires? The wish to put an end to this mad world system which breeds war and conflict and which crushes millions; to abolish poverty and unemployment and release the energies

of vast numbers of people and utilise them for the progress and betterment of humanity; to build where today we destroy. During the past eight months I have wandered a great deal in this vast land of ours and I have seen again the throbbing agony of India's masses, the call of their eyes for relief from the terrible burdens they carry. That is our problem; all others are secondary and merely lead up to it. To solve that problem we shall have to end the imperialistic control and exploitation of India. But what is the imperialism of today? It is not merely the physical possession of one country by another; its roots lie deeper. Modern imperialism is an outgrowth of capitalism and cannot be separated from it.

It is because of this that we cannot understand our problems without understanding the implications of imperialism and socialism. The disease is deep-seated and requires a radical and revolutionary remedy and that remedy is the socialist structure of society. We do not fight for socialism in India today for we have to go far before we can act in terms of socialism, but socialism comes in here and now to help us to understand our problem and point out the path to its solution, and to tell us the real content of the swaraj to come. With no proper understanding of the problem, our actions are likely to be erratic, purposeless and ineffective.

The Congress stands today for full democracy in India and fights for a democratic State, and not for socialism. It is anti-imperialist and strives for great changes in our political and economic structure. I hope that the logic of events will lead it to socialism for that seems to me the only remedy for India's ills. But the urgent and vital problem for us today is political independence and the establishment of a democratic State. And because of this, the Congress must line up with all the progressive forces of the world and must stand for world peace. Recently there has taken place in Europe a significant development in the peace movement. The World Peace Congress, held at Brussels in September last, brought together numerous mass organisations on a common platform and gave an effective lead for peace. Whether this lead will succeed in averting war, no one can say but all lovers of peace will welcome it and wish it success. Our Congress was ably represented at Brussels by Shri. V. K. Krishna Menon and the report that he has sent us is being placed before you. I trust that the Congress will associate itself fully with the permanent peace organisation that is being built up and assist with all its strength in this great task. In doing so we must make our own position perfectly

clear. For us, and we think for the world, the problem of peace cannot be separated from imperialism and in order to remove the root causes of war, imperialism must go. We believe in the sanctity of treaties but we cannot consider ourselves bound by treaties in the making of which the people of India had no part, unless we accept them in due course. The problem of maintaining peace cannot be isolated by us, in our present condition, from war resistance. The Congress has already declared that we can be no parties to an imperialist war, and we will not allow the exploitation of India's man power and resources for such a war. Any such attempt will be resisted by us.

The League of nation has fallen very low and there are few who take it seriously as an instrument for the preservation of peace. India has no enthusiasm for it whatever and the Indian membership of the League is a farce, for the selection of delegates is made by the British Government. We must work for a real League of Nations, democratically constructed, which would in effect be a League of peoples. If even the present League, ineffective and powerless as it is, can be used in favour of peace, we shall welcome it.

With this international background in view, let us consider our national problems. The Government of India Act of 1935, the new Constitution, stares at us offensively, this new charter of bondage which has been imposed upon us despite our utter rejection of it and we are preparing to fight elections under it. Why we have entered into this election contest and how we propose to follow it up has been fully stated in the Election Manifesto of the All India Congress Committee, and I commend this manifesto for your adoption. We go to the legislatures not to cooperate with the apparatus of British imperialism, but to combat the Act and seek to end it, and to resist in every way British imperialism in its attempt to strengthen its hold on India and its exploitation of the Indian people. That is the basic policy of the Congress and no Congressman, no candidate for election, must forget this. Whatever we do must be within the four corners of this policy. We are not going to the legislatures to pursue the path of constitutionalism or a barren reformism.

There is a certain tendency to compromise over these elections, to seek a majority at any cost. This is a dangerous drift and must be stopped. The elections must be used to rally the masses to the Congress standard, to carry the message of the Congress to the millions of voters and non-voters alike, to press forward the mass struggle. The biggest majority in a legislature will be of little use to us if we have

not got this mass movement behind us, and a majority built on compromises with reactionary groups or individuals will defeat the very purpose of the Congress.

With the effort to fight the Act, and as a corollary to it, we have to stress our positive demand for a Constituent Assembly elected under adult suffrage. That is the very corner-stone of Congress policy today and our election campaign must be based on it. This Assembly must not be conceived as something emanating from the British Government or as a compromise with British imperialism. If it is to have any reality, it must have the will of the people behind it and the organised strength of the masses to support it, and the power to draw up the constitution of a free India. We have to create that mass support for it through these elections and later through our other activities.

The Working Committee has recommended to this Congress that a Convention of all Congress members of all the legislatures, and such other persons as the Committee might wish to add to them, should meet soon after the election to put forward the demand for the Constituent Assembly, and determine how to oppose, by all feasible methods, the introduction of the Federal structure of the Act. Such a Convention, which must include the members of the All India Congress Committee, should help us greatly in focussing our struggle and giving it proper direction in the legislatures and outside. It will prevent the Congress members of the legilatures from developing provincialism and getting entangled in minor provincial matters. It will give them the right perspective and a sense of all India discipline, and it should help greatly in developing mass activities on a large scale. The idea is full of big possibility and I trust that the Congress will approve of it.

Next to this demand for the Constituent Assembly, our most important task will be to oppose the Federal structure of the Act. Utterly bad as the Act is there is nothing so bad in it as this Federation and so we must exert ourselves to the utmost to break this and thus end the Act as a whole. To live not only under British imperialist exploitation but also under Indian feudal control, is something that we are not going to tolerate whatever the consequences. It is an interesting and instructive result of the long period of British rule in India that when, as we are told, it is trying to fade off, it should gather to itself all the reactionary and obscurantist groups in India, and endeavour to hand partial control to the feudal elements.

The development of this federal scheme is worthy of consideration. We are not against the conception of a federation. It is likely that a free India may be a federal India, though in any event there must be a great deal of unitary control. But present federation that is being thrust upon us is a federation in bondage and under the control, politically and socially, of the most backward elements in the country. The present Indian States took shape early in the nineteenth century in the unsettled conditions of early British rule. The treaties with their autocratic rulers, which are held up to us so often now as sacred documents which may not be touched, date from that period.

It is worthwhile comparing the state of Europe then with that of India. In Europe then there were numerous tiny kingdoms and princedoms, kings were autocratic, holy alliances and royal prerogatives flourished. Slavery was legal. During these hundred years and more Europe has changed out of recognition. As a result of numerous revolutions and changes the princedoms have gone and very few kings remain. Slavery has gone. Modern industry has spread and democratic institutions have grown up with an ever-widening franchise. These in their turn have given place in some countries to fascist dictatorships. Backward Russia, with one mighty jump, has established a Soviet Socialist State and an economic order which has resulted in tremendous progress in all directions. The world has gone on changing and hovers on the brink of yet another vast change. But not so the Indian States; they remain static in this ever-changing panorama, staring at us with the eyes of the early nineteenth century. The old treaties are sacrosanct treaties made not with the people or their representatives but with their autocratic rulers.

This is a state of affairs which no nation, no people can tolerate. We cannot recognise these old settlements of more than a hundred years ago as permanent and unchanging. The Indian States will have to fit into the scheme of a free India and their peoples must have, as the Congress has declared, the same personal, civil and democratic liberties as those of the rest of India.

/Till recent years little was heard of the treaties of the States or of paramountcy. The rulers knew their proper places in the imperial scheme of things and the heavy hand of the British Government was always in evidence. But the growth of the national movement in India gave them a fictitious importance, for the British Government began to rely upon them more and more to help it in combating this nationa-

lism. The rulers and their ministers were quick to notice the change in the angle of vision and to profit by it. They tried to play, not without success, the British Government and the Indian people against each other and to gain advantages from both. They have succeeded to a remarkable degree and have gained extraordinary power under the federal scheme. Having preserved themselves as autocratic units, which are wholly outside the control of the rest of India, they have gained power over other parts of India. Today we find them talking as if they were independent and laying down conditions for their adherence to the Federation. There is talk even of the abolition of the viceregal paramountcy, so that these States may remain, alone in the whole world, naked and unchecked autocracies, which cannot be tampered with by any constitutional means. A sinister development is the building up of the armies of some of the bigger States on an efficient basis.

Thus our opposition to the federal part of the Constitution Act is not merely a theoretical one, but a vital matter which affects our freedom struggle and our future destiny. We have got to make it central pivot of our struggle against the Act. We have got to break this Federation.

Our policy is to put an end to the Act and have a clean slate to write afresh. We are told by people who can think only in terms of action taken in the legislatures, that it is not possible to wreck it and there are ample provisions and safeguards to enable the government to carry on despite a hostile majority. We are well aware of these safeguards; they are one of the principle reasons why we reject the Act. We know also that there are second chambers to obstruct us. We can create constitutional crises inside the legislatures, we can have deadlocks, we can obstruct the imperialist machine, but always there is a way out. The Constitution cannot be wrecked by action inside the legislatures only. For that, mass action outside is necessary, and that is why we must always remember that the essence of our freedom struggle lies in mass organization and mass action.

The policy of the Congress in regard to the legislatures is perfectly clear; only in one matter it still remains undecided—the question of acceptance or not of office. Probably the decision of this question will be postponed till after the elections. At Lucknow I ventured to tell you that, in my opinion, acceptance of office was a negation of our policy of rejection of the Act ; it was further a reversal of the policy we had adopted in 1920 and followed since then. Since Lucknow the Congress has further clarified its position in the Election Manifesto and

declared that we are not going to the legislatures to cooperate in any way with the Act but to combat it. That limits the field of our decision in regard to offices, and those who incline to acceptance of them must demonstrate that this is the way to non-cooperate with the Act, and to end it.

It seems to me that the only logical consequence of the Congress policy, as defined in our resolutions and in the Election Manifesto, is to have nothing to do with office and ministry. Any deviation from this would mean a reversal of that policy. It would inevitably mean a kind of partnership with British imperialism in the exploitation of the Indian people, an acquiescence, even though under protest and subject to reservations, in the basic ideas underlying the Act, an association to some extent with British imperialism in the hateful task of the repression of our advanced elements. Office accepted on any other basis is hardly possible, and if it is possible, it will lead almost immediately to deadlock and conflict. That deadlock and impasse does not frighten us ; we welcome it. But then we must think in terms of deadlocks and not in terms of carrying on with the office.

There seems to be a fear that if we do not accept office, others will do so, and they will put obstacles in the way of our freedom movement. But if we are in a majority we can prevent others from misbehaving ; we can even prevent the formation of any ministry. If our majority is a doubtful one then office for us depends on compromises with non-Congress elements, a policy full of danger for our cause, and one which would inevitably lead to our acting in direct opposition to the Congress mandate of rejection of the Act. Whether we are in a majority or in a minority, the real thing will always be the organised mass backing behind us. A majority without that backing can do little in the legislatures, even a militant minority with conscious and organised mass support can make the functioning of the Act very difficult.

We have put the Constituent Assembly in the forefront of our programme, as well as the fight against the federal structure. With what force can we press these two vital points and build up a mass agitation around them if we wobble over the question of office and get entangled in its web ?

We have great tasks ahead, great problems to solve both in India and in the international sphere. Who can face and solve these problems in India but this great organisation of ours, which has through fifty years' effort and sacrifice, established its unchallengeable right to

speak for the millions of India? Has it not become the mirror of their hopes and desires, their urge to freedom, and the strong arm that will wrest this freedom from unwilling and resisting hands? It started in a small way with a gallant band of pioneers, but even then it represented a historic force and it drew to itself the goodwill of the Indian people. From year to year it grew, faced inner conflicts whenever it wanted to advance and was held back by some of its members. But the urge to go ahead was too great, the push from below increased, and though a few left us, unable to adjust themselves to changing conditions, vast numbers of others joined the Congress. It became a great propaganda machine dominating the public platform of India. Bur it was an amorphous mass and its organisational side was weak, and effective action on a large scale was beyond its powers. The coming of Gandhiji brought the peasant masses to the Congress, and the new constitution that was adopted at his instance in Nagpur in 1920 tightened up the organisation, limited the number of delegates according to population, and gave it strength and capacity for joint and effective action. That action followed soon after on a countrywide scale and was repeated in later years. But the very success and prestige of the Congress often drew undesirable elements to its fold and accentuated the defects of the constitution. The organisation was becoming unwieldy and slow of movement and capable of being exploited in local areas by particular groups. Two years ago radical changes were made in the constitution again at Gandhiji's instance. One of these was the fixation of the number of delegates according to membership, a change which has given a greater reality to our elections and strengthened us organisationally. But still our organisational side lags far behind the great prestige of the Congress, and there is a tendency for our committees to function in the air, cut off from the rank and file.

It was partly to remedy this that the Mass Contacts resolution was passed by the Lucknow Congress, but unhappily the Committee that was in charge of this matter has not reported yet. The problem is a wider one than was comprised in that resolution for it includes an overhauling of the Congress constitution with the object of making it a closer knit body, capable of disciplined and effective action. That action to be effective must be mass action, and the essence of the strength of the Congress has been this mass basis and mass response to its calls. But though that mass basis is there, it is not reflected in the organisational side, and hence an inherent weakness in our activities. We have seen the gradual transformation of the Congress from a small upper class body, to one representing the great body of the

lower middle classes, and later the masses of this country. As this drift to the masses continued the political role of the organisation changed and is changing, for this political role is largely determined by the economic roots of the organisation.

We are already and inevitably committed to this mass basis for without it there is no power or strength in us. We have now to bring that into line with the organisation, so as to give our primary members greater powers of initiative and control, and opportunities for day to day activities. We have, in other words, to democratise the Congress still further.

Another aspect of this problem that has been debated during the past year has been the desirability of affiliating other organisations, of peasants, workers and others which also aim at the freedom of the Indian people, and thus to make the Congress the widest possible joint front of all the anti-imperialist forces in the country. As it is, the Congress has an extensive direct membership among these groups; probably 75% of its members come from the peasantry. But, it is argued, that functional representation will give far greater reality to the peasants and workers in the Congress. This proposal has been resisted because of a fear that the Congress might be swamped by new elements, sometimes even politically backward elements. As a matter of fact, although this question is an important one for us, any decision of it will make little difference at present; its chief significance will be as a gesture of goodwill. For there are few well organised workers' or peasants' unions in the country which are likely to profit by Congress affiliation. There is not the least possibility of any swamping, and, in any event, this can easily be avoided. I think that now or later some kind of functional representation in the Congress is inevitable and desirable. It is easy for the Congress to lay down conditions for such affiliation, so as to prevent bogus and mushroom growths or undesirable organisations profiting by it. A limit might also be placed on the number of representatives that such affiliated organisations can send. Some such recommendation, I believe, has been made by the U. P. Provincial Congress Committee.

The real object before us is to build up a powerful joint front of all the anti-imperialist forces in the country. The Congress has indeed been in the past, and is today, such a united popular front, and inevitably the Congress must be the basis and pivot of united action. The active participation of the organised workers and peasants in such a front would add to its strength and must be welcomed. Co-opera-

tion between them and the Congress organisation has been growing and has been a marked feature of the past year. This tendency must be encouraged. The most urgent and vital need of India today is this united national front of all forces and elements that are ranged against imperialism. Within the Congress itself most of these forces are represented, and in spite of their diversity and difference in outlook, they have cooperated and worked together for the common good. That is a healthy sign both of the vitality of our great movement and the unity that binds it together. The basis of it is anti-imperialism and independence. Its immediate demand is for a Constituent Assembly leading to a democratic State where political power has been transferred to the mass of the people. An inevitable consequence of this is the withdrawal of the alien army of occupation.

These are the objectives before us, but we cannot ignore the present day realities and the day to day problems of our people. These ever-present realities are rhe poverty and unemployment of our millions, appalling poverty and an unemployment which has even the middle classes in its grip and grows like a creeping paralysis. The world is full of painful contrasts today, but surely nowhere else are these contrasts so astounding as in India. Imperial Delhi stands, visible symbol of British power, with all its pomp and circumstance and vulgar ostentation and wasteful extravagance; and within a few miles of it are the mud huts of India's starving peasantry, out of whose meagre earnings these great palaces have been built, huge salaries and allowances paid. The ruler of a state flaunts his palaces and his luxury before his wretched and miserable subjects, and talks of his treaties and his inherent right to autocracy. And the new Act and Constitution have come to us to preserve and perpetuate these contrasts, to make India safe for autocracy and imperialist exploitation.

As I write, a great railway strike is in progress. For long the world of railway workers has been in ferment because of retrenchment and reduction in wages and against them is the whole power of the State. Some time ago there was a heroic strike in the Ambernath Match Factory near Bombay, owned by a great foreign trust. But behind that trust and supporting it, we saw the apparatus of Government functioning in the most extraordinary way. The workers in our country have yet to gain elementary rights; they have yet to have an eight-hour day and unemployment insurance and a guaranteed living wage.

But a vaster and more pressing problem is that of the peasantry, for India is essentially a land of the peasants. In recognition of this

fact, and to bring the Congress nearer to the peasant masses, we are meeting here today at the village of Faizpur and not, as of old, in some great city. The Lucknow Congress laid stress on this land problem and called on the Provincial Committees to frame agrarian programmes. This work is still incomplete for the vastness and intricacy of it has demanded full investigation. But the urgency of the problem calls for immediate solution. Demands for radical reforms in the rent and revenue and the abolition of feudal levies have been made from most of the provinces. The crushing burden of debt on the agricultural classes has led to a wide-spread cry for a moratorium and a substantial liquidation of debt. In the Punjab *Karza* (Debt) Committees have grown up to protect the peasantry. All these and many other demands are insistently made and vast gatherings of peasants testify to their inability to carry their present burdens. Yet it is highly doubtful if this problem can be solved piecemeal and without changing completely the land system. That land system cannot endure and an obvious step is to remove the intermediaries between the cultivator and the State. Cooperative or collective farming must follow.

The reform of the land system is tied up with the development of industry, both large-scale and cottage, in order to give work to our scores of millions of unemployed and raise the pitiful standards of our people. That again is connected with so many other things— education, housing, roads and transport, sanitation, medical relief, social services, etc. Industry cannot expand properly because of the economic and financial policy of the Government which, in the name of Imperial Preference, encourages British manufactures in India, and works for the profit of Big Finance in the city of London. The currency ratio continues in spite of persistent Indian protest; gold has been pouring out of India continuously now for five years at a prodigious rate though all India vehemently opposes this outflow. And the new Act tells us that we may do nothing which the Viceroy or the Governor might consider as an unfair discrimination against British trade or commercial interests. The old order may yield place to the new but British interests are safe and secure.

And so one problem runs into another and all together form that vast complex that is India today. Are we going to solve this by petty tinkering and patchwork with all manner of vested interests obstructing us and preventing advance ? Only a great planned system for the whole land and dealing with all these various national activities, coordinating them, making each serve the larger whole and the interests of the mass of our people, only such a planned sysrem with vision and

courage to back it, can find a solution. But planned systems do not flourish under the shadow of monopolies and vested interests and imperialist exploitation. They require the air and soil of political and social freedom.

These are distant goals for us today though the rapid march events may bring us face to face with them sooner than we imagine. The immediate goal—independence—is nearer and more definite, and that is why perhaps we escape, to a large extent, that tragic disillusion and hopelessness which affects so many in Europe.

We are apparently weak, not really so. We grow in strength, the Empire of Britain fades away. Because we are politically and economically crushed, our civil liberties taken away, hundreds of our organisations made illegal, thousands of our young men and women always kept in prison or in detention camp, our movements continually watched by hordes of secret servicemen and informers, our spoken word taken down, lest it offend the law of sedition, because of all this and more we are not weaker but stronger, for all this intense repression is the measure of our growing national strength. War and revolution dominate the world and nations arm desperately. If war comes or other great crisis, India's attitude will make a difference. We hold the keys of success in our hands if we but turn them rightly. And it is the increasing realisation of this that has swept away the defeatist mentality of our people.

Meanwhile the general election claims our attention and absorbs our energy. Here too we find official interference, in spite of denial, and significant attempts to prevent secrecy of voting in the case of illiterate voters. The United Provinces have been singled out for this purpose and the system of coloured boxes, which will be used everywhere else, has been ruled out for the U. P. But we shall win in these elections in spite of all the odds—State pressure, vested interest, money.

That will be but a little step in a long journey, and we shall march on, with danger and distress as companions. We have long had these for our fellow travellers and we have grown used to them. And when we have learnt how to dominate them, we shall also know how to dominate success.

APPENDIX D.

Resolutions passed at the 50th Session of the Congress, held at Faizpur (Maharashtra), December 27 and 28, 1936

1. CONDOLENCE

This Congress expresses its sense of sorrow and loss at the deaths of Dr. M. A. Ansari, Shri Abbas Tyabji, Dr. M. K. Sambasivam, Shri V. O. Chidambaram Pillai, Shri Krishna Kumar Mitra, Dr. B. Subramaniam, Pandit Pyarey Mohan Dattatreya and Shri Wamanrao Naik.

2. WORLD PEACE CONGRESS

The Congress, having considered the report of Shri V. K. Krishna Menon on the World Peace Congress, records its appreciation of the part he took in this Congress as its representative. It supports wholeheartedly the objective of the Peace Congress to ensure world peace by removing the causes of war, and offers its full co-operation to it in this urgent and vital task. The National Congress will willingly associate itself with the organization which the Peace Congress has established in this behalf. The Congress, however, wishes to emphasise that imperialism itself is a continuing cause of war and its elimination is essential in the interests of world peace. The President is authorised and directed to take necessary steps in this behalf.

3. BURMA

The Congress directs the All-India Congress Committee to consider what, if any, changes in the Congress constitution are necessitated by the political separation of Burma from India. The fate of the two countries has been linked together for ages past by strong cultural bonds, and for many years they have struggled together for freedom against British Imperialism. The political separation that is being enforced now against the wishes of a large body of Burmese opinion and in the interests of British Imperialism, cannot weaken the old bonds and must not be permitted to come in the way of our joint struggle. Any decision about the place of Burma in the Congress constitution must be arrived at after consultation with the people of Burma, and for this purpose the Working Committee should arrange for a representative to visit Burma.

In the event of and changes in the constitution in regard to Burma being considered desirable, the All India Congress Committee is authorised to incorporate them in the constitution and to give effect to them.

4. SPAIN

The Congress has followed with the deepest sympathy and anxiety the struggle that is going on in Spain between the people of Spain and a military group aided by foreign mercenary troops and fascist Powers in Europe. The Congress realises that this struggle between democratic progress and fascist reaction is of great consequence to the future of the world and will affect the future of imperialism and India. The Congress has noted without surprise that in this struggle the policy of non-intervention followed by the British Government has been such as to hamper in many ways the Spanish Government and people in fighting the fascist rebels, and has thus in effect aided these rebels who are being openly backed and helped by the fascist Powers.

The Congress, on behalf of the people of India, sends greetings to the Spanish people and the assurance of their solidarity with them in this great struggle for liberty.

5. EXCLUDED AREAS

This Congress is of opinion that the creation of Excluded and Partially Excluded Areas and Chief Commissioners' Provinces, including British Baluchistan, from the 1st January 1937 and covering the area of 207,900 square miles and inhabited by 13 million people is yet another attempt to divide the people of India into different groups with unjustifiable and discriminatory treatment and to obstruct the growth of uniform democratic institution in the country.

This Congress is further of opinion that the separation of these Excluded and Partially Excluded Areas is intended to leave a larger control of disposition and exploitation of the mineral and forest wealth in those areas and keep the inhabitants of those areas apart from the rest of India for their easier exploitation and suppression.

This Congress holds that the same level of democratic and self-governing institutions should be applicable to all parts of India without any distinction.

6. NATURAL CALAMITIES

The Congress has noted with deep sorrow that an unprecedented number of natural calamities has ravaged our country during the past

year and flood and drought and famine and cyclone have brought intense suffering to vast numbers of our people, whom poverty and unemployment have already reduced to such dire straits. The Congress expresses its deep sympathy with the victims of those calamities and its appreciation of the fortitude displayed by the people in facing them.

It congratulates those individuals and non-official agencies who, by their loving service and assistance, have helped to alleviate distress.

The Congress feels that no sufficient effort has been made so far by the Government to institute scientific inquiries into the causes of the floods, which are becoming more frequent and wide-spread, and that it should certainly be possible to control such floods to a large extent, or prevent waters from accumulating, by measures taken in that behalf, especially by an examination of the effect of building numerous railway embankments without a sufficient number of culverts to allow free passage of water.

The Congress is of opinion that the widespread misery caused by the various calamities should be relieved by state action on an adequate scale, in particular, by a total remission of rent and revenue and water and other rates of the current year in the worst affected area ; and a substantial reduction in the partly affected area ; and by a moratorium of arrears of rent, revenue and agriculturists' debts. Interestfree loans and other help, free or at reduced rates, should also be given to enable those who have been rendered destitute, to start life afresh.

7. WAR DANGER

The Congress has drawn repeated attention in the past to the danger of imperialist war and has declared that India can be no party to it. Since the last session of the Congress the cirsis has deepened and fascist aggression has increased, the fascist powers forming alliances and grouping themselves together for war with the intention of dominating Europe and the world and crushing political and social freedom. The Congress is fully conscious of the necessity of facing this world menace in co-operation with the progressive nations and peoples of the world, and especially with those peoples who are dominated over and exploited by imperialism and fascism. In the event of such a world war taking place there is grave danger of Indian man-power and resources being utilised for the purposes of British imperialism, and it is therefore necessary for the Congress to warn the country again against this and prepare it to resist such exploiatation of India and her people. No credits must be voted for such a war and voluntary subscriptions

and war loans must not be supported and all other war preparations resisted.

8. FRONTIER POLICY

In the opinion of the Congress the policy pursued by the Government of India on the North-West Frontier has been a total failure and has caused great injury both to the interests of India and the trans-border tribes. This policy has heen pursued in the interests of imperialism and mostly with the object of justifying the heavy military expenditure in India and of providing training under semi-war conditions for otherwise idle troops maintained for imperial purposes. Any policy that necessitates inhuman and barbarous methods, like bombing from the air, and which leads to frequent military raids across the Forntier is to be condemned. In addition to this the policy has signally failed in establishing peace on the Frontier and has often resulted in making friendly transborder tribes unfriendly and hostile.

Both the foreign and domestic interests of India require peace on the Frontier and friendship with our neighbours. And the Congress believes that these friendly relations and peace can be established without much difficulty if the transborder tribes are treated as friends and good neighbours and are not interfered with, on the pretext of spreading civilization, or by making military roads under the guise of rendering economic assistance, or otherwise. If such a policy is pursued they will become a valuable source of strength and lessen the burden of military expenditure of India. The Congress believes that the charge laid against the Frontier Pathan tribes as being untamed, fierce ,truculent and aggressive is without foundation and appears to be made with the object of justifying unwarranted interference and a heavy permanent military expenditure.

The Congress declares that the people of India desire the friendship of all their neighbours and are willing to co-operate with them in the great tasks which promote peace and human well-beings.

The Congress condemns the last punitive measures in the trans-frontier area which seem to be yet another instance of the futile and dangerous experiments of the Government of India on the North West Frontier which lead only to suffering and leave a trail of ill-will hehind them.

In the opinion of the Congress the right way to deal with the Frontier situation is for an inqu:ry to be made into the economic, political, and military situation with a view to settle finally and peace-

fully the problem of the Frontier in co-operation with the border-tribes.

9. DETENUS

The Congress records its emphatic condemnation of the unjust and inhuman policy of the British Government in India in keeping thousands of Indians in detention for indefinite periods without charge or trial and holds that this policy has been resorted to with the object of paralysing the national movement of freedom. The Congress voices the demand of the Indian people that the persons now in detention without charge or trial be released forthwith and the various orders of restraint withdrawn. The Congress sends its warm greetings and sympathy to the detenus who have been suffering in silence and with brave endurance in the cause of India's freedom.

The Congress has learnt with alarm and concern that three detenus in Bengal have committed suicide within the last four weeks. The Congress considers that the fact that such acts of suicide have taken place is a significant indication that the conditions in which they are kept are intolerable and scandalous. The Congress demands a public enquiry into the causes which led to the said acts of suicide as well as into the conditions in which the detenus are being kept. The Congress sends its condolences to the bereaved families of the three detenus.

The Congress records its condemnation of the action of the Government in preventing any non-official and independent enquiry into the conditions in which the detenus are kept, like the one proposed by the Committee appointed by the Congress Party in Legislative Assembly.

The Congress condemns the revival of the prison in the Andamans which had been abandoned as a result of its condemnation by a committee appointed by the Government. In the opinion of the Congress the conditions prevailing therein, particularly those relating to interviews with prisoners, segregation and lack of facilities for intellectual entertainment of educated political prisoners, are intolerable, and the transportation of political offenders to the Andamans should be discontinued and those already transported should be brought back to India forthwith.

10. INDIANS OVERSEAS

The Congress sends greetings to our fellow-countrymen overseas and its assurance of sympathy and help in their distressfull condition

and in the continuing deterioration in their status in the territories in which they have settled. The Congress is ready and willing to take all action within its power to ameliorate their condition, but desires to point out that a radical amelioration in their status must ultimately depend on the attainment by India of independence and the power effectively to protect her nationals abroad.

11. COLLIERY DISASTERS

The Congress notes with sorrow and alarm the frequent occurrence of accidents in the collieries of Bengal and Bihar, resulting in every case in the loss of numerous human lives, widespread misery among survivors and irreparable waste of a great deal of India's mineral wealth. In the opinion of the Congress such accidents are preventable and demonstrate the inefficiency of the State, and utter incompetence of the owners and managers of these collieries and their indifference to human suffering. It is necessary that effective measures be immediately undertaken by further legislation and the stricter and more vigilant enforcement of rules and regulations to prevent such accidents. The owners of collieries should be made liable to exemplary damages to be paid to sufferers from such accidents and their heirs.

12. B. N. RAILWAY STRIKE

The Railway workers on the State-owned Railways, and their organisations supported by the public have been demanding a court of inquiry into the question of Railway retenchment in general and the question of the reduction of the pay of the lower grades of Railway service in particular. The Government and the Railway Board have persistently ignored this just and legitimate demand. This Congress of opinion that even now if such a court of inquiry is instituted the present strike on the B. N. Ry. can be amicably settled.

This Congress congratulates the workers on the B. N. Ry. on their solidarity and the brave stand they have made against the repeated invasions on their rights. The Congress hopes that the public will extend to the strikers their full support and sympathy.

13. THE CONGRESS CONSTITUTION AND MASS CONTACTS

The Congress wishes to stress again the desirability of increasing the association of the masses with the Congress organization and of giving opportunities to the primary members to initiate and consider Congress policies and programme. With a view to bring this about, a

Committee consisting of the President, Shri Rajendra Prasad, Shri Jairamdas Doulatram, Shri Jayaprakash Narayan, and the General Secretary is appointed, with the General Secretary as convener, to consider the introduction of suitable changes in the constitution, and to report to the A. I. C. C. by the 30th April 1937. This Committee will consider, inter alia, the report of the Mass Contact Commitee of the Lucknow Congress.

The Congress is of opinion that, even pending such reorganization, Provincial Congress Committees should organise their provinces on the following basis :—

1. Primary committees should, as far as possible, be established in villages and in mohallas or wards of towns.

2. Members of primary committees should meet together at least twice a year to review their own work, consider local problems and grievances and further to consider the policy and progrmme before the Congress, and send their report and recommendations to their higher committees. A specified number of members of primary committees should further have the right to requisition a meeting of the primary committee to consider a specific question.

3. The subscription of four annas per annum may be collected locally in kind.

In order to give effect to the above directions and further to make the Congress organization more efficient and more responsive to the needs and disires of the masses, the congress directs the Working Committee to appoint an origanising secretary, and each Provincial Congress Committee also to appoint such organising secretaries. The Congress trusts that Congressmen in general will co-operate fully in this task of bringing our national organization in close touch with the daily lives and struggle of the people.

14. AUTHORITY TO ALL INDIA CONGRESS COMMITTEE

The A. I. C. C. is authorised, if it so chooses, to make changes in the Congress constitution to enable the next session of the Congress to be held in a month other than December.

15. SUPRESSION OF CIVIL LIBERTIES

The Congress again draws attention to and condemns the suppression of civil liberties in India, which continues intensively and prevents normal public life, interferes even with personal liberties, and crushes the present generation in India. Hundreds of Congress Com-

mittees continue to be banned, as also labour and peasant unions and other organisations; the Ordinance laws function in addition to the wide-spread and punitive use of the Penal Code and the Code of Criminal Procedure to suppress public activities and even the expression of opinion; the press laws and censorship muzzle the newspapers; books and periodicals are banned or stopped under the Sea Customs Act; free movements are restricted by externment and internment; concentration camps of detenus detained without trial continue; the Criminal Tribes Act is a menace to peaceful citizens, and further, this Act as well as the Foreigners' Act are applied to political workers; passports are not issued to Indians for the purpose of going abroad, and many Indians in foreign countries are not allowed to return home and have to live in exile. In Bengal and the N. W. Frontier Province additional restrictions, put an intolerable burden on public work and private activities.

The Congress further deeply regrets to note that many of these, and in some cases additional disabilities and suppression of civil liberties prevail in the Indian states.

The Congress stands for full personal, civil and democratic liberties in the whole of India including the States, and will continue to struggle for the establishment of such liberties. But the Congress realises that political freedom is essential for this purpose and the nation's energies must therefore be directed to the attainment of independence.

16. ELECTIONS & CONSTITUENT ASSMBLY.

This Congress reiterates its entire rejection of the Government of India Act of 1935 and the constitution that has been imposed on India against the declared will of the people of the country. In the opinion of the Congress any co-operation with this constitution is a betrayal of India's struggle for freedom and a strengthning of the hold of British Imperialism and a further exploitation of the Indian masses who have already been reduced to direst poverty under imperialist domination. The Congress therefore repeats its resolve not to submit to this constitution or to cooperate with it, but to combat it, both inside and outside the legislatures, so as to end it. The Congress does not and will not recognise the right of any external power or authority to dictate the political and economic structure of India, and every such attempt will be met by organised and uncompromising opposition of the Indian people. The Indian people can only recognise a constitutional structure which has been framed by them and which is based on the inde-

pendence of India as a nation and which allows them full scope for development according to their needs and desires.

The Congress stands for a genuine democratic State in India where political power has been transferred to the people as a whole and the Government is under their effective control. Such a State can only come into existence through a Constituent Assembly, elected by adult suffrage, and having the power to determine finally the Constitution of the country. To this end the Congress works in the country and organizes the masses, and this objective must ever be kept in view by the representatives of the Congress in the legislatures.

The Congress endorses the Election Manifesto of the A. I. C. C. and calls upon all candidates, standing on its behalf, to carry on their election campaign strictly on its basis and, after election, to conduct their work in the legislatures in accordance with it. Congress members of the legislatures should take the earliest opportunity to put forward in the new Assemblies the demand for a Constituent Assembly, elected by adult suffrage, and this demand should be supported by a mass agitation outside to enforce the right of the Indian people to self-determination.

The question of acceptance or non-acceptance of office by Congress members elected to the legislatures under the new constitution will be decided by the A. I. C. C. as soon after the provincial assembly elections as is practicable. Immediately after the elections the various Provincial Congress Committees will take steps to consult their district and other local Committees and their own recommendations on this subject, so that the A. I. C. C. may be assisted in deciding this issue by the opinion of the mass of Congressmen and the country.

17. CONVENTION

This Congress resolves that after the elections to the provincial legislatures a convention shall be held consisting of Congress members of the various provincial and central legislatures, the members of the All India Congress Committee, and such other persons as the Working Committee might decide upon. This convention shall put the demand for the Constituent Assembly in the forefront, shall determine all feasible methods for ending the constitution in the provinces and for opposing the introduction of the Federal Structure of the new Act, and will consider what other steps should be taken in the legislatures to give effect to the policy laid down in the Congress Election Manifesto, Congress resolutions, and the decisions of the All India Congress Committee.

The Working Committee shall take all necessary steps for the calling of this convention and shall lay down the procedure governing it.

18. APPEAL TO VOTERS

The Congress invites the attention of the nation to the general election that will take place soon in all the provinces, and in which over one thousand Congress candidates have been put up to uphold Congress principles and programme in accordance with the policy laid down in the election manifesto. In this contest the Congress has to face the opposition of reactionary and imperialistic forces and groups entrenched in places of power and possessed of vast material resources. The Congress appeals to the millions of voters, men and women, to vote for the candidates standing in its name and for the Independence of India, and trusts that they will stand for this great cause in the elections and in the greater struggle to follow.

19. AGRARIAN PROGRAMME

The Congress, at its last session, being fully conscious of the fact that the most important and urgent problem of the country is the appalling poverty, unemployment and indebtedness of the peasantry called upon the Provincial Congress Committees to make recommendations to enable the All India Congress Committee to draw up an All India Agrarian Programme. Many P. C. Cs have not yet submitted their recommendations for such a programme. The Congress regrets this delay but realises that the subject is a vast and intricate one, requiring close study and investigation. It trusts that such P. C. Cs as have not reported so far will take early steps to send in their recommendations.

The Congress is convinced that the final solution of this problem involves the removal of British Imperialistic exploitation and a radical change in the antiquated and repressive land tenure and revenue systems. It feels, however, that the deepening crisis has made the burden on the peasantry an intolearable one and immediate relief is urgently called for. Pending the framing of an all India agrarian programme, therefore, the following steps are necessary.

1. Rent and revenue should be readjusted having regard to present conditions and there should be substantial reduction in both.

2. Uneconomic holdings should be exempted from rent or land tax.

3. Agricultural incomes should be assessed to income tax like all other incomes, on a progressive scale, subject to a prescribed minimum.

4. Canal and other irrigation rates should be substantially lowered.

5. All feudal dues and levies and forced labour should be abolished; and demands other than rent should be made illegal.

6. Fixity of tenure with heritable rights along with the right to build houses and plant trees should be provided for all tenants.

7. An effort should be made to introduce co-operative farming.

8. The crushing burden of rural debt should be removed. Special tribunals should be appointed to inquire into this and all debts, which are unconscionable or beyond the capacity of peasants to pay, should be liquidated. Meanwhile a moratorium should be declared and steps should be taken to provide cheap credit facilities.

9. Arrears of rent for previous years should generally be wiped out.

10. Common pasture lands should be provided, and the rights of the people in tanks, wells, ponds, forests and the like recognised, and no encroachment on these rights should be permitted.

11. Arrears of rents should be recoverable in the same manner as civil debts and not by ejectment.

12. There should be statutory provision for securing a living wage and suitable working conditions for agricultural labourers.

13. Peasant unions should be recognised.

20. NON-PARTICIPATION IN THE CORONATION AND OTHER IMPERIALIST FUNCTIONS

The Congress, pledged as it is to the independence of India and the elimination of all imperialist control and exploitation of the Indian people, has for many years consistently followed a policy of not participating in any function or activity which is meant to, or which tends to strengthen the hold of British Imperialism or add to its prestige. This policy must be adhered to by all Congressmen. In particular the Congress wishes to declare that Congressmen cannot participate in any way in any celebrations or functions that might be held in India in connection with the new King's coronation and trusts that the nation will abstain from participation in all such functions. The Congress

however, desires to make it clear that this is in no way intended to express any ill-will or discourtesy to the King's person.

21. HARTAL ON APRIL 1, 1937

In order to demonstrate effectively the will of the Indian people to resist the imposition of the unwanted Constitution and as an earnest of their determination to launch a powerful mass-movement for its destruction, the Congress issues a call for a nation-wide hartal or general strike on April 1, the day on which the New Constitution is to be inaugurated.

22. NEXT CONGRESS

Resolved that the next Session of the Congress be held in Gujerat.

टिळकनगर
राष्ट्रीय सभा ५० वे अधिवेशन
फैजपूर

TILAK-NAGAR
50TH CONGRESS SESSION
FAIZPUR